ISSN : 2348-2656

पूसा सुरभि

बाईसवां अंक

अक्टूबर, 2023 - मार्च, 2024

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान,
नई दिल्ली-110012

ISSN : 2348-2656

बाईसवां अंक

पूसा सुरभि

(अक्टूबर, 2023 - मार्च, 2024)

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
नई दिल्ली-110012

पूसा सुरभि
अक्टूबर, 2023 - मार्च, 2024

संरक्षक एवं अध्यक्ष
डॉ. अशोक कुमार सिंह
निदेशक

सह-अध्यक्ष
डॉ. विश्वनाथन चिन्नुसामी
संयुक्त निदेशक (अनुसंधान)

संपादक मंडल
डॉ. दिनेश कुमार, प्रधान वैज्ञानिक, सस्यविज्ञान संभाग
डॉ. राधा मोहन शर्मा, प्रधान वैज्ञानिक, फल एवं औद्यानिकी प्रौद्योगिकी संभाग
डॉ. ज्ञान प्रकाश मिश्रा, प्रधान वैज्ञानिक, आनुवंशिकी संभाग
डॉ. नफीस अहमद, प्रधान वैज्ञानिक, कैटेट
डॉ. राकेश पांडे, प्रधान वैज्ञानिक, पादप कार्यिकी संभाग
श्री राजेन्द्र शर्मा, मुख्य तकनीकी अधिकारी, कृषि ज्ञान प्रबंधन इकाई
सुश्री कृति शर्मा, तकनीकी सहायक हिंदी अनुवादक (टी-3)

संपर्क सूत्र
हिंदी अनुभाग
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली - 110 012
दूरभाष: 011-25843588, (एक्सटेंशन नं. 4231/4235)
ई-मेलः hindicell@iari.res.in, hindicelliari@gmail.com

ISSN - 2348-2656

आवश्यक सूचना
इस अंक में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों/आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है

मुद्रण: जुलाई 2024
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली के लिए हिंदी अनुभाग द्वारा प्रकाशित एवं
मै. एम एस प्रिंटर्स, सी-108/1 बैक साइड नारायणा इंडस्ट्रीयल एरिया, फेस-1, नई दिल्ली - 110 028
द्वारा मुद्रित। फोनः 7838075335, ईमेलः msprinter1991@gmail.com

आमुख

देश में फसलोत्पादन प्राचीन काल से होता आ रहा है। फसलोत्पादन का देश की अर्थव्यवस्था में विशेष योगदान रहा है। कुछ दशक पहले कृषि व्यवसाय जीवन का केवल एक साधन मात्र ही समझा जाता था, परंतु आजकल की बदलती हुई परिस्थितियों, बढ़ती जनसंख्या, जलवायु परिवर्तन, खाद्य पदार्थों की बढ़ती कीमतों एवं वैश्वीकरण के कारण कृषि भी एक औद्योगिक व्यवसाय का रूप धारण कर चुकी है। आजकल किसान फसलोत्पादन केवल अपने और अपने परिवार के भोजन, कपड़ा और मकान आदि की मूलभूत आवश्यकता-पूर्ति के लिए ही नहीं करता, बल्कि उसे एक आर्थिक व्यवसाय के रूप में भी करता है। अत: कृषि उत्पादन से सापेक्षिक लाभ सुनिश्चित करना नितांत आवश्यक है।

जलवायु परिवर्तन कृषि उत्पादन के लिए एक गंभीर चुनौती के रूप में उभरकर सामने आ रहा है। जलवायु परिवर्तन से फसलोत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। साथ ही भूमि की उपजाऊ शक्ति भी उतरोत्तर घटती जा रही है। कुल मिलाकर कृषि आय बढ़ाने के लिए हमें वैज्ञानिक आधार पर कुशल फसल प्रबंधन करना होगा। फसलोत्पादन को अधिकाधिक लाभकारी बनाने के लिए यह आवश्यक है कि उत्पादन के सीमित साधनों–भूमि, श्रम, बीज, खाद, उर्वरक, रसायनों, सिंचाई और यंत्र आदि का उपयोग अधिक दक्षता के साथ किया जाए। साथ ही इस प्रकार की विधियों एवं तकनीकियों का प्रयोग किया जाए जो पर्यावरण सुरक्षा एवं मृदा उर्वरता को प्रभावित न करें। सतत फसलोत्पादन के लिए मृदा की उर्वरता को लगातार बनाए रखना भी परम आवश्यक होता है।

मृदा की उर्वरता सीधे तौर पर उनमें मौजूद जैव पदार्थ पर निर्भर करती है। यदि अन्य कारक स्थिर हो तो जैव पदार्थ की मात्रा घटने से उसकी उर्वरता घटती है और बढ़ाने से बढ़ती है। मृदा जांच के वर्तमान आंकड़े दर्शाते हैं कि अधिकतर भारतीय मृदाओं में जैव कार्बन का स्तर काफी नीचे आ चुका है। मृदा उर्वरता एवं उत्पादकता में वृद्धि लाने के लिए उसमें जैव पदार्थ का पर्याप्त स्तर बनाए रखना नितांत आवश्यक है। भारतीय मानकों के अनुसार मृदा में कम से कम 0.75% जैव कार्बन अथवा 1.30% जैव पदार्थ होना चाहिए। मृदा में जैव पदार्थ की उचित मात्रा बनाए रखने के लिए प्रमुख उपाय हैं- मृदा कटाव को रोकना, कम जुताई और संरक्षण कृषि को अपनाना, संतुलित और समेकित पोषक तत्व प्रबंधन, फसल अवशेषों का कुशल प्रबंधन, फसल चक्र एवं विविधीकरण, दक्ष सिंचाई प्रबंधन और कीटनाशकों एवं रसायनों का नियंत्रित प्रयोग आदि।

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान राजभाषा हिंदी के माध्यम से किसान व जन सामान्य को कृषि संबंधी जानकारियां लगातार उपलब्ध करवा रहा है। इसी क्रम में संस्थान की गृह पत्रिका "पूसा सुरभि" का बाईसवां अंक आपके सम्मुख है। मैं पत्रिका के इस सफल प्रकाशन के लिए डॉ. विश्वनाथन चिन्नुसामी, संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) और हिंदी अनुभाग को बधाई देता हूं, जिनके अथक प्रयासों से इसको मूर्तरूप प्रदान किया गया है। इस पत्रिका को और अधिक आकर्षक बनाने के लिए संपादन मंडल के सभी सदस्यों को भी बधाई देता हूं। साथ ही इस अंक में सम्मिलित लेखों के लेखकों के प्रति भी आभार व्यक्त करता हूं। आशा है कि यह प्रकाशन सर्वोपयोगी साबित होगा।

(अशोक कुमार सिंह)
निदेशक

प्राक्कथन

किसानों की उत्पादकता एवं आय बढ़ाने के लिए कई मददकारी घटक हैं, जैसे कि - उन्नत बीज और किस्में, जल प्रबंधन, मृदा पोषण प्रबंधन, कीट एवं रोग नियंत्रण, यंत्रीकरण, भंडारण, फसल प्रसंस्करण वित्तीय सहायता, बीमा, किसान समूह इत्यादि। लेकिन इन सभी मददकारी घटकों के बावजूद कृषि एक बहुत ही गतिशील, अस्थिर और जोखिमों से भरा उद्यम है। किसान दिन-प्रतिदिन कई प्रकार के जोखिमों से गुजरता है। इसलिए कृषि विषयों से संबंधित नवीनतम जानकारी और प्रशिक्षण किसानों तक समय पर पहुंचना बहुत जरूरी है। इस दिशा में विभिन्न भाषाओं की कृषि पत्रिकाओं का बहुत योगदान है। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान की गृह पत्रिका 'पूसा सुरभि' इस महत्वपूर्ण कार्य में सतत प्रयत्नशील है। पूसा सुरभि के इस बाईसवें अंक में सबसे पहले अध्याय में हम किसानों के मसीहा, भारत रत्न – डॉ. एम. एस. स्वामीनाथन जी को नमन करते हैं। उनके भागीरथ प्रयास के कारण ही आज भारत अन्न उत्पादन में आत्मनिर्भर है और सम्मान के साथ विश्व में खड़ा है। इस अंक में विभिन्न फसलों के बारे में उत्तम एवं आधुनिक कृषि जानकारी दी गई है जैसे कि- बाजरा, रागी, सोयाबीन, मूंग तथा अन्य दलहनी फसलें। हमारे पोषण में सहायक फल एवं सब्जियां जैसे कि-खुबानी, किन्नू, कमलम, गोभी वर्गीय सब्जियां आदि की जानकारी साझा की गई है। कमलम अर्थात ड्रेगन फ्रूट भी एक उभरती हुई लाभकारी फसल है। नवीनतम फसल प्रबंधन के विषय भी इस अंक में सम्मिलित हैं, जैसे कि - स्मार्ट कृषि, समेकित फसल प्रणाली, सस्य तकनीकें, फाइटोरेमेडिएशन, वर्चुअल वाटर एवं जड़ गांठ सूत्रकृमी प्रबंधन आदि। साथ ही श्री चिराग जैन एवं श्री बालेन्दु शर्मा दाधीच के लेख भी इस अंक में शामिल किए गए हैं।

पोषण सुरक्षा के महत्व को समझते हुए खाद्य संरक्षण एवं मोटे अनाजों के विभिन्न व्यंजनों की जानकारी भी इस अंक में दी गई है। साथ ही इस अंक में संस्थान में राजभाषा से संबंधित कार्यान्वयन एवं स्वरचित कविताएं भी शामिल हैं। आशा है कि पूसा सुरभि के इस बाईसवें अंक में प्रकाशित लेखों से कृषि संबंधी महत्वपूर्ण जानकारी का प्रसार होगा। मैं इस प्रकाशन में तत्पर सभी लेखकों, संपादन मंडल एवं हिंदी अनुभाग के सदस्यों का हार्दिक धन्यवाद करता हूं। जय हिन्द।

विश्वनाथन

(विश्वनाथन चिन्नुसामी)
संयुक्त निदेशक (अनुसंधान)

संपादकीय

राष्ट्र की अवधारणा में तीन तत्व अत्यंत महत्वपूर्ण हैं- भाषा, संस्कृति एवं देश की भौगोलिक परिसीमा अर्थात मातृभूमि। वस्तुत: भाषा ही संस्कृति का आधार है। भाषा में मानव को बांधने की अपूर्व शक्ति है। संस्कृत साहित्य में भाषा की इस शक्ति के संबंध में कहा गया है कि शब्देष्वाश्रिता शक्ति: विश्वस्यास्य निबंधिनी, अर्थात शब्द शक्ति (भषिक शक्ति) ही संपूर्ण विश्व को बांधने वाली है। विचार-विनिमय मानव एकता का सबल सूत्र है। भाषा का मूल आधार भाव संप्रेषण है। भाषा भावों, विचारों की अभिव्यक्ति अथवा भाव संप्रेषण का सर्वसुलभ व सशक्त साधन है, जिससे ही सभी सामाजिक कार्य-व्यापार निष्पादित किए जाते हैं। विचारों की एकता राष्ट्र के नागरिक की सबसे बड़ी एकता होती है। भाषा मानव समाज की अप्रतिम उपलब्धि है। तात्विकरूप से भाषा ध्वनि प्रतीकों की एक व्यवस्था है जिसके माध्यम से मानव समूह विचार-विनिमय करता है। इन्हीं ध्वनि-प्रतीकों या शब्दों के भाव, शब्द या भाषा द्वारा ही मानव समाज में प्रचलित होते हैं। शब्द की इसी महत्ता के कारण सर्वम शब्देन भासते तथा शब्दब्रह्म की परिकल्पना साहित्य जगत में प्रचलित है। यदि शब्दरूपी योति न होती, तो यह संपूर्ण जगत अंधकार में ही रहता अर्थात अव्यक्त ही रह जाता। वस्तुत: भाषा ही ज्ञान का सर्वसुलभ माध्यम है। इतना ही नहीं, भाषा ही किसी देश की सच्ची पहचान, उस देश की संस्कृति की संवाहिका होती है। किसी भी राष्ट्र की वैचारिक एवं सामाजिक एकता का आधार भी भाषा ही है।

हिंदी हज़ार वर्षों से हमारी सांस्कृतिक विरासत एवं साहित्य की भाषा के साथ-साथ जनता की संपर्क भाषा के रूप में प्रचलित रही है। संस्कृत, पालि, प्राकृत तथा अन्य अनेक बोलियों को इसने आत्मसात किया है। आज वेद, उपनिषद्, स्मृतियों, गीता, रामायण, महाभारत की टीकाएं एवं भाष्य हिंदी में उपलब्ध हैं। ज्ञान का अक्षय एवं अपार कोश जो संस्कृत में था वह आज हिंदी के भक्तिकाल के कवियों जैसे कि सूर, तुलसी, मीरा, कबीर, रहीम तथा संत समाज ने भारतीय संस्कृति के ज्ञान संपदा को हिंदी में आपूरित कर दिया। हिंदी साहित्य के इतिहास के अध्ययन से यह बात सिद्ध है कि सिद्धों, नाथों, संतों तथा अनेक पंथों के आचार्यों ने इसे अपने ज्ञान,अध्यात्म तथा उपदेश के प्रचार-प्रसार का माध्यम बनाया। अमीर खुसरो, मलिक मुहम्मद जाएसी, रहीम, रसखान आदि सूफी संतों तथा कवियों ने हिंदी में काव्य रचनाएं की। स्वयं हमारे माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी ने अमेरिका में जाकर मातृभाषा में भाषण दिया था, जो हमारे लिए गर्व की बात है।

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली का कृषि शोध एवं तकनीकियों के विकास में अतुलनीय योगदान रहा है। साथ ही इन तकनीकियों को परम लाभार्थी, यानि किसानों तक किस तरह पहुंचाया जाए, समय-समय पर अलग-अलग माध्यमों द्वारा जैसे साप्ताहिक कार्यक्रम पूसा समाचार द्वारा अलग भाषाओं में वार्ता का प्रसारण, राष्ट्रीय टेलीविज़न चैनल दिल्ली दूरदर्शन कृषि व आकाशवाणी केंद्र से कृषि वार्ताओं का प्रसारण, अख़बारों आदि के सहायता से मौसम के अनुसार अनुकरणीय लेखों का लेखन आदि द्वारा, संस्थान के वैज्ञानिक तकनीकियों के प्रचार-प्रसार पर दिन रात कार्य करते हैं। इसी दिशा में हमारे संस्थान के निदेशक, डॉ. अशोक कुमार सिंह व संयुक्त निदेशक (अनुसंधान), डॉ. विश्वनाथन चिन्नुसामी के दिशा निर्देशन में "पूसा सुरभि" का यह बाईसवां अंक प्रकाशित किया जा रहा है, जिसमें विभिन्न संस्थानों के वैज्ञानिक/लेखकों ने अपना सराहनीय योगदान दिया है। हम आशा करते हैं कि "पूसा सुरभि" का यह अंक कृषि से जुड़े सभी हित धारकों के ज्ञान एवं आय बढ़ाने में सहायक सिद्ध होगा। हम संस्थान के निदेशक व संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) के मार्गदर्शन के लिए हृदय से धन्यवाद करते हैं। हम इस अंक के लिए अपने बहुमूल्य लेख उपलब्ध करवाने वाले सभी लेखकों के प्रति आभार व्यक्त करते हैं। इसके अतिरिक्त हम संपादक मंडल के सभी सदस्यों, हिंदी अनुभाग के संविदा कर्मचारी, श्री अजय कुमार एवं अन्य प्रत्यक्ष तथा परोक्ष रूप से सहयोग देने के लिए सभी का धन्यवाद करते हैं।

संपादक मंडल

विषय सूची

आमुख (iii)

प्राक्कथन (v)

संपादकीय (vii)

तकनीकी खंड...

1. माटी के लाल : भारत रत्न प्रो. एम.एस. स्वामीनाथन 1
   - नीरज कुमार, सी. भारद्वाज, अमित कुमार गोस्वामी एवं आर.एम. शर्मा
2. समेकित कृषि प्रणाली द्वारा आत्मनिर्भर भारत 5
   - यू.के.बेहरा, पी.के.साहू एवं रणबीर सिंह
3. रागी की खेती : खाद्य सुरक्षा के लिए एक सतत समाधान 12
   - हरि सिंह मीना, विनिता मीना, दलवीर सिंह, मुकेश कुमार मीना, शैलेन्द्र कुमार झा एवं लक्ष्मी एस
4. सोयाबीन में बीज उत्पादन और कटाई उपरांत की तकनीकें 15
   - मनीषा सैनी, अक्षय तालुकदार, अंबिका राजेंद्रन एवं एस. के. लाल
5. मूंगबीन की नवीनतम किस्में 19
   - सोमा गुप्ता, हर्ष कुमार दीक्षित, ज्ञान प्रकाश मिश्रा, मुरलीधर अस्की एवं धर्मेंद्र सिंह
6. सस्य तकनीकियों द्वारा फसल जैवसंवर्द्धन 27
   - शिवाधार मिश्रा, रणबीर सिंह एवं ज्ञान प्रकाश मिश्रा
7. ख़रीफ़ ऋतु में दलहनी फसल से अधिक उपज और लाभ कैसे प्राप्त करें? 32
   - रमनजीत कौर, समरथ लाल मीना, शीतल कुमार एवं सुनील कुमार
8. सोयाबीन फस्लोत्पादन तकनीक 43
   - धर्मपाल सिंह, अतुल कुमार, मोनिका ए. जोशी, ज्ञान प्रकाश मिश्रा एवं रविश चौधरी
9. ड्रिप सिंचाई तकनीक ने किया कमाल 45
   - नरेन्द्र मोहन सिंह, अलका सिंह, हरबीर सिंह, नित्यश्री एम.एल., कुन्दन कुमार, पवन कुमार मलिक एवं सागर सूद
10. खुबानी की खेती के लिए सफल दिशा-निर्देश 48
    - पूनम मौर्या, मधुबाला ठाकरे, शिखा जैन एवं कृपा शंकर
11. उत्तर-पश्चिमी हिमालयन पर्वतीय क्षेत्रों में गोभी वर्गीय सब्जियों की बेमौसमी खेती : आय का एक बेहतर वैकल्पिक स्रोत 51
    - सुनील दत्त, चन्द्र प्रकाश, संदीप कुमार, यामिनी ठाकुर एवं निशा ठाकुर
12. पोषक तत्वों के प्रबंधन द्वारा बाजरे की गुणवत्ता एवं उत्पादकता में सुधार 54
    - विनोद कुमार शर्मा, इंदु चोपड़ा, मन्दिरा बर्मन, शिल्पी वर्मा, देबरूप दास, नरेश कुमार एवं रीना चौहान
13. किन्नू बागवान स्थापना एवं प्रबंधन 58
    - रवि कुमार मीणा एवं बी.एस. मीणा
14. तुड़ाई पूर्व नींबू वर्गीय फलों का गिरना : कारण एवं प्रबंधन 63
    - नताशा गुरुंग, सुजीत सरकार, बिजॉय सिंह, चंदन कुमार, साजिद अली, नेशन चामलिंग एवं कृति शर्मा

विविधा...

1. बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग - परिचय एवं उपलब्धियां 69
   - ज्ञान प्रकाश मिश्रा, सुदीप्ता बासु, मोनिका जोशी, संदीप कुमार लाल, संगीता यादव एवं अतुल कुमार
2. फाइटोरेमेडिएशन प्रक्रियाओं द्वारा मिट्टी में भारी धातु संदूषण में कमी 81
   - प्रीतम चनक, मोनिका कुंडू, शिप्रा, अनंता वशिष्ठ, प्रमीला कृष्णन एवं सुभाष नटराज पिल्लै
3. आभासी जल (वर्चुवल वाटर- Virtual Water) परिदृश्य 85
   - अंचल दास, शिवाधार मिश्रा, रणबीर सिंह एवं बिपिन कुमार
4. स्मार्ट कृषि : आधुनिक कृषि का नया आयाम 89
   - संजय सिंह राठौर, कपिला शेखावत एवं रणबीर सिंह
5. जड़-गांठ सूत्रकृमि, मैलोइडोगाइन एंटरोलोबी : अमरूद की खेती में उभरती अत्यंत गंभीर समस्या 94
   - राशिद परवेज़ एवं पंकज
6. भारत में पोषण सुरक्षा के लिए दलहन क्रांति को बनाए रखने की रणनीतियां 97
   - मुरलीधर एस अस्की, ज्ञान प्रकाश मिश्रा, प्राची एस यादव, सोमा गुप्ता एवं हर्ष कुमार दीक्षित
7. क्लाइमेट स्मार्ट कृषि की महत्वपूर्ण आधार : अर्बुस्कुलर माइकोरिज़ल कवक 101
   - सीमा सांगवान, राम स्वरूप बाना, गरिमा सक्सेना एवं प्रकृति शर्मा
8. विज्ञान, प्रौद्योगिकी, इंजीनियरिंग और गणित में अग्रणी महिलाओं की एक उल्लेखनीय यात्रा 105
   - बी. सुनीता, निवेदिता एवं प्राची यादव
9. खाद्य पदार्थों के संस्करण से पोषण लाभ 110
   - बृजेश लेखक, प्राची त्यागी, आरती कुमारी, विनुता टी एवं अरुणा त्यागी
10. श्री अन्न (मिलेट्स): उत्तम खाद्य (सुपरफूड) 114
    - मौहम्मद हसनैन, श्रीपति द्विवेदी, संदीप कुमार, राघवेंद्र सिंह, विनोद कुमार सिंह एवं अवनीश कुमार
11. कमलम : भारत की एक उभरती हुई फल फसल 117
    - धुमेशकुमार चावड़ा, निमिषा शर्मा, राधा मोहन शर्मा, अनिल कुमार दुबे, मुकेश शिवरान एवं विट्ठल हटकारी
12. मोटे अनाजों का महत्व और पोषण सुरक्षा के लिए इनसे निर्मित व्यंजन 122
    - के. उषा एवं भूपिंदर सिंह

राजभाषा खंड...

1. भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (राजभाषा प्रगति रिपोर्ट 2023-24) 127

2. "राजभाषा" हमारी नज़र में 133
   - बिजय सिंह, मी मास्टर नेहाल प्रसाद चौरसिया एवं सोनाम जन्मु डुक्प
3. तकनीक की प्रगति और हिंदी का प्रयोक्ता 135
   - बालेन्दु शर्मा दाधीच
4. गीत के माध्यम से किसानों के बीच खेती का महत्व 137
   - ऋषिकेश तिवारी एवं संजय सिंह जाटव

तकनीकी खंड...

माटी के लाल : भारत रत्न प्रो. एम.एस. स्वामीनाथन

नीरज कुमार[1], सी. भारद्वाज[1], अमित कुमार गोस्वामी[2] एवं आर.एम. शर्मा[2]

[1]आनुवांशिकी संभाग, भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली - 110 012
[2]फल एवं औद्यानिकी प्रोद्योगिकी संभाग, भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली - 110 012

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का अत्यंत लोयकप्रिय कथन है कि, ''भूखे व्यक्ति के लिए भगवान केवल रोटी के रूप में ही प्रकट हो सकते हैं''। परंतु आज के परिप्रेक्ष्य में कहा जा सकता है कि, वह भगवान कोई और नहीं बल्कि प्रोफेसर स्वामीनाथन हैं, और हर भारतीय तथा उनकी आने वाली पीढ़ियों को भरपेट भोजन करते समय उन्हें याद करना चाहिए। कुछ यह कद था हमारे प्रोफेसर स्वामीनाथन हरित क्रांति के जनक तथा एक महान कृषि वैज्ञानिक का, जिसने करोड़ों भारतीयों को भूख से बचाया एवं देश के सम्मान को पुनः प्रतिस्थापित किया। यह लेख प्रोफेसर स्वामीनाथन की जीवनी एवं कृषि विज्ञान में उनके अतुलनीय योगदान का वर्णन करता है।

प्रो. मोनकोम्बु संबाशिवन स्वामीनाथन
(7 अगस्त, 1925 – 28 सितंबर, 2023)

भूखा राष्ट्र एवं "शिप टू माउथ" अर्थव्यवस्था

वर्त्तमान समय में जब भारत खाद्यान्न के उत्पादन में आत्मनिर्भर है, और हर भारतीय की थाली भोजन से भरी हुई है। साथ ही हमारी सरकार लगभग 81.35 करोड़ भारतीयों को हर माह मुक्त राशन बांट रही है, जिसे बांटने की आगामी 5 वर्ष तक बढ़ा दी गई है। यही नहीं, भारत वर्त्तमान में कई देशों का पेट भरने की क्षमता भी रखता है, जिसे कोरोना काल में हमारे देश द्वारा सिद्ध भी कर दिया गया है। इसी वजह से जब भी भारत गेहूं के निर्यात पर प्रतिबंद लगता है, तो पूरा विश्व उसकी तरफ आस लगा के देखने लगता है।

यह वही भारत है जिसके प्रधानमंत्री ने कभी कहा था की ''मैं कभी नहीं चाहती कि हमें फिर से भोजन के लिए भीख मांगनी पड़े'', यह कथन श्रीमती इंदिरा गांधी ने अमेरिकी राष्ट्रपति लिंडन जॉनसन के साथ एक कॉल के बाद कहा। वर्ष 1965 में भारत-पकिस्तान युद्ध के दौरान, तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री को भारतीयों से यह अपील करनी पड़ी थी कि, हर भारतीय सप्ताह में एक बार भोजन का त्याग अवश्य करे। यह देश की उन परिस्थितियों एवं संघर्षों को दर्शाता है, जब देश के पास अपनी आबादी को खिलाने के लिए पर्याप्त खाद्यान्न नहीं थे, और भारत भीषण भूखमरी से जूझ रहा था।

प्रगति की पथ पर तेजी से आगे बढ़ते हुए भारतीयों को आज के युग में खाने के चिंता नहीं है, भोजन व्यवस्था अब उनके लिए सामान्य सी बात लगती है। जिसके फलस्वरूप, आज के बुद्धिजीवी और अति शिक्षित भारतीय, हरित क्रांति और इसकी आवश्यकता पर प्रश्न उठाते है। इन युवा प्रगतिशील भारतीयों को यही नहीं पता की इनके दादा जी ने भूखमरी से ग्रस्त वह भारत देखा था, जहां जनता का पेट भरने के लिए एवं अनाज आपूर्ति सुनिश्चित करने हेतु ताशकंद समझौता किया गया। वह भारत जिसे पब्लिक लॉ 480 के तहत अमेरिका से गेहूं आयात करना पड़ा था, जिसे ''शांति के लिए भोजन'' का नाम दिया गया था। वर्ष 1956 में देश ने 30 लाख टन खाद्यान्न आयात किया जो कि 1963 में बढ़कर 45 लाख टन हो गया। खाद्यान्न को आयात करना भारत जैसे देश जो अपने समृद्ध इतिहास के लिए प्रसिद्ध था, सम्मानजनक नहीं था। भारत में संकट इतना था कि सरकार अमेरिका से घटिया गुणवत्ता विहीन गेंहूं जो, केवल सुअरों के लिए उपयुक्त था, तक लेने के लिए तैयार थी। भारत को इस अत्यंत आवश्यक सहायता को प्राप्त करने के लिए गिड़गिड़ाना तक पड़ता था, और दवाब में आकर कई दीर्घकालिक नीतिगत फैसले पर हस्ताक्षर करने पड़े जो कि देशहित में नहीं थे, यह समय भारत सरकार एवं सभी भारतीयों के लिए काफी अपमानजनक था। उस समय कांग्रेस के अध्यक्ष के. कामराज ने कथित तौर पर

दिसंबर 1965 में कहा था कि, वह अमेरिकियों से गेहूं प्राप्त करने के बजाए भूखे रहना पसंद करेंगे।

इस प्रकार, भारत ने दशकों तक अपमान और निर्भरता की भावना को सहन किया तथा उसे भोजन जैसी बुनियादी जरूरतों को प्राप्त करने में भी चुनौतियों का सामना करना पड़ा। अमेरिकियों से मिलने पर अक्सर कई भारतीयों में हीनता की भावना पैदा होती थी। हालांकि अब समय बदल गया है, और तब से राष्ट्र में अकल्पनीय व महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। कही न कही हर भारतीय के मन में यह सवाल उठता है कि कृषि प्रधान देश होने के बाद भी हमारी दशा ऐसी क्यों थी? और वह कौन महापुरुष थे, जिन्होंने हमें ऐसी दयनीय परिस्थिति से उबारा?

एम.एस. स्वामीनाथन: महान कृषि वैज्ञानिक, जिन्होंने भूख मुक्त राष्ट्र की परिकल्पना को साकार किया

प्रो. स्वामीनाथन का जन्म दिनांक 07 अगस्त, 1925 को भारत के तमिलनाडु राज्य के कुंभकोणम स्थान पर हुआ था। उनका जन्म एक तमिल ब्राह्मण परिवार में हुआ था, जिसकी कृषि और शिक्षा में गहरी पृष्ठभूमि थी। उनके पिता, डॉ. एम.के. संबासिवन, एक सर्जन थे, और उनकी मां, श्रीमती पार्वती थंगम्मल संबासिवन, एक ऐसे परिवार से थीं, जो खेती से गहराई से जुड़ा हुआ था। बड़े होते हुए, स्वामीनाथन के पारिवारिक मूल्यों और पृष्ठभूमि ने कृषि और विज्ञान में उनकी रुचि को बहुत प्रभावित किया। उनके परिवार का ज़मीन से गहरा जुड़ाव था, और वे छोटी उम्र से ही किसानों के सामने आने वाली चुनौतियों से परिचित थे। इस परिवेश ने उनमें भारत में किसानों के जीवन को बेहतर बनाने में योगदान देने की ज़िम्मेदारी की भावना को पैदा किया । प्रो. स्वामीनाथन की शैक्षणिक यात्रा, कृषि और खाद्य सुरक्षा को बेहतर बनाने के लिए समर्पण और प्रतिबद्धता से परिपूर्ण थी। स्वामीनाथन ने कुंभकोणम के स्थानीय स्कूलों में पढ़ाई की और अपनी पढ़ाई में उत्कृष्ट प्रदर्शन किया। वर्ष 1943 के बंगाल के अकाल और द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान खाद्यान्न की कमी की विभीषिका को महसूस करते हुए, उन्होंने कृषि का अध्ययन करने का फैसला किया। उन्होंने 1944 में तमिलनाडु के कोयंबटूर में कृषि महाविद्यालय और अनुसंधान संस्थान से कृषि में विज्ञान में स्नातक की उपाधि प्राप्त की। उन्होंने नई दिल्ली में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (IARI) में स्नातकोत्तर अध्ययन किया, जहां उन्होंने 1949 में आनुवंशिकी और पादप प्रजनन में स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त की तथा उसके उपरांत (1949-50) उन्होंने वेगेनिंगन कृषि विश्वविद्यालय नीदरलैंड में यूनेस्को के रिसर्च फेलो के रूप में अध्ययन किया। उस समय नीदरलैंड्स में, आलू का गोल्डन नेमाटोड एक गंभीर समस्या के रूप में उभर रहा था, जिसको नियंत्रित करने के लिए प्रतिरोधी किस्मे विकसित करना एक बड़ी चुनौती थी, जिसे स्वामीनाथन ने स्वीकारा एवं आलू की जंगली प्रजातियों से जीन स्थानांतरित करने की विधि सफलतापूर्वक विकसित की। उन्होंने ब्रिटेन के ट्रम्पिंगटन में कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में अपने पीएचडी कार्यक्रम (1950-52) के दौरान भी इसी अध्ययन को आगे बढ़ाया, जहां उन्होंने डॉ. हेरोल्ड डब्ल्यू हॉवर्ड के मार्गदर्शन में 'प्रजाति विभेदन, और जीनस सोलनम की कुछ प्रजातियों में बहुगुणिता की प्रकृति पर कार्य किया। प्रो. स्वामीनाथन के 'आलू की कोशिका विज्ञान और आनुवंशिकी' और 'गैर-कंदीय सोलनम में बहुगुणिता एवं अंतर-विशिष्ट संकरण पर उत्कृष्ट कार्य आज भी व्यापक रूप से उद्धृत किया जाता है। वर्ष 1952 में कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय से पीएचडी की डिग्री प्राप्त करने के बाद, प्रो. स्वामीनाथन ने कुछ समय के लिए विस्कॉन्सिन विश्वविद्यालय, मैंडिसन में एक शोध सहयोगी के रूप में काम किया, जहां उन्होंने ठंड -सहिष्णुता के लिए जीन स्थानांतरित करके ठंड -प्रतिरोधी संकर आलू विकसित किया, जिसका उपयोग बाद में अलास्का फ्रॉस्टलेस नामक ठंड प्रतिरोधी आलू की किस्म विकसित करने के लिए किया गया। विस्कॉन्सिन विश्वविद्यालय ने उन्हें एक नियमित शिक्षण-सह-शोध प्रोफेसर के पद की पेशकश भी की, जिसे उन्होंने स्वीकार नहीं किया, और देश में फसल उत्पादकता में सुधार के अपने मिशन को पूरा करने के लिए जनवरी 1954 में वे भारत लौट आए। उन्होंने कुछ समय के लिए केंद्रीय चावल अनुसंधान संस्थान, कटक में सहायक वनस्पतिशास्त्री के रूप में अस्थाई पद पर काम किया, अक्टूबर 1954 में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली में शाकीय विज्ञान संभाग में सहायक साइटोजेनेटिक्सिस्ट के रूप में शामिल

हुए एवं जल्द ही उन्हें साइटोजेनेटिक्सिस्ट (1956) के पद पर पदोन्नत किया गया और 1961 में वे शाकीय विज्ञान संभाग के अध्यक्ष बन गए। इसके उपरांत जुलाई 1966 में उन्हें भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली का निदेशक नियुक्त किया गया। भारतीय इतिहास में यह समय देश की कृषि अनुसंधान एवं विकास के थे, इस स्वर्णकाल में भारत ने हरित क्रांति से खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता प्राप्त की तथा एक दूरदर्शी कृषि वैज्ञानिक नेता - प्रो. एम.एस. स्वामीनाथन का उदय हुआ।

निर्भरता से गरिमा तक: स्वतंत्र भारत के अस्तित्व के लिए हरित क्रांति

वर्ष 1954 में भारत लौटकर, प्रो. स्वामीनाथन खाद्य सुरक्षा के बारे में चिंतित थे, क्योंकि उस समय 'जहाज से मुंह तक' अस्तित्व और भारत की 'भिक्षापात्र' वाली छवि थी। वे हमारे मुख्य खाद्यान्न (गेहूं और चावल) की उत्पादकता और उत्पादन बढ़ाने के लिए सतत प्रयासरत थे। जिसके लिए ऐसी किस्मों की आवश्यकता महसूस की गई जो की बौनों हो और कार्यात्मक रूप से उर्वरकों के बाहरी अनुप्रयोग से अधिक उत्पादन दे सके। विशिष्ट संकरण, विकिरण और रासायनिक उत्परिवर्तन, और पौधों के विकास नियामकों के उपयोग को आगे बढ़ाकर उन्होंने यह हासिल करने का प्रयास किया।

उस समय पौध प्रजनकों के लिए एक बड़ी चुनौती गेहूं की गैर-झूलने वाली और उर्वरक अनुकूल किस्मों को विकसित करना था, क्योंकि डॉ. बी.पी. पाल के प्रयासों से एनपी 809 और एनपी 824 जैसी किस्में, रतुआ के प्रतिरोध के लिए विकसित की गई थीं, जो लंबी थीं और आसानी से गिर जाती थी तथा प्रति हेक्टेयर एक टन से भी कम उपज देती थी। यह जानते हुए कि डॉ. ऑरविल एल्विन वोगेल ने जापान में कृषि विज्ञानी गोंजिरो इनाज़ुका द्वारा विकसित गेहूं की किस्म नोरिन-10 का उपयोग करके वाशिंगटन स्टेट यूनिवर्सिटी, यूएसए में छोटे तने वाली और उच्च उपज देने वाली शीतकालीन गेहूं की किस्में विकसित की हैं, प्रो. स्वामीनाथन ने 1960 में डॉ. वोगेल से नोरिन-10 के बीज के लिए अनुरोध किया। डॉ. वोगेल ने प्रो. स्वामीनाथन को बताया कि डॉ. नॉर्मन ई. बोरलॉग ने, मेक्सिको में गेहूं में नोरिन-10 और इसके बौनेपन के जीन को सफलतापूर्वक स्थानांतरित कर दिया है। अच्छी खबर यह थी कि, प्रो. स्वामीनाथन के अनुरोध पर डॉ. बोरलॉग, भारत में गेहूं उत्पादन की बढ़ती समस्याओं को भांपने के बाद उपयुक्त सामग्री की आपूर्ति करने के लिए तुरंत सहमत हो गए। भारत सरकार के निमंत्रण पर डॉ. बोरलॉग मार्च 1963 में भारत आए और प्रो. स्वामीनाथन और उनके सहयोगियों - एस.पी. कोहली, एम.वी. राव और वी.एस. माथुर के साथ भारत का व्यापक दौरा किया। मैंक्सिकन बौने गेहूं की किस्मों लेर्मा रोजो64-ए, सोनोरा 63, सोनोरा 64, मेयो 64 और अन्य किस्मों के बीजों की पहली खेप - सितंबर 1963 में प्राप्त किए गए, जहा से हरित क्रांति की नीव पड़ी तथा इन बीजों को भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली में 2 हेक्टेयर क्षेत्रफल में बोया गया। मैंक्सिकन किस्में कीटों और बीमारियों से मुक्त थीं और दो से तीन गुना अधिक अनाज पैदा करती थीं, लेकिन अनाज का रंग भारत में उपभोक्ताओं को पसंद नहीं आया।

स्थानीय जरूरतों को पूरा करने के लिए मैंक्सिकन किस्मों में सुधार और उत्पादन बढ़ाने के लिए उन्हें जल्दी अपनाने का काम आसान न था। उस समय विभिन्न जरूरतों के लिए खाद्यान्न बफर स्टॉक बनाए रखने के लिए आयात पर अत्यधिक निर्भरता देश की एक बड़ी चिंता थी। उत्पादन में तेजी लाने के लिए, वर्ष 1966 में श्री सी. सुब्रमण्यम के कहने पर एक साहसिक निर्णय लिया गया तथा भारत ने 18,000 टन मैंक्सिकन गेहूं का बीज आयात किया, जो कि कृषि इतिहास में आयातित बीजों की सबसे बड़ी खेप थी। इस बीच, लाल अनाज का रंग बदलने और रोग प्रतिरोधक क्षमता में सुधार करने के लिए प्रजनन एवं अनाज की गुणवत्ता में सुधार और उपयुक्त कृषि पद्धतियों के विकास ने 1968 में गेहूं उत्पादन में 17 मिलियन टन की भारी वृद्धि की। यह प्रो. स्वामीनाथन के गतिशील नेतृत्व और रणनीतियों के कारण संभव हुआ कि देश ने जल्दी ही एम्बर रंग का गेहूं भी विकसित किया, जिसके परिणामस्वरूप गेहूं उत्पादन में अभूतपूर्व वृद्धि हुई। समुचित वैज्ञानिक भागीरथ प्रयास, प्रभावशाली नीति, रातनीतिक हस्तक्षेप एवं किसानों के कठिन परिश्रम ने हरित क्रांति को जन्म दिया जिसने भारत

को गेहूं के उत्पादन में आत्मनिर्भर बनाया।

इसके बाद, भारत सरकार ने वर्ष 1971 में भारत को खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर घोषित कर दिया। इस प्रभावशाली वृद्धि ने भारत के कृषि परिदृश्य को हमेंशा के लिए बदल दिया तथा भारतीय उपमहाद्वीप में बड़े पैमाने पर अकाल की भविष्यवाणी करने वाले पैडॉक बंधुओं को प्रो. एम.एस. स्वामीनाथन जैसे समर्पित वैज्ञानिकों के प्रयासों और भारतीय किसानों की दृढ़ता ने गलत साबित कर दिया। इस महान योगदान के लिए भारत की हरित क्रांति के जनक के रूप में प्रशंसित, प्रो. स्वामीनाथन ने अपना पूरा जीवन खाद्य असुरक्षा को समाप्त करने और सभी के लिए अधिक न्यायसंगत और टिकाऊ भविष्य सुनिश्चित करने के लिए प्रयास किए। प्रो. स्वामीनाथन ने कृषि वैज्ञानिक के तौर पर भारत में कई प्रतिष्ठित पदों पर कार्य किया, वे निदेशक, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली (1961-72); महानिदेशक, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद और नवगठित डेयर के सचिव (1972-79); कृषि सचिव, भारत सरकार (1979); एवं कार्यवाहक उपाध्यक्ष और सदस्य, योजना आयोग (1980-82) रहे। इसके अलावा, वे अंतरराष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान, फिलीपींस (1982-88) के महानिदेशक बनने वाले पहले भारतीय थे, और उन्हें वर्ष 1987 में पहले विश्व खाद्य पुरस्कार से सम्मनित किया गया। उनकी सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धियों में से एक 2004 में देखी गई, जब उन्हें किसानों पर राष्ट्रीय आयोग का अध्यक्ष नियुक्त किया गया। यह आयोग किसानों की बढ़ती परेशानी और किसानों के बीच आत्महत्या की भयावह वृद्धि के जवाब में स्थापित किया गया था। कृषि में उनकी विशेषज्ञता और योगदान के लिए उन्हें वर्ष 2007-2013 के लिए राज्य सभा के सदस्य के रूप में नामित किया गया। प्रो. एम.एस. स्वामीनाथन भारत के अब तक के सबसे प्रख्यात शोध वैज्ञानिक रहे हैं- अतीत में उनके जैसा न कोई हुआ और दूर-दूर के भविष्य में भी उनके जैसा होना दुर्लभ ही है। डॉ. स्वामीनाथन के बिना भारत में हरित क्रांति की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। उनके योगदान के बिना आज भारत तबाह और आबादी रहित देश होता, जैसा कि अमेरिकी पैडॉक ब्रदर्स ने भविष्यवाणी की थी।

प्रो. स्वामीनाथन हर एक दृश्टिकोण में भारत के सच्चे सपूत रहे है, उनके इन्हीं महान कार्यो के लिए भारत के इस लाल को किसानों का मसीहा भी कहा जाता है, कृषि में उनके उत्कृष्ट योगदान के लिए उन्हें कई पुरस्कार और सराहनाएं मिली हैं, उन्हें पद्म श्री (1967), पद्म भूषण (1972) और पद्म विभूषण (1989) से भी सम्मानित किया गया। महान कृषि वैज्ञानिक और देश की 'हरित क्रांति' के प्रमुख वास्तुकार मनकोम्बु सांबशिवन स्वामीनाथन का दिनांक 28 सितंबर, 2023 को 98 वर्ष की आयु में निधन हो गया। प्रो. स्वामीनाथन को 2024 में मरणोपरांत भारत रत्न से सम्मानित किया, यद्यपि प्रोफेसर ने कभी पुरस्कारों के लिए काम नहीं किया, उन्हें तो बस हर समय किसानों की ही चिंता रहती थी, अगर हम स्वामीनाथन का सम्मान करते हैं, तो हमें किसानों को भी साथ ले कर चलना होगा (उनकी पुत्री का कथन) यही प्रोफेसर को सही मायने में श्रद्धांजलि होगी।

जय हिंद

समेकित कृषि प्रणाली द्वारा आत्मनिर्भर भारत

यू.के.बेहरा[1], पी.के.साहू[2] एवं रणबीर सिंह[3]

[1]पर्यावरण विज्ञान संभाग, [2]कृषि अभियांत्रिकी संभाग एवं [3]सस्यविज्ञान संभाग
भा.कृ.अनु.प.- भारतीय कृषि अनुसंस्थान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली 110 012

भारत और अन्य एशियाई देशों में कृषि, प्राकृतिक संसाधनों की स्थिरता, जलवायु परिवर्तन और उत्पादकता में गिरावट इत्यादि जटिल चुनौतियों का सामना कर रही है, जिनके और अधिक गंभीर परिणाम होने की संभावना है। इनके अतिरिक्त, कृषि जोत के आकार में गिरावट की स्थिति, खेती की लाभप्रदता और स्थिरता भी एक गंभीर चुनौती है। भूमि की प्रति व्यक्ति उपलब्धता में गिरावट को देखते हुए, ऐसी रणनीतियों और कृषि प्रौद्योगिकियों को विकसित करना अनिवार्य है जो पर्याप्त रोजगार और आय सृजन को सक्षम बनाती हैं, विशेष रूप से छोटे-धारकों (< 2.0 हैक्टेयर भूमि वाले किसान) के लिए, जो कि विकासशील देशों में कृषक समुदाय का प्रतिनिधित्व करते हैं। एकल कृषि उद्यम, एक विशिष्ट फसल प्रणाली, छोटे-जोत आदि किसान को खेती में बनाए रखने में सक्षम नहीं है। एकीकृत कृषि प्रणाली स्थानीय संसाधनों के कुशल प्रबंधन और उत्पादों और उप-उत्पादों के पुनर्चक्रण पर आधारित हो, ताकि खेती के आदानों की आवश्यकता को पूरा करने के लिए खेती को आत्मनिर्भर बनाया जा सके और कृषि प्रणाली और क्षेत्रीय स्तरों पर आत्मनिर्भरता लाने के लिए कृषि परिवारों हेतु विभिन्न उत्पाद एक संभावित कारक है। आईएफएस को उद्यमों के बीच सामजंस्य, उत्पादन में विविधता और पर्यावरणीय अनुकूलता से लाभ मिलता है। इसी आधार पर भारत में छोटे और सीमांत किसानों के विकास और आत्मनिर्भर भारत के लिए आईएफएस का सुझाव दिया गया है।

परिचय और पृष्ठभूमि

वर्तमान कृषि में एक औद्योगिक उत्पादन मॉडल का उपयोग करने की स्थिति है, जहां फसलों और जानवरों का उत्पादन उन प्रणालियों में किया जाता है जो बढ़ती जनसंख्या हेतु खाद्य आहार, पोषण और वस्त्र मांगों को पूरा करता है। इस मॉडल के भीतर, बाहरी आगत (जैसे; सिंचाई, सिंथेटिक उर्वरक, रासायनिक कीट नियंत्रण, चारा, वृद्धि हार्मोन) का उपयोग अक्सर पर्यावरणीय गुणवत्ता और प्रमुख पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं पर उत्पादन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए किया गया है। कृषि उत्पादन के इस मॉडल को जारी रखने से पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं का नुकसान हुआ है। कृषि में भविष्य की चुनौतियों के विरुद्ध में नई प्रणालियों का विकास शामिल होना चाहिए जो अत्यधिक उत्पादक हो, पर्यावरण को होने वाले नुकसान को कम करें और अक्षय संसाधनों का प्रभावी ढंग से उपयोग करें। इन लक्ष्यों को प्राप्त करना एक महत्वपूर्ण कार्य होगा, क्योंकि इसके लिए वर्तमान में नियोजित की तुलना में अधिक जटिल, विविध और प्रबंधन-गहन उत्पादन प्रणालियों के विकास और कार्यान्वयन की आवश्यकता होगी। इसके अतिरिक्त, भविष्य की कृषि उत्पादन प्रणालियों को अप्रत्याशित पर्यावरणीय चुनौतियों के समाधान की आवश्यकता होगी तथा इन चुनौतियों का समाधान करने के लिए एकीकृत कृषि प्रणालियों को अपनाने की अनुशंसा की जाती है। कृषि-रसायन, मशीनीकरण और सिंचाई आदान औद्योगिक कृषि के केंद्र है जो पूरी तरह से घटते और अधिक महंगे जीवाश्म ईंधन से प्राप्त होते हैं। उच्च उपज देने वाली फसल की किस्मों के उपयोग से कृषि की गहनता, उर्वरक, सिंचाई और कीटनाशक गंभीर स्वास्थ्य और पर्यावरणीय प्रभावों के साथ प्राकृतिक संसाधनों पर अत्याधिक प्रभाव डालते हैं। पारिस्थितिकी विनियमन तंत्र की कमी और बाहरी आदानों पर अत्यधिक निर्भर होने के कारण देश और दुनिया के कुछ हिस्सों में एकल फसल पद्धति का प्रतिकूल पर्यावरणीय प्रभाव पड़ा है। उद्योगों, बिचैलियों और किसानों से जुड़े बाहरी औद्योगिक आदानों के दुष्चक्र को तोड़ने और कोविड-19 चुनौतियों का समाधान करने के लिए, भारत सरकार ने "आत्मनिर्भर भारत (आत्मनिर्भर भारत)" के नाम से एक अभिनव तकनीकी उपाय और कार्यक्रम शुरू किए हैं। इसके अंतर्गत कृषि प्रणालियों को खेत स्तर पर प्रमुख आदानों और संसाधनों का सृजन करके आत्मनिर्भर बनाने की आवश्यकता है। इस विचार को पूरा करने के लिए, समन्वित कृषि प्रणाली एक संभावित विकल्प है, जहां पर 70 प्रतिशत संसाधनों को कृषि प्रणालियों में उपयोग किया जाता

है। इस लेख में जलवायु परिवर्तन को ध्यान में रखते हुए संसाधन उपयोग दक्षता और ग्रामीण जैव-उद्यमिता को बढ़ाने के साथ-साथ कृषि को आत्मनिर्भर बनाने और किसानों की आय को दोगुना करने के लिए कृषि प्रणालियों और एकीकृत कृषि प्रणालियों से संबंधित जानकारी दी गई है।

दूसरे शब्दों में, एक बड़ी जनसंख्या की खाद्य आवश्यकताओं के साथ सामजंस्य हेतु प्राकृतिक संसाधनों के न्याय पूर्ण व्यवहार एवं संरक्षण पर उचित विचार के साथ कृषि खाद्य उत्पादन के सभी पहलुओं में तेजी लाने की वर्तमान परिवेश में आवश्यकता है, जिसे केवल स्थाई संसाधन प्रबंधन के माध्यम से ही प्राप्त किया जा सकता है। कृषि प्रणाली को आर्थिक और निरंतर उत्पादकता प्राप्त करने के लिए एक संसाधन प्रबंधन रणनीति माना जाता है जो संसाधन आधार को संरक्षित रखते हुए और पर्यावरण की गुणवत्ता के उच्च स्तर को बनाए रखने के साथ-साथ परिवार की विविध आवश्यकताओं को पूरा करती है। छोटे और सीमांत किसानों की समस्याओं को हल करने में यह बहु-विषयक संपूर्ण-कृषि के लिए बहुत प्रभावी है। उक्त प्रणाली का उद्देश्य विभिन्न कृषि उद्यमों को एकीकृत करके और खेत के अंदर ही फसल अवशेषों और उप-उत्पादों को पुनर्चक्रित करके आय और रोजगार सृजन में वृद्धि करना है।

आज भारतीय कृषि संरचना परिवर्तन के दौर से गुजर रही है। बदलते कृषि ढांचे की एक उल्लेखनीय विशेषता छोटे जोतधारकों की है जिनकी संख्या समय के साथ बढ़ी है और भविष्य में भी ऐसा जारी रहेगी। पारंपरिक एकल फसल पद्धति बदलती खाद्य मांग को पूरा करने और स्थाई आधार पर छोटे भूमि धारकों की आजीविका में सुधार करने में असमर्थ है। इसलिए, कृषि उत्पादन को बनाए रखने, कृषि आय को बनाए रखने, पर्यावरण की रक्षा करने और खाद्य गुणवत्ता आधारित उपभोक्ता की खाद्य मांग हेतु खेती के लिए एकीकृत कृषि प्रणाली एक विकल्प है। इसके अतिरिक्त, भूमि की प्रति व्यक्ति उपलब्धता में 1950-51 में 0.5 हैक्टेयर से 2011 में 0.15 हैक्टेयर तक गिरावट के साथ 2025 तक 0.11 हैक्टेयर से कम होने का अनुमान है, जो कि विकासशील रणनीतियों और कृषि प्रौद्योगिकियों की आवश्यकता को दर्शाता है, जो पर्याप्त रोजगार और आय सृजन करते हैं। छोटे किसानों के सामने आने वाली समस्याएं बड़ी जोत वाले किसानों से अलग हैं। इन किसानों को बहु-फसलीय कृषि प्रणालियों की आवश्यकता है।

समेकित कृषि प्रणाली अनुसंधान के आधार पर, किसानों के जैव-भौतिक और सामाजिक-आर्थिक स्थितियों में मछली पालन, मुर्गीपालन, बत्तख पालन, मधुमक्खी पालन, फसल और बागवानी फसलों जैसे भूमि आधारित उद्यमों द्वारा एकीकरण खेती कृषि को आत्मनिर्भर बनाने के लिए महत्वपूर्ण है। अलग-अलग कृषि उद्यम द्वारा किसान परिवार का भरण-पोषण नहीं हो सकता है, परंतु आईएफएस दृष्टिकोण भारतीय कृषक समुदायों के सतत आर्थिक विकास के वचन को पूरा करता है। एकीकृत कृषि प्रणाली विभिन्न उद्यमों के बीच समाजंस्य बनाने, उपज की विविधता और पर्यावरणीय सुदृढ़ता से लाभांवित होती है। इस कारण देश भर में छोटे और सीमांत खेतों को विकसित करने के लिए अनेक विज्ञानियों द्वारा समेकित कृषि प्रणाली मॉडल की अनुशंसा दी गई है।

कृषि प्रणालियों की अवधारणा

"कृषि प्रणाली" मृदा, पौधों, जानवरों, उपकरणों, बिजली, श्रम, पूंजी और अन्य आदानों का एक जटिल अंतर-संबंधित मैट्रिक्स है, जो किसान परिवारों द्वारा नियंत्रित किया जाता है और राजनीतिक, आर्थिक, संस्थागत तथा सामाजिक घटकों द्वारा अलग-अलग तरह से प्रभावित होता है। कई स्तरों पर "कृषि प्रणाली" शब्द कृषि उद्यमों की एक विशेष व्यवस्था को संदर्भित करता है जो भौतिक, जैविक और सामाजिक-आर्थिक वातावरण के स्थिति में किसान के लक्ष्यों, प्राथमिकताओं और संसाधनों के अनुसार प्रतिबंधित होते हैं। परिवार, उसके संसाधन और संसाधन प्रवाह और व्यक्तिगत कृषि स्तरों पर परस्पर क्रिया को एक साथ एक कृषि प्रणाली के रूप में संदर्भित किया जाता है। कृषि प्रणाली अवधारणा कृषि और संबंधित सस्य क्रियाओं जैसे; मृदा, जल, फसलों, पशुधन, श्रम, पूंजी, ऊर्जा और अन्य संसाधनों के घटकों का ध्यान रखती है। किसान परिवार अपनी क्षमता और संसाधनों, सामाजिक-सांस्कृतिक व भौतिक, जैविक तथा आर्थिक कारकों के साथ इन घटकों की सीमाओं के अंदर कार्य करता है।

कृषि प्रणाली का केंद्र

- प्रक्षेत्र नियंत्रण में विभिन्न कारकों के बीच अन्योन्याश्रयता के घटक जैसे - भौतिक, जैविक और सामाजिक-आर्थिक तथ्यों के साथ परस्पर क्रिया करते हैं, जो घरेलू स्तर पर नियंत्रण में नहीं होते हैं।

- खेत पर किए जाने वाले कृषि प्रणाली और अन्योन्याश्रित कृषि उद्यमों की आधारभूत इकाई है।
- किसान कई सामाजिक-आर्थिक, जैव-भौतिक, संस्थागत, प्रशासनिक और तकनीकी बाधाओं के अंतर्गत कार्य करते हैं।
- कृषि प्रणाली का संचालक किसान समेकित कृषि प्रणाली मॉडल में किसान को केंद्र में रखते हैं। निर्णय घर की प्राथमिकताओं, किसान के ज्ञान और अनुभवों के आधार पर होते हैं। बाहरी कारक-प्राकृतिक, आर्थिक और सामाजिक-सस्य क्रियाएं भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

एकीकृत कृषि प्रणाली की विशेषताएं

एक आईएफएस की दो प्रमुख विशेषताएं हैं: (क) अपशिष्ट उपयोग जिसमें एक उपप्रणाली के अपशिष्ट दूसरी उपप्रणाली के लिए एक इनपुट बन जाते हैं और (ख) बेहतर दो उप-प्रणालियां अनिवार्य रूप से सभी स्थान पर अपनायी जाती हैं। एकीकृत खेती को जैविक रूप से आईएफएस के रूप में भी परिभाषित किया गया है जो प्रक्षेत्र आदान से अधिकतम प्रतिफल को प्राप्त करने के लिए प्राकृतिक संसाधनों को कृषि प्रक्रियाओं में एकीकृत करते हैं (ग) पारिस्थितिकी रूप से बेहतर प्रौद्योगिकियों के माध्यम से उच्च गुणवत्ता वाले खाद्य और अन्य उत्पादों के सतत उत्पादन को सुरक्षित करता है (घ) कृषि आय को बनाए रखता है (च) कृषि द्वारा उद्यम वर्तमान पर्यावरण प्रदूषण के स्रोतों को समाप्त या कम करता है और (झ) कृषि में किसानों को बनाए रखता है।

एक आईएफएस माडल में एक ही खेत पर एक एकीकृत तरीकें से अनेक फसलों (जैसे; अनाज, दलहन, पेड़ की फसल, सब्जियां) और कई उद्यमों (जैसे; पशुधन, मधुमक्खी पालन, मछली) को अपनाया जाता है। समेकित कृषि प्रणाली उपागम समग्र, बहु-विषयक, समस्या समाधान, स्थान विशिष्ट और किसानोंन्मुखी है। समेकित कृषि प्रणाली का मूल उद्देश्य संसाधन विकास और उपयोग विधाओं का एक उपयुक्त प्रारूप तैयार करना है, जिससे कृषि उत्पादन में पर्याप्त और निरंतर वृद्धि होती है। हालांकि, कृषि प्रणालियों के अंदर घटकों के बीच अंतः क्रियाओं का एक पारस्परिक है।

भारत के छोटे और सीमांत किसानों के लिए, समेकित कृषि प्रणाली उनकी आर्थिक स्थिति और आजीविका को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। विशिष्ट कृषि प्रणालियों के विपरीत, आईएफएस गतिविधि अनेक फसलों, जानवरों और संबंधित सहायक व्यवसायों के आधार पर चयनित, अन्योन्याश्रित, परस्पर संबंधित और अक्सर परस्पर जुड़ी उत्पादन प्रणालियों के आस-पास केंद्रित है। एक समेकित कृषि प्रणाली में एक प्रणाली के प्राथमिक और द्वितीयक उत्पाद का उपयोग अन्य प्रणालियों के लिए आधारभूत आदान के रूप में किया जाता है, इस प्रकार उन्हें एक पूरी इकाई के रूप में परस्पर एकीकृत किया जाता है। प्रभावी समग्र कृषि प्रणाली विकसित करने के लिए विभिन्न घटकों की आवश्यकता है।

एकीकृत कृषि का सिद्धांत

एकीकृत कृषि (आईए) पद्धति अपनाते हुए हम दूसरों को प्राकृतिक सद्भाव के साथ सह-अस्तित्व का अवसर प्रदान करते हैं। इसे भा.कृ.अनु.प. और कृषि मंत्रालय द्वारा वर्ष 2018 और 2019 की गणतंत्र झांकियों में प्रदर्शित करके संपूर्ण देश को दिखलाया गया था। 2018 में, भा.कृ.अनु.प. ने विकास हेतु एकीकृत कृषि प्रणालियों के रूप में अपनी उपलब्धि प्रदर्शित की। हमारे देश में अधिकांश छोटे और सीमांत किसान है। जिनको ध्यान में रखते हुए यह मॉडल उत्तर पूर्वी पहाड़ी (एनईएच) क्षेत्र के लिए उपयुक्त रूप से डिजाइन किया गया था। उत्तर पूर्वी पहाड़ी क्षेत्र अपनी संस्कृति और परंपराओं और जैव-विविधता में समृद्ध है। इस मॉडल में, समृद्ध संस्कृति को पृष्ठभूमि में दर्शाया गया था। अन्य सिद्धांत जिन पर कृत्रिम बुद्धिमता (एआई) आधारित है: कृषि अपशिष्टों और उप-उत्पादों के पुनर्चक्रण और कुशल उपयोग द्वारा बिना प्रक्षेत्र आदान अधिकतम प्रतिस्थापन, विभिन्न जीवों, उद्यमों, जल संचयन और प्राकृतिक संसाधन संरक्षण के सह-अस्तित्व की पूरकता के रूप में कृषि प्रणालियों के प्राकृतिक तंत्र की खोज करना है।

समेकित कृषि प्रणाली के लाभ

आईएफएस के लाभों में संसाधनों/आदानों के समायोजन में पारिवारिक श्रम का कुशल उपयोग, गैर-पारंपरिक खाद्य और चारा संसाधनों सहित कृषि बायोमास का संरक्षण और उपयोग, खाद/पशु अपशिष्ट का प्रभावी उपयोग, मृदा उर्वरता और स्वास्थ्य का विनियमन शामिल है। कई लोगों के लिए आय और रोजगार सृजन और आर्थिक संसाधनों में वृद्धि में सहायक है और विविध उत्पाद प्रदान करता है। आईएफएस वर्तमान और भावी पीढ़ियों के लाभ के लिए प्राकृतिक संसाधनों के सतत उपयोग को सुनिश्चित

करने की रणनीति का एक हिस्सा है। किसी क्षेत्र/देश में समेकित कृषि प्रणाली के कार्यान्वयन से निम्नलिखित महत्वपूर्ण लाभ हैं।

उत्पादकता

आईएफएस फसल और संबद्ध उद्यमों की गहनता के आधार पर प्रति इकाई क्षेत्र पर प्रति इकाई समय में आर्थिक उपज बढ़ाने का अवसर प्रदान करता है।

लाभप्रदता

अन्य उद्यमों के आदानों के रूप में एक उद्यम के अपशिष्ट और उप-उत्पादों के पुनर्चक्रण के माध्यम से उत्पादन लागत को कम करके लाभप्रदता में सुधार करता है।

धारणीयता

जुड़े घटकों के उप-उत्पादों के प्रभावी उपयोग के माध्यम से जैविक पूरकता का उपयोग किया जाता है, इस प्रकार उत्पादन आधार की क्षमता को अधिक लंबी अवधि तक बनाए रखने का अवसर प्रदान करता है। यह कीटों और रोगों की रोकथाम के माध्यम से कृषि-पारिस्थितिकी संतुलन प्राप्त करने पर जोर देता है।

संतुलित भोजन

विविध प्रकृति के घटक विभिन्न प्रकार के उत्पादन से जुड़े होते हैं, जो किसान परिवार के लिए संतुलित आहार प्रदान करने का काम करते हैं।

पर्यावरण सुरक्षा

एक आईएफएस में, उपयुक्त उद्यमों और घटकों को जोड़कर अपशिष्ट पदार्थों को प्रभावी ढंग से पुर्ननवीनीकरण किया जाता है, इस प्रकार पर्यावरण प्रदूषण को कम किया जाता है। यह माना जाता है कि एकल उद्यम आधारित कृषि पारिस्थितिकी सुरक्षा को खतरे में डालती है। उदाहरण के लिए, भारत के धान-गेहूं की सघन फसल वाले क्षेत्रों (जैसे; पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश) में धान के अवशेषों को जलाना आम बात है, जिसके परिणामस्वरूप पोषक तत्वों की भारी कमी हो जाती है और वातावरण में ग्रीन हाउस गैसों की मात्रा बढ़ जाती है (कुमार एवं अन्य, 2013)। खेत पर अधिक उद्यमों (जैसे पशुपालन) की शुरुआत के साथ कृषि विविधीकरण से ऐसी स्थितियों से बचा जा सकता है। धान के भूसे को पशु आहार के रूप में प्रयोग किया जा सकता है और मृदा स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए खाद में बदल दिया जाता है। साथ ही, जैसा कि एक आईएफएस प्रभावी संसाधन उपयोग और पोषक तत्वों के पुनर्चक्रण को ध्यान में रखता है और खेती को बाहरी आदानों पर कम निर्भरता होती है, यह बाहरी आदानों के भारी उपयोग के कारण होने वाले पर्यावरण प्रदूषण को कम करने में सहायक है।

संसाधन पुनर्चक्रण

समेकित कृषि प्रणाली में अपशिष्ट पदार्थों और उप-उत्पादों (फसल अवशेष और पशुधन अपशिष्ट) के प्रभावी पुनर्चक्रण का उपयोग किया जाता है। इसलिए, बाहरी आदानों (जैसे; उर्वरक, कृषि रसायन, चारा, ऊर्जा) पर कम निर्भरता है। यह एक अधिक स्थिर उत्पादन प्रणाली को दर्शाता है।

वर्ष भर आय

आईएफएस विभिन्न प्रकार की कृषि उपज (जैसे; दूध, अंडा, मशरूम, सब्जियां, फल, खाद्यान्न) की बिक्री के माध्यम से पूरे वर्ष किसानों के लिए धन का सृजन प्रदान करता है।

जोखिम न्यूनीकरण

जैसा कि एक आईएफएस विविध फसलों और उद्यमों के माध्यम से एक स्थिर और टिकाऊ उत्पादन प्रणाली प्रदान करता है, यह जोखिम को कम करने और जलवायु परिवर्तन के प्रति अनुकूल है। एकल फसल पद्धति आधारित कृषि प्रणाली हमेशा प्राकृतिक खतरों जैसे; बाढ़, सूखा और रोग महामारियों से संकटग्रस्त रहती है। भारत में 1999-2000 के दौरान, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र और कर्नाटक में कई कपास उत्पादकों ने आत्महत्या कर ली थी क्योंकि उनकी फसलों को कीटों से भारी नुकसान हुआ था। समेकित कृषि प्रणाली को अपनाने से किसानों को ऐसी स्थितियों से बचने और फसल खराब होने के जोखिम को कम करने में सहायता मिलेगी। समेकित कृषि प्रणाली में फसल के अलावा पशुधन, मत्स्य पालन, मुर्गीपालन जैसे कई उद्यम शामिल है। यह किसानों को जोखिम कम करने के कई अवसर प्रदान करता है। भारत के सकल फसली क्षेत्र का लगभग 63 प्रतिशत भाग वर्षा पर निर्भर है, जहां एक फसल की खेती प्रचलित है। इन क्षेत्रों में सूखे और अन्य प्रतिकूल मौसम स्थितियों के कारण फसल खराब होने का खतरा अधिक होता है। अंतर्वर्तीय-फसल, कृषि वानिकी, बागवानी, पशुधन और वृक्षारोपण फसलों के साथ खेती के

विविधीकरण से इन क्षेत्रों में जोखिम को कम करने और किसानों की आय बढ़ाने में सहायता मिलेगी।

खाद्य, पोषण सुरक्षा और किसानों की आय दोगुनी करने के लिए आईएफएस

सिंचित कृषि-पारिस्थितिकी तंत्र के लिए एकीकृत कृषि प्रणाली मॉडल

एकीकृत कृषि प्रणालियों में विभिन्न प्रकार की उपज का उत्पादन होता है जो खेत और क्षेत्रीय स्तर पर परिवार के पोषण में सहायक है, इस प्रकार पोषण सुरक्षा में योगदान देता है। एक उदाहरणार्थ, भा.कृ.अनु.प.-भा.कृ.अनु.सं., नई दिल्ली में एकीकृत कृषि उत्पादन प्रणालियों में (चित्र-1.) विभिन्न प्रकार के उत्पाद जैसे; अनाज-गेहूं, मक्का, दालें-अरहर, मटर, चना, तिलहन-सरसों व मूंगफली, रेशा-कपास, पत्तेदार सब्जियां-मूली, सरसों, पालक, सब्जियां-बैंगन, मूली, बेबीकॉर्न, टमाटर, सहजन सब्जियां-देशी बीन मसाले-अदरक, धनिया, प्याज चारा-बरसीम, मक्का (भंडार), बेबीकॉर्न (स्टोवर), स्वीटकॉर्न (स्टोवर), फल-अमरूद, किन्नू, नींबू, केला, दूध, अंडा, मांस, मछली और बायोगैस आदि का उत्पादन किया गया है, जिससे किसान परिवार के बेहतर पोषण और किसानों की आजीविका में सहायता मिली। इस प्रकार की प्रणाली से किसान परिवार के पोषण को पूरा करने के संबंध में आत्मनिर्भरता एवं आमदनी में वृद्धि संभव प्राप्त होती है।

चित्र-1. एक हैक्टेयर वाले सीमांत और छोटे किसानों के लिए पूसा, नई दिल्ली में आईएफएस मॉडल

समेकित कृषि प्रणाली मॉडल जन कल्याण की विभिन्न आवश्यकताओं को पूरा करने के संबंध में आत्मनिर्भर बन जाता है। समेकित कृषि प्रणाली मॉडल में तालाब (1,000 वर्ग मी.) ने जल संचयन संरचना के रूप में कार्य किया और तालाब के लिए लगभग 30 प्रतिशत (6.0 लाख लीटर) जल की आवश्यकता को वर्षा के मौसम में जल संचयन द्वारा पूरा किया गया। मछली-बत्तख एकीकरण तालाब को आंशिक रूप से उर्वरित करने में सहायक है। बत्तख की बीट सीधे तालाब में जाती हैं जिससे मछली को चारे की आवश्यकता कम हो जाती है, क्योंकि मछली तालाब से अपना भोजन पूरा कर लेती हैं। इसी तरह, मुर्गी की बीट भी सीधे तालाब में गिरती हैं और तालाब के जल को संवर्धित करती हैं। इस जल को जब फसलों में सिंचित किया जाता है, तो फसल की उत्पादकता अधिक होती है। आईएफएस मॉडल की डेयरी इकाई में लगभग 20.0 टन/वर्ष गाय के गोबर का उत्पादन हुआ, जिसे फसलों और मछली तालाब की खाद के लिए बायोगैस संयंत्र के माध्यम से पुर्ननवीनीकरण किया गया। इस प्रकार प्रणाली की उर्वरक/पोषक तत्वों की आवश्यकता में कमी आई। उत्पादित बायोगैस एक परिवार के 4-5 सदस्यों के लिए खाना पकाने के लिए गैस की आवश्यकता के लिए पर्याप्त थी। इसी प्रकार मधुमक्खी पालन और फसल के एकीकरण से फसलों के परागण में सहायता मिली और उपज में वृद्धि हुई। पोषाहार और औषधीय उद्यान भी आईएफएस के महत्वपूर्ण घटक है, जो किसान की आजीविका में सुधार करते हैं। कुल मिलाकर, इस तरह के समेकित कृषि प्रणाली मॉडल को हमारे देश में विशाल छोटे और सीमांत कृषक समुदायों के कृषि प्रणाली स्तर पर आत्मनिर्भरता लाने के लिए एक आदर्श मॉडल के रूप में अपनाया जा सकता है।

बहु-उद्यम कृषि में प्रणाली के अंदर उप-उत्पादों और विभिन्न घटकों के अवशेषों के सहक्रियात्मक पुनर्चक्रण द्वारा बाहरी/औद्योगिक आदानों पर कम निर्भरता के माध्यम से खेती की लागत को कम करने की क्षमता प्रदर्शित हुई, इसके अतिरिक्त आय और रोज़गार का एक नियमित स्रोत भी प्रदान किया है। फसलों, वानिकी, मधुमक्खी पालन, बागवानी, डेयरी, मुर्गी पालन, मत्स्य पालन, सुअर पालन आदि के सहक्रियात्मक सम्मिश्रण पर लक्षित समेकित कृषि प्रणाली दृष्टिकोण अन्य उद्यमों हेतु आदान के रूप में एक उद्यम के बचे हुए उप-उत्पाद के पुनर्चक्रण को सुनिश्चित करता है। उत्तर-पूर्वी पहाड़ी क्षेत्रों की परिस्थितियों में, फसल-मछली-सुअर (सुअर-आधारित समेकित कृषि प्रणाली) और फसल-मछली-बत्तख से जुड़े हस्तक्षेपों ने जल के कई उपयोग में सहायता की और इसके परिणामस्वरूप जल उत्पादकता, रोजगार सृजन में महत्वपूर्ण सुधार हुआ। वर्तमान पद्धति से अधिक आय और किसानों की आजीविका हेतु विविध

खेती (फसल, फल, पशुधन और मत्स्य पालन) के माध्यम से सुअर और बत्तख-आधारित क्रमशः 352 और 1,900 प्रतिशत की प्रणाली उत्पादकता में वृद्धि की और रु. 28,250 और 1,500 वर्ग मीटर के क्षेत्र से 20, 350 रुपये का शुद्ध लाभ उत्पन्न हुआ। जो वर्तमान किसान पद्धति (सिंचाई के बिना) से क्रमशः 284 और 176 प्रतिशत अधिक था।

कुल मिलाकर, एकीकृत कृषि प्रणाली अतिरिक्त आय, रोज़गार, बेहतर पारिवारिक पोषण, बेहतर कृषि पारिस्थितिकी और मृदा स्वास्थ्य प्रदान करके छोटे और सीमांत किसानों के लिए वरदान बन गई है। एनईएच क्षेत्र में छोटे और सीमांत किसान उत्थान के लिए यह एक महत्वपूर्ण दृष्टिकोण है।

किसानों की आय दोगुनी करने के लिए आईएफएस

भारत में गंगा के मैदानों में चावल-गेहूं प्रणाली की एकल फसल के परिणामस्वरूप प्राकृतिक संसाधनों का ह्रास हुआ है, कृषि उत्पादकता में गिरावट के कारण लाभप्रदता और पर्यावरण सुरक्षा में कमी आई है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आईसीएआर)-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली में 1.0 हैक्टेयर क्षेत्र में भूमि आधारित उद्यमों-फसलों, डेयरी, मत्स्यपालन, बत्तख, मुर्गीपालन, बायोगैस संयंत्र और कृषि वानिकी को शामिल करते हुए एक एकीकृत कृषि प्रणाली (आईएफएस) मॉडल विकसित किया गया था। भा.कृ.अनु.सं., नई दिल्ली, में वर्ष 2015-16 से 2017-18 के दौरान अध्ययन का उद्देश्य धान-गेहूं प्रणाली को बदलने और स्थाई तरीकें से किसानों की आय को दोगुना करने के लिए एक वैकल्पिक अनुसंधान था। समेकित कृषि प्रणाली मॉडल को विभिन्न प्रकार की उपज का उत्पादन करके, पद्धति में संसाधनों का पुनर्चक्रण करके और पारंपरिक चावल-गेहूं प्रणाली से रु. 68,200 की अपेक्षा रु. 3,78,784 के साथ किसानों की आय को दोगुना करके किसानों की आजीविका में सुधार करने की क्षमता पाई गई। एक उद्यम के अपशिष्ट एवं उप-उत्पाद दूसरे के लिए एक आदान के रूप में कार्य करते हैं और पर्यावरणीय स्थिरता को मजबूत करने में सहायता के लिए खेत आदानों पर निर्भरता काफी हद तक कम हो जाती है। सभी घटकों से प्राप्त शुद्ध प्रतिफल पारंपरिक चावल-गेहूं प्रणाली की तुलना में 4 गुना अधिक के साथ 3,78,784 रुपये था। पारंपरिक चावल-गेहूं प्रणाली के विपरीत, वर्तमान अध्ययन में आईएफएस मॉडल ने 628 मानव दिवस/हैक्टेयर का रोजगार सृजित किया जो पूरे वर्ष में दो मजदूरों को काम पर रखने में सहायता करता है (सारणी 1.)। यह सुनिश्चित रोजगार कृषि मजदूरों के आस-पास के शहरों में प्रवास को कम करता है और ग्रामीण युवाओं को ग्रामीण जैव-उद्यमिता के विकल्प के रूप में खेती करने में सहायता करता है।

सारणी-1. एकीकृत कृषि प्रणाली के विभिन्न घटकों की उत्पादकता (गेहूं के बराबर उपज) और लाभप्रदता और रोज़गार सृजन (3 वर्ष का एकत्रित आंकड़े)

उद्यम अवसर	क्षेत्रफल (है.)	उत्पादकता (गेहूं समतुल्य उपज कि./है.)	उत्पादन की लागत; रु.	शुद्ध लाभ	रोजगार सृजन (आदमी दिवस)
फसल प्रणाली	0.625	10,335	72,156	93,198	150
डेयरी	3 गायें	30,758	3,30,482	1,61,638	365
बत्तख	35 नस्लें	3,818	30,679	30,411	26
मछली उत्पादन	0.1	5,693	53,792	37,288	26
कुक्कुट पालन	50 नस्लें	3,316	24,272	28,778	26
फल उत्पादन (किन्नों नींबू)	0.05	1,244	8,58	11,242	15
कृषि वानिकी	0.012	285	1,331	3,229	3
बायोगैस (इकाई)	KVIC (2 m^3)	563	4,000	5,000	12
Lkse	चार दीवारी क्षेत्र	625	2,000	8,000	5
			5,27,370	3,78,784	628
धान-गेहूं	1	9,860	78,630	68,200	148

जैव विविधता संरक्षण और पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं के लिए आईएफएस

एकीकृत कृषि प्रणाली कृषि-जैव विविधता सिद्धांतों पर आधारित है, जिसमें प्रवृत्ति के परिवर्तन की क्षमता है। आत्मनिर्भरता, कटाव नियंत्रण, कार्बन पृथक्करण, मृदा उर्वरता निर्माण, सूखा प्रतिरोध, कार्यात्मक जैव विविधता और जैविक उत्पादन प्रणालियों में इसकी उपयोगिता के कारण कृषि-जैव विविधता को फसल उत्पादन प्रणाली के रूप में उपयोग किया जा सकता है। कृषि-जैव विविधता न केवल स्थिरता, जोखिम न्यूनीकरण और जलवायु परिवर्तन के लिए मजबूत स्तंभ के रूप में कार्य करती है, बल्कि आधुनिक रूप सहित विभिन्न उत्पादों के लिए किसान परिवार की आवश्यकताओं की लगभग 70-80 प्रतिशत को पूरा करके स्वस्थ जीवन बनाए रखने के लिए पारिस्थितिकी तंत्र को बनाए रखती है। नवीकरणीय ऊर्जा रसायनों के कम उपयोग के कारण उत्पाद बेहतर गुणवत्ता के प्राप्त होते हैं। शुद्ध फसल या शुद्ध गहन पशुधन उत्पादन प्रणाली के रूप में खेतों की विशेषज्ञता को आधुनिकीकरण और विकास के लिए एक मुख्यधारा का मार्ग माना जाता है, जो जैव विविधता और पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं पर नकारात्मक प्रभाव डालता है।

समेकित कृषि प्रणाली में संसाधन पुनर्चक्रण

समेकित कृषि प्रणाली उपलब्ध संसाधनों के कुशल उपयोग द्वारा प्रणाली उत्पादकता बढ़ाने के लिए एक महत्वपूर्ण दृष्टिकोण है और विभिन्न भूमि-आधारित उद्यमों को एकीकृत करके किसानों की आय में वृद्धि करता है। कृषि उप-उत्पादों और कचरे को पुनर्चक्रण (रीसाइक्लिंग) करके उत्पादन लागत को कम करता है। प्रणाली संसाधन पुनर्चक्रण से एक गरीब परिवार के सदस्यों को स्वस्थ जीवन जीने के लिए संतुलित आहार सुनिश्चित करने और किसान को आत्मनिर्भर बनाने के लिए समेकित कृषि प्रणाली के विभिन्न घटकों की अन्योन्याश्रयता को दर्शाया गया है। वास्तव में, आईएफएस इस सिद्धांत के साथ काम करता है कि पद्धति में कोई अपशिष्ट नहीं है। एक उप-प्रणाली का अपशिष्ट दूसरे उप-प्रणाली का आगत बन जाता है। कचरे को धन के रूप में बदलने हेतु समेकित कृषि प्रणाली एक बेहतर पद्धति रही है। फसलों के उपोत्पाद जैसे; गेहूं का भूसा, मक्का का कड़वी, दलहन पुआल और अन्य फसल अवशेषों को डेयरी पशुओं को चारा के रूप में प्रयोग किए जाते हैं। गौशाला और खरपतवार कूड़े का उपयोग खाद बनाने के लिए किया जाता है और मूल्यवान खाद का उपयोग सब्जियों, फलों और अन्य फसलों के उत्पादन के लिए किया जाता है, जिससे उर्वरक लागत में कमी आती है। डेयरी का उप-उत्पाद, यानी गाय का गोबर, बायोगैस के लिए एक प्रमुख कच्चा माल बनता है। बायोगैस का पचा हुआ घोल फसलों की उत्पादकता बढ़ाने के साथ-साथ मूल्यवान खाद की आपूर्ति के लिए मछली पालन आहार का एक प्रमुख हिस्सा है। मुर्गीपालन और बत्तख का उप-उत्पाद, प्लवक की वृद्धि को बढ़ाने के लिए मछली पालन का एक महत्वपूर्ण घटक है, जो भूमि की उर्वरता को बढ़ाता है। फल, बाड़ की फसलें और सहजन (मोरिंगा) ने विविध पौष्टिक भोजन प्रदान किया जिससे किसान परिवार की पोषण सुरक्षा सुनिश्चित हुई है।

निष्कर्ष

‘‘आत्म निर्भर भारत (आत्मनिर्भर भारत)’’ आज के कृषि विकास का केंद्र बिंदु है। बाहरी (औद्योगिक) आदानों के दुष्चक्र को तोड़ने के लिए यह महत्वपूर्ण है। कृषि प्रणालियों को कृषि स्तर पर प्रमुख आदानों और संसाधनों का सृजन करके आत्मनिर्भर बनाने की आवश्यकता है। एकीकृत कृषि प्रणाली एक संभावित विकल्प है, जहां लगभग 70 प्रतिशत संसाधनों को कृषि प्रणालियों में उत्पन्न और पुनर्चक्रित किया जाना चाहिए। एक एकीकृत तरीके से कई कृषि उद्यमों को अपनाने से उच्च आय सृजन सुनिश्चित हो सकता है, संसाधन-उपयोग दक्षता में वृद्धि हो सकती है और कृषि उप-उत्पादों और कचरे का पुनर्चक्रण हो सकता है, इस प्रकार आत्मनिर्भर कृषि प्रणाली और किसानों की स्थाई आजीविका लाने में सहायता मिलती है। समेकित कृषि प्रणाली को अपनाना इस दिशा में सही दृष्टिकोण है और इसे एक प्रणाली उपागम में संस्थागत, विस्तार, नीति और विपणन हस्तक्षेपों के माध्यम से समर्थित किया जाना चाहिए। फसल, पशुधन, मछली, बागवानी और कृषि वानिकी को शामिल करते हुए उत्पादन प्रणाली किसान की आय को दोगुना करने का एक संभावित विकल्प है। ग्रामीण गरीबों के लिए पर्याप्त आय और रोजगार पैदा करने के लिए कृषि स्तर पर उपलब्ध संसाधनों के कुशल प्रबंधन के लिए एकीकृत कृषि प्रणाली अत्यंत महत्वपूर्ण है। वर्तमान उपलब्ध तकनीकी बदलाव के कारण नीति निर्माताओं, वैज्ञानिकों और विकास कर्मियों से प्रत्यक्ष दृष्टिकोण परिवर्तन की आवश्यकता होगी।

रागी की खेती : खाद्य सुरक्षा के लिए एक सतत समाधान

हरि सिंह मीना[1], विनिता मीना[2], दलवीर सिंह[1], मुकेश कुमार मीना[3], शैलेन्द्र कुमार झा[2] एवं लक्ष्मी एस[1]

[1]पादप कार्यिकी संभाग, [2]आनुवंशिकी संभाग एवं [3]सूत्रकृमि विज्ञान संभाग
भा.कृ.अनु.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110 012

परिचय

रागी को मंडुवा या अंग्रेजी में फिंगर मिलेट के रूप में भी जाना जाता है, जो एक प्रकार के मोटे अनाज की फसल है। अफ्रीका और एशिया में इसकी व्यापक रूप से खेती की जाती है। इसके शीर्ष उत्पादक देश युगांडा, भारत और नेपाल हैं। यह भारत में मुख्य रूप से दक्षिणी राज्यों जैसे कर्नाटक, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश और तेलंगाना में उगाई जाती है। भारत में रागी के कुल उत्पादन में इन राज्यों की हिस्सेदारी 70% से अधिक है।

रागी, अफ्रीका में युगांडा, केन्या, तंजानिया और इथियोपिया जैसे देशों के लोगों के लिए भोजन का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। स्वास्थ्य और पौष्टिकता की दृष्टि से ग्लूटेन-मुक्त रागी, काफी पौष्टिक अनाज है। यह कैल्शियम, आयरन और डाइटरी फाइबर का एक प्रमुख स्रोत है, जो हमारे आहार को संतुलित करने में एक अहम् भूमिका निभाती है। इस लेख में, हम रागी की वैज्ञानिक खेती उत्पादन एवं महत्व के बारे में चर्चा करेंगे।

रागी की खेती

जलवायु

रागी विकासशील देशों में छोटे किसानों के लिए एक महत्वपूर्ण फसल है क्योंकि इसे विभिन्न प्रकार की मिट्टी और जलवायु परिस्थितियों में उगाया जा सकता है। यह सूखा प्रतिरोधी फसल है। रागी की खेती उष्णकटिबंधीय और उप-उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में व्यापक रूप से की जाती है। यद्यपि, उचित वृद्धि और उपज के लिए मध्यम वर्षा, गर्म तापमान, अच्छी जल निकासी वाली मिट्टी और पर्याप्त धूप की आवश्यकता होती है।

बुआई का समय एवं बीज दर

सामान्य तौर पर, रागी की बुआई मानसून के मौसम में की जाती है, जो जून से अगस्त तक होती है। दक्षिण भारत में, इसे मानसून के पहले चरण अर्थात जून से जुलाई तक, उत्तरी भारत में इसे मानसून के दूसरे चरण अर्थात जुलाई से अगस्त तक तथा महाराष्ट्र, गुजरात और राजस्थान राज्यों में इसको मानसून के अंतिम चरण जैसे - अक्टूबर से नवंबर तक बोया जाता है। रागी के लिए बीज बुआई की अनुशंसित दर 3 से 4 किलोग्राम प्रति एकड़ है।

किस्में

- **जीपीयू 45 (GPU-45):** यह रागी की एक लोकप्रिय किस्म है जो कर्नाटक और आंध्र प्रदेश राज्यों में उगाई जाती है। यह अपनी उच्च उपज और अच्छी गुणवत्ता वाले अनाज के लिए जानी जाती है।
- **पीआर 202 (PR 202):** रागी की यह किस्म तमिलनाडु, कर्नाटक और आंध्र प्रदेश राज्यों में उगाई जाती है। यह अपनी प्रारंभिक परिपक्वता और उपज की अधिक मात्रा के लिए जानी जाती है।
- **इंदफ-5 (Induf-5):** रागी की यह किस्म महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश और गुजरात राज्यों में उगाई जाती है। यह अपनी अच्छी उपज और उच्च गुणवत्ता वाले दानों के लिए जानी जाती है।
- **सीओ-9 (CO-9):** तमिलनाडु राज्य में रागी की सीओ-9 (CO-9) किस्म को उगाया जाता है। यह अपनी उच्च उपज, कीटों और रोगों के प्रति सहनशीलता के लिए जानी जाती है।
- **के 1 (K 1):** रागी की 'के-1' किस्म केरल राज्य में उगाई जाती है। यह सूखे के प्रति अपनी सहनशीलता के लिए जानी जाती है।

❖ **वीआर 708 (VR 708):** रागी की यह किस्म उत्तर प्रदेश राज्य में उगाई जाती है। यह अपनी अधिक उपज और जलभराव के प्रति सहनशील के लिए जानी जाती है।

❖ **पीआर 202 (PR 202) और वीएल 145 (VL 145):** रागी की ये लोकप्रिय किस्में ओडिशा और छत्तीसगढ़ राज्यों में उगाई जाती हैं।

सिंचाई

जैसा कि पहले भी उल्लेख किया है कि रागी की फसल को विभिन्न प्रकार की जलवायु परिस्थितियों में उगाया जा सकता है फिर भी, रागी की उचित वृद्धि और विकास के लिए अन्य फसलों की तरह, पर्याप्त पानी की आवश्यकता होती है। सिंचाई की मात्रा, क्षेत्र, मिट्टी के प्रकार और मौसम की स्थिति के आधार पर भिन्न हो सकती है। जिन क्षेत्रों में जहां मानसून के मौसम में पर्याप्त वर्षा होती है, वहां पर इसे बिना किसी सिंचाई के वर्षा आधारित फसल के रूप में उगाया जा सकता है। तथापि, उन क्षेत्रों में जहां वर्षा अनियमित या अपर्याप्त होती है, वहां इसकी उचित विकास और उपज प्राप्त करने के लिए अत्तिरिक्त सिंचाई की आवश्यकता होती है। जिन क्षेत्रों में सिंचाई की सुविधा उपलब्ध है, वहां रागी की सिंचित फसल के रूप में खेती की जाती है। सामान्य तौर पर, रागी के लिए विकास के प्रारंभिक समय के दौरान प्रत्येक 10 से 15 दिनों के एवं विकास के बाद के चरणों के दौरान 20 से 25 दिनों के अंतराल पर सिंचाई की आवश्यकता होती है।

खाद एवं उर्वरक

रागी की उचित पैदावार के लिए जैविक खाद और उर्वरकों का प्रयोग लाभदायक होता है। जैविक खाद की अनुशंसित मात्रा 5 से 7.5 टन/हैक्टेयर है। जबकि, पौधों की उचित वृद्धि एवं विकास के लिए 40-50 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 20-25 कि.ग्रा. फॉस्फोरस और 20-25 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टेयर की आवश्यकता होती है। यह ध्यान रखना भी जरुरी है कि उर्वरक की मात्रा मिट्टी के विश्लेषण के आधार पर की जाए क्योंकि उर्वरक के अत्यधिक उपयोग से मिट्टी के क्षरण और पर्यावरण प्रदूषण होने का खतरा बना रह सकता है।

खरपतवार प्रबंधन

रागी की फसल में उचित खरपतवार नियंत्रण हेतु समय-समय पर निराई, गुड़ाई करनी चाहिए और शाकनाशियों (हर्बिसाइड्स) का उपयोग कर विभिन्न खरपतवारों (वीड्स) को नष्ट कर देना चाहिए, क्योंकि, खरपतवार पोषक-तत्वों, पानी और प्रकाश के लिए फसल के साथ प्रतिस्पर्धा करते हुए फसल की उपज पर बुरा प्रभाव डालते है अर्थात उपज की मात्रा को बहुत कम कर देते हैं।

कीट एवं रोग प्रबंधन

'कीट और रोग प्रबंधन' रागी की खेती का एक महत्वपूर्ण पहलू है। कीट और रोग फसल की उपज और गुणवत्ता को काफी कम कर देते हैं। रागी को लगने वाले कुछ सामान्य कीट और रोगों में ब्लास्ट, स्मट, स्टेम बोरर, शूट फ्लाई और एफिड्स शामिल हैं। कीटों और रोगों के संकेतों के लिए फसल की नियमित निगरानी करना और उन्हें नियंत्रित करने के लिए उचित उपाय करना बहुत ही आवश्यक होता है। फसल पर कीट और रोग के प्रभाव को नियंत्रित करने के लिए विभिन्न कीट प्रबंधन क्रियाविधि जैसे कि प्रतिरोधी किस्मों का उपयोग, जैविक नियंत्रण और रासायनिक नियंत्रण विधियों का इस्तेमाल भी बहुत लाभदायक रहता है।

फसल कटाई एवं उपज

रागी आमतौर पर बुआई के लगभग 3-4 महीनों में कटाई हेतु तैयार हो जाती है, जब रागी की फसल पूरी तरह से पक कर सुनहरे भूरे रंग की हो जाए तभी कटाई की जानी चाहिए। फसल की समय पर कटाई एवं कटाई उपरांत फसल के उचित भंडारण करने से उत्पाद और उसकी गुणवत्ता को बनाए रखने में मदद मिलती हैं।

रागी की खेती में उच्च पैदावार प्राप्त करने के लिए किसानों को उचित बीज दर, समय पर बुआई, उर्वरक, सिंचाई, खरपतवार प्रबंधन, कीट और रोग नियंत्रण जैसी अच्छी कृषि पद्धतियों का पालन करना चाहिए। भारत में औसतन रागी की उपज लगभग 1.5 से 2.5 टन/हैक्टेयर है, लेकिन यह 1 से 4 टन/हैक्टेयर तक हो सकती है।

रागी के उत्पाद

❖ **रागी का आटा:** रागी के दानों को बारीक पीसकर आटा बनाया जाता है जिसका इस्तेमाल ब्रेड, रोटी, डोसा, इडली और दलिया जैसे कई तरह के व्यंजन बनाने के लिए किया जाता है। रागी के दानों में ग्लूटीन की मात्रा के कम होने की वजह से यह सीलिएक रोग या ग्लूटीन असहिष्णुता वाले रोगों के लिए भोजन का एक अच्छा विकल्प है।

- **रागी माल्ट:** रागी के आटे से बना एक पौष्टिक और स्वादिष्ट पेय रागी माल्ट है। इसे पानी में मिलाकर धीमी आंच पर गाढ़ा होने तक पकाकर तैयार किया जाता है। रागी माल्ट कैल्शियम, आयरन और आहार फाइबर का एक अच्छा स्रोत है, जो इसे बढ़ते बच्चों, गर्भवती महिलाओं और स्तनपान कराने वाली माताओं के लिए एक उत्कृष्ट पेय बनाता है।

- **रागी कुकीज़:** रागी कुकीज में मीठेपन हेतु रागी के आटे में शहद या गुड़ मिलाकर इसे बनाया जाता है। रागी कुकीज़ ऊर्जा का एक अच्छा स्रोत है और वजन कम करने वाले लोगों के लिए एक उपयुक्त नाश्ता है।

- **रागी इडली मिक्स:** रागी और चावल के आटे में उड़द की दाल और अन्य सामग्री के साथ मिलाकर रागी इडली मिक्स बनाया जाता है। रागी इडली प्रोटीन, फाइबर और अन्य पोषक तत्वों का एक अच्छा स्रोत है। यह दैनिक रुप से इडली का एक वैकल्पिक प्रकार है।

- **रागी नूडल्स एवं रागी ब्रेड:** रागी नूडल्स को रागी के आटे से बनाया जाता है जो नियमित नूडल्स का एक वैकल्पिक प्रकार है। यह सभी उम्र के लोगों के लिए पौष्टक भोजन का एक स्वस्थ विकल्प है क्योंकि इसमें फाइबर, प्रोटीन और अन्य पोषक तत्व भरपूर मात्रा में पाये जाते हैं।

- **रागी पापड़:** रागी से बने पापड़ दक्षिण भारत का एक लोकप्रिय नाश्ता है। इन्हें रागी के आटे में मसाले, नमक और पानी मिलाकर बनाया जाता है।

रागी का महत्व

- **पोषक मूल्य:** रागी कैल्शियम, आयरन, प्रोटीन और फाइबर जैसे पोषक तत्वों का एक प्रमुख स्रोत है। इसमें आवश्यक अमीनो अम्ल, विटामिन और खनिज जैसे फॉस्फोरस, पोटेशियम और मैग्नीशियम भी होते हैं। रागी ग्लूटीन-मुक्त (रहित) होने के कारण यह ग्लूटीन से एलर्जी वाले व्यक्तिओं के लिए एक उपयुक्त अनाज है।

- **रक्त-शर्करा प्रबंधन:** रागी मधुमेह वाले लोगों या उन लोगों के लिए उपयुक्त भोजन है जिन्हें मधुमेह होने का खतरा है, क्योकि इसमें ग्लाइसेमिक की कम मात्रा होने के कारण यह शुगर को रक्तप्रवाह में धीरे-धीरे छोड़ता है, जिससे कि रक्त शर्करा के स्तर को नियंत्रित करने में मदद मिलती है।

- **वजन प्रबंधन:** रागी मनुष्य के बढ़ते वजन को नियंत्रित करने के लिए एक बेहतरीन विकल्प है, क्योंकि इसमें कम वसा एवं कम कैलोरी होने के साथ-साथ ट्रिप्टोफैन भी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है जो भूख को कम करने और वजन को नियंत्रित करने में काफी सहायक होता है।

- **अस्थी स्वास्थ्य:** रागी, बच्चों और महिलाओं के लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण है, जिन्हें ऑस्टियोपोरोसिस होने का खतरा होता है, क्योकि कैल्शियम का यह एक प्रमुख स्रोत है, जो हड्डियों और दांतों के स्वस्थ विकास के लिए भी आवश्यक होता है।

- **पाचन स्वास्थ्य:** रागी में फाइबर सामग्री के अधिक होने के कारण यह कब्ज को रोकने और नियमित मल-त्याग को बढ़ावा देकर पाचन स्वास्थ्य को बढाने में मदद करती है।

- **हृदय स्वास्थ्य:** रागी में, कोलेस्ट्रॉल और सोडियम से रहित होने के साथ-साथ पोटेशियम के उपयुक्त मात्रा में पाए जाने के कारण यह हृदय रोग और रक्तचाप के जोखिम को कम करने में मदद करती है।

पोषण तत्वों से भरपूर रागी की फसल

रागी के आटे से तैयार पापड़

सोयाबीन में बीज उत्पादन और कटाई उपरांत की तकनीकें

मनीषा सैनी, अक्षय तालुकदार, अंबिका राजेंद्रन एवं एस. के. लाल

आनुवंशिकी संभाग

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110 012

चित्र-1. भा.कृ.अनु प.-भा.कृ.अनु सं. के खेत में लहराती हुई सोयाबीन की फसल

सोयाबीन भारत की प्रमुख तिलहन फसलों में से एक है और इसमें पाए जाने वाले उच्च गुणवत्ता वाला सोया प्रोटीन तथा अन्य स्वास्थ्यवर्धक तत्व जो मानव शरीर की विभिन्न शारीरिक और मानसिक आवश्यकता को पूरी करने कि क्षमता रखता है। इसमें सुप्रचारित पौष्टिक और औषधीय लाभों से इसकी भविष्य में बढ़ती उन्नत उत्पादन की प्रबल संभावनाओं को जन्म दे रहा है, परंतु सोयाबीन की उन्नत किस्मों के बीज की उपलब्धता इसकी लगातार बढ़ती हुई मांग को पूरा करने में असमर्थ है। उन्नत किस्मों का बीज उत्पादन बहुत से कारकों पर निर्भर करता है तथा इन कारकों के प्रबल प्रबंधन और उपयुक्त उपायों से उन्नत किस्मों का बीज उत्पादन किया जा सकता है। जिससे भविष्य में सोयाबीन किसानों की आय बढ़ाने का एक अच्छा स्रोत बन सकती है।

परिचय

कृषि में अन्य कारकों के साथ- साथ उन्नत किस्म का बीज एक बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता हैऔर किसानों द्वारा फसलों का उत्पादन उन बीजों की गुणवत्ता पर निर्भर करता है जो वे उपयोग करते हैं। जिससे कृषि की परिस्थितियां निर्धारित होती हैं। हालांकि, किसी भी फसल में उत्पादकता में अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए, उन्नत किस्मों और बेहतर एकीकृत फसल प्रबंधन प्रथाओं दोनों के उपयोग की आवश्यकता है और ये न केवल व्यक्तिगत रूप से उत्पादकता बढ़ाने में योगदान करते हैं, बल्कि सहक्रियात्मक रूप से भी कार्य करते हैं।

सोयाबीन भारत की एक प्रमुख तिलहन फसल है और यह लगभग 12 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र में फैली हुई है। भारत में सोयाबीन की खेती के अभूतपूर्व विस्तार के कारण, इसके बीज की मांग में अत्यधिक वृद्धि हुई है। वर्तमान क्षेत्र के लिए लगभग 45 लाख क्विंटल बीज की आवश्यकता है जबकि गुणवत्तायुक्त बीज की उपलब्धता मात्र 3.7 लाख क्विंटल है। प्रतिस्थापन बीज की प्रतिशत दर लगभग आठ प्रतिशत है। एआईसीआरपी के तत्वावधान में सोयाबीन का औसत वार्षिक प्रजनक बीज

उत्पादन लगभग 16 हज़ार क्विंटल है। सक्रिय बीज श्रृंखला में लगभग 35-40 किस्में हैं परंतु ये बढती हुई बीज की मांग को पूरा करने में असमर्थ है। सोयाबीन के बीज उत्पादन में कई ऐसी समस्याएं आती हैं जैसे कि सोयाबीन के बीज को सबसे कम भंडारण करने योग्य समूह में वर्गीकृत किया गया है और इसकी अंतर्निहित कम जीवन क्षमता के अलावा, सोयाबीन बीज प्रसंस्करण और परिवहन के दौरान यांत्रिक क्षति के प्रति अत्यंत सवेदनशील होता है। इसके बीज की संवेदनशीलता इतनी ज्यादा होती है कि कटाई से पहले ही यह खेत के ख़राब मौसम का भी इस पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ताता है। अत: ये कारक बीज के अंकुरण और वृद्धि शक्ति को गंभीर रूप से प्रभावित करते हैं और कई बार अगली बुआई तक न्यूनतम अंकुरण मानक (70 प्रतिशत) को बनाए रखना भी मुश्किल हो जाता है। सोयाबीन में बीज वृद्धि अनुपात कम होता है और इसके साथ यह उच्च बीज गुणवत्ता वाले बीज की उपलब्धता बढ़ाने में एक प्रमुख बाधा है। इसके अलावा बड़ी मात्रा में या तो कम आकार या अन्य विशिष्ट किस्मों (ओडीवी) की उपस्थिति के आधार पर अस्वीकार किए जाने की संभावना है। किसानों को आवश्यक मात्रा और सही कीमत पर उन्नत किस्मों के बीज उपलब्ध कराने की जिम्मेदारी सार्वजनिक क्षेत्र की बीज एजेंसियों की होती है, लेकिन दुर्भागायवश, सार्वजनिक क्षेत्र की बीज एजेंसियां तिलहन फसलों के उन्नत किसमों के अच्छे गुणवत्ता वाले बीज की मांग को पूरा करने में असफल रहती हैं। बीज की मांग और बीज आपूर्ति के बीच एक बड़ा अंतर बना हुआ है, जिसके परिणामस्वरूप सोयाबीन कि उन्नत किस्मों को कम क्षेत्र में लगाया जाता है जिससे इसमें कम बीज वृद्धि अनुपात से समस्या और भी बढ़ जाती है। जब तक उद्यमी, प्रगतिशील किसान और गैर सरकारी संगठन औपचारिक/अनौपचारिक बीज उत्पादन करने के लिए आगे नहीं आते, तब तक यह स्थिति ऐसे ही बने रहने की संभावना है। इस लेख के माध्यम से हमारा उद्देश्य सोयाबीन के बीज उत्पादन और फसल की कटाई के बाद की क्रियाओं के बारे में जानकारी प्रदान करना है।

सोयाबीन के बीज में उच्च गुणवत्ता बनाए रखने के लिए आवश्यक कारक

- **पीढ़ियों की सीमा:** सामान्यत: सोयाबीन की किस्मों के बीज की वृद्धि को आधार बीज के चरण के बाद दो पीढ़ियों तक ही सीमित किया जाना चाहिए।
- **प्रामाणिक बीज स्रोत:** बीज का मूल भंडार मान्यता प्राप्त स्रोत से प्राप्त किया जाना चाहिए।
- **भूमि का इतिहास:** जिस भूखंड पर बीज का उत्पादन किया जाना है, उस पर सोयाबीन की कोई अन्य किस्म नहीं उगाई जानी चाहिए और यदि संभव हो तो उसी किस्म को तब तक नहीं उगाना चाहिए जब तक कि पिछले उत्पादन को बीज के लिए प्रमाणित न किया गया हो। स्वैच्छिक पौधे सोयाबीन के टूटने के लिए अतिसंवेदनशील होते हैं जो यांत्रिक मिश्रण और बाद की फसलों में बीज की गुणवत्ता में गिरावट का कारण बन सकते हैं।
- **पृथक्करण :** संकर परागण और यांत्रिक मिश्रण के किसी भी संभावित अवसर से बचने के लिए, सोयाबीन की विभिन्न किस्मों को उगाने वाले भूखंडों को कम से कम 3 मीटर की दूरी पर अलग रखा जाना चाहिए।
- **क्षेत्र निरीक्षण**: यह सुनिश्चित करने के लिए कि उत्पादन आवश्यक क्षेत्र मानकों के अनुरूप है, अधिकृत संस्था / निगरानी टीम द्वारा विशेष रूप से फूल और फली परिपक्वता के समय दो निरीक्षण किए जाने चाहिए। बीज फसल की कटाई से पहले अवांछित और रोगग्रस्त पौधों की पूरी तरह से कटाई की जानी चाहिए।
- **कटाई और गाहने वाली मशीनरी (थ्रेशिंग) की सफाई:** सोयाबीन के बीज के यांत्रिक मिश्रण से बचने के लिए, यह आवश्यक है कि फसल की कटाई और कटाई के बाद के कार्यों को शुरू करने से पहले फसल काटने की मशीन (हार्वेस्टर), गाहने वाला (थ्रेशर), गाहने वाली जगह (थ्रेशिंग क्षेत्र), भंडारण बैग, वाहक पट्टा (कन्वेयर बेल्ट) और मिट्टी आदि को अच्छी तरह से साफ कर लिया जाए।

बीज की गुणवत्ता को प्रभावित करने वाले कारक

सोयाबीन में अंकुरण और अंकुर शक्ति के साथ-साथ गुणवत्ता के विभिन्न गुणों से संबंधित समस्याएं आनुवंशिक और कई अन्य कारणों से उत्पन्न होती हैं जैसे सोयाबीन बीज को संभालने में अनुभव की कमी, गुणवत्ता के साथ समझौते करने की कीमत पर बड़े पैमाने पर बीज प्राप्त करने की इच्छा, बहुत जल्दी या देर से कटाई, बीज भंडारण की खराब स्थिति, कटाई के दौरान प्रतिकूल मौसम आदि। सोयाबीन बीज की प्रकृति के कारण, जिसे खराब

प्रजनन इकाई के रूप में स्थान दिया गया है, उपरोक्त कारक कभी-कभी इतने महत्वपूर्ण हो जाते हैं कि सोयाबीन बीज में बीज की जीवन क्षमता और अंकुरण में काफी कमी आ जाती है।

पर्यावरण की स्थिति और परिपक्वता: बीज की परिपक्वता से पूर्व, जब बीज अधिकतम नमी खो देता है, और फसल कटाई तक पहुंचती है तो, जलवायु परिस्थितियां बीज की अंकुरण क्षमता को बनाए रखने के लिए बहुत महत्वपूर्ण होती हैं। इस अवधि के दौरान, जब बीज परिपक्वता के बाद के चरण से गुजर रहा होता है, वैकल्पिक गीलापन और सूखापन बीज के अपक्षय के रूप में माना जाता है, जिसके परिणामस्वरूप बीज की जीवन क्षमता और दीर्घकालिकता में भारी कमी आती है। हालांकि, क्षति की मात्रा विभिन्न पौधे में भिन्न-भिन्न होती है। सामान्यत: जल्दी परिपक्व होने वाली किस्म में अपक्षय के नुकसान की संभावना अधिक होती है। मौसम की मार से होने वाले नुकसान की स्थितियों को नियंत्रित करके और जब बीज कि नमी 15-17 प्रतिशत पर पहुंच जाने पर कटाई करके नुकसान को कम किया जा सकता है।

उच्च आनुवंशिक शुद्धता वाले प्रजनक बीज की उपलब्धता संपूर्ण बीज उत्पादन कार्यक्रम की सफलता को निर्धारित करती है। मूल बीज आनुवंशिक रूप से इतना शुद्ध होना चाहिए और यह सुनिश्चित कर सके कि अगली पीढ़ी यानी नींव बीज कि आनुवंशिक शुद्धता के निर्धारित मानकों की पुष्टि कर सके। नाभिक और प्रजनक बीज के उत्पादन की निगरानी एक योग्य पादप प्रजनक द्वारा व्यक्तिगत रूप से की जाती है। जबकि प्रजनक बीज नाभिक बीज की संतान है, नाभिक बीज स्वयं आनुवंशिक रूप से शुद्ध और एकल पौधे संतानों को दर्शाता है। आनुवंशिक शुद्धता के उच्चतम मानदंडों को केवल सख्त और एक समान बीज उत्पादन तकनीकों द्वारा ही वहन किया जा सकता है।

बीज उत्पादन की तकनीकें

बीज स्रोत

बीज उत्पादन के लिए उचित वर्ग के बीज का प्रयोग करना चाहिए। नींव बीज के लिए अभिजनक बीज और प्रमाणित बीज उत्पादन के लिए नींव बीज का उपयोग किया जाना चाहिए।

मौसम, रोपण का समय,पृथक्करण

सोयाबीन मुख्य रूप से भारत में खरीफ की फसल के रूप में उगाई जाती है। उपयुक्त रोपण तिथियां वे होती हैं जो त्वरित उद्भव और अनुकूलित किस्मों के लिए सबसे लंबी वनस्पति अवधि प्रदान करता है। सिंचाई के साथ मानसून पूर्व रोपण के लिए सबसे उपयुक्त समय जून का दूसरा सप्ताह है और मानसून की शुरुआत के साथ रोपण के लिए जून के अंतिम सप्ताह से जुलाई के दूसरे सप्ताह तक का समय है। मध्य और दक्षिणी क्षेत्रों में रोपण जुलाई के पहले सप्ताह तक पूरा कर लेना चाहिए, जबकि उत्तरी क्षेत्र में, उपयुक्त समय जुलाई के तीसरे सप्ताह तक बढ़ाया जा सकता है।

सोयाबीन एक अत्यधिक स्व-परागण वाली फसल है जिसका संकरण एक प्रतिशत से भी कम है अत: इसके लिए न्यूनतम पृथक्करण दूरी तीन मीटर तक होनी चाहिए।

बीज दर, कृषि प्रबंधन

बीज दर सीधे पौधों की जनसंख्या से संबंधित है जो उपज की स्थिति को निर्धारित करती है। सोयाबीन की फसल के लिए केंद्रीय क्षेत्रों में अनुशंसित पौधों की आबादी 4.5 लाख प्रति हैक्टेयर है और उत्तरी क्षेत्रों में यह 4 लाख प्रति हैक्टेयर है। इस आबादी को प्राप्त करने के लिए बीज दर, बीज सूचकांक और अंकुरण क्षमता पर निर्भर करती है। छोटे, मध्यम और मोटे बीज वाली किस्मों के लिए क्रमशः 65, 80 और 100 किग्रा प्रति हैक्टेयर की आवश्यकता होती है। सामान्यतः बीज सूचकांक में हर एक ग्राम की वृद्धि के लिए बीज दर में 5 किग्रा की वृद्धि की जानी चाहिए। हालांकि, बीज बोने के लिए 3.2 से 3.6 लाख प्रति हैक्टेयर की आबादी उपयुक्त है। इसलिए, वाणिज्यिक बीज दर का केवल 80 प्रतिशत उपयोग करना चाहिए। ये बीज दरें 70 प्रतिशत अंकुरण पर आधारित होती हैं, बीज दर को मूल बीज के वास्तविक अंकुरण प्रतिशत के अनुसार समायोजित किया जा सकता है।

भूमि

बीज उत्पादन के लिए खेत अच्छी तरह से समतल और सूखा होना चाहिए। खेत खरपतवार और अवांच्छित पौधों से मुक्त होना चाहिए। खेत की तैयारी के बाद, रोपण से पहले अनुशंसित बुनियादी उर्वर अनुसूची लागू की जानी चाहिए।

बुआई

बीजों को सड़न से बचाने और पौधे के अच्छे स्वास्थ्य को सुनिश्चित करने के लिए बीजों को थिरम + कार्बेन्डाजिम (2 : 1) @ तीन ग्राम/किलोग्राम बीज से उपचारित करना चाहिए। इसके

बाद राइजोबियम का टीका लगाया जाना चाहिए। बीज उत्पादन खेत को सीड ड्रिल से 45 सेंटीमीटर की दूरी पर पंक्तियों में एक साथ बोया जाता है। बीज को 3-5 सेमी की गहराई पर बोया जाना चाहिए। भारी और/या गीली मिट्टी के लिए कम गहराई का सुझाव दिया जाता है और सूखी/हल्की मिट्टी के लिए अधिक गहराई का चयन किया जाता है। पौधों के निरीक्षण के लिए प्रत्येक 18-20 पंक्तियों के बाद एक मीटर का अंतर बनाए रखा जाता है। खरपतवार प्रबंधन, अंतर-सांस्कृतिक संचालन, रोग और कीट प्रबंधन जैसी कृषि संबंधी प्रथाएं स्थानीय सिफारिशों के अनुसार किया जाना चाहिए।

क्षेत्र निरीक्षण के चरण और अवांछित पौधों की पहचान

बीज उत्पादन के खेत का निरीक्षण तीन चरणों में किया जाना चाहिए। पहला निरीक्षण पुष्प आने की अवस्था में, दूसरा फली भरने पर और तीसरा परिपक्वता अवस्था में किया जाना चाहिए। अवांछित पौधों की पहचान किस्म की विशेषताओं के आधार पर की जानी चाहिए और समय रहते उन्हें खेत से हटा देना चाहिए। अवांछित पौधों की पहचान पादप प्रजनक की देखरेख में की जानी चाहिए और रोगग्रस्त पौधों को खेत से हटा देना चाहिए।

कटाई और प्रसंस्करण के दौरान सावधानियां

सोयाबीन की फली जब अपना हरा रंग खोकर हल्का भूरा रंग प्राप्त कर लेती है और बीज कठोर हो जाते हैं तब यह फसल परिपक्व हो जाती है और कटाई के लिए तैयार हो जाती है। इस अवस्था में, बीज गिरने और खेत को नुकसान से बचाने के लिए फसल की तत्काल कटाई की जानी चाहिए। जब सोयाबीन बीज में नमी का स्तर 13 प्रतिशत से कम होता है, कटाई के दौरान यांत्रिक क्षति होने की उच्च संभावना होती है। इसलिए बीज को अत्यधिक शुष्कन से बचना चाहिए और यदि फसल को हाथ से काटना हो तो, इस फसल को तब काटें जब बीज की नमी 17-18 प्रतिशत हो। कुछ दिनों तक सूखने के बाद जब बीज की नमी 13-15 प्रतिशत हो जाए, तो फसल को या तो ट्रैक्टर से अथवा डंडे से हलके से पीटना चाहिए। सीधे संयोजन के लिए, बीज की नमी का स्तर लगभग 14 प्रतिशत होना चाहिए। संपूर्ण प्रक्रिया को सावधानी पूर्वक करना चाहिए ताकि बीज को कोई नुकसान न पहुंचे।

प्रसंस्करण 12-13 प्रतिशत बीज की नमी पर ही किया जाना चाहिए। सोयाबीन के बीज के लिए एक एयर स्क्रीन क्लीनर सबसे प्रभावी है। प्रसंस्करण के लिए अनुशंसित छलनी का आकार ऊपरी स्क्रीन के लिए 8 मि. मी. गोल और नीचे की स्क्रीन के लिए 4 मि. मी. आयताकार है।

पैकेजिंग, लेबलिंग और भंडारण

भंडारण करने से पहले, बीज को 8-9 प्रतिशत नमी की मात्रा तक सुखाना चाहिए और 30-40 किलोग्राम क्षमता के नमी रोधी बैग में पैक किया जाना चाहिए। सोयाबीन के भंडारण के लिए पॉलीलाइन (400 गेज) जूट कैन्वस का थैला या एचडीपीई का थैला सबसे उपयुक्त है और इन्हें सही तरीके से लेबल और सिला जाना चाहिए। सोयाबीन बीज उच्च तापमान और उच्च आद्रता की स्थितियों में तेजी से खराब हो जाते हैं, इसलिए विशेष भंडारण की स्थिति जैसे कि ठंडी और सूखी जगह पर भंडारित करें तथा जहां तापमान 20 से 27 डिग्री सेल्सियस और सापेक्षिक आद्रता 50 से 60% हो। इस तापमान पर भंडारण कीट और फफूंदी की गतिविधि काफी कम हो जाती है और बीजों को 8 से 9 महीने तक सुरक्षित रूप से संग्रहीत किया जा सकता है।

मूंगबीन की नवीनतम किस्में

सोमा गुप्ता, हर्ष कुमार दीक्षित, ज्ञान प्रकाश मिश्रा, मुरलीधर अस्की एवं धर्मेंद्र सिंह

आनुवंशिकी संभाग

भा.कृ.अनु.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110 012

मूंगबीन (विग्ना रेडिएटा (एल) विल्कज़ेक) विग्ना समूह की एक प्रमुख दलहनी फसल है। कुपोषण उन्मूलन, मिट्टी की उर्वरा शक्ति को सुदृढ़ करने तथा भारतीय कृषि में विविधता लाने में मूंगबीन की विशिष्ट भूमिका है। मूंगबीन एक बहुमुखी फसल है जिसे विविध ऋतुओं (ख़रीफ़, ग्रीष्म, वसंत और रबी) में लगाया जाता है। मूंगबीन का अधिकतम क्षेत्र ख़रीफ़ मौसम की खेती के अंतर्गत आता है, जिसमें ज्वार, बाजरा, मक्का, कपास, अरंडी, अरहर आदि के साथ इसकी अंतर-फसल बहुत लोकप्रिय है। यद्यपि पिछले दो दशकों में, कम अवधि, प्रकाश तथा ताप-असंवेदनशील और रोग प्रतिरोधी किस्मों के विकास ने ग्रीष्म, वसंत और रबी ऋतुओं में भी मूंग की खेती को प्रोत्साहन दिया है। उत्तर भारत में वसंत/ग्रीष्म ऋतु के दौरान मूंग एकमात्र फसल या अंतर-फसल के रूप में, जबकि दक्षिणी प्रायद्वीप इलाकों में रबी मौसम के दौरान परती धान के रूप में मूंग की खेती को लोकप्रियता मिली है।

भारत में मूंग की खेती लगभग 5 मिलियन हैक्टेयर क्षेत्रफल में की जाती है, जिसका अधिकांश भाग राजस्थान, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, कर्नाटक, उड़ीसा और बिहार राज्यों में स्थित है। पिछले लगभग डेढ़ दशकों में मूंग के उत्पादन में 182.14% की वृद्धि हुई है, जिससे कुल उत्पादन 1.12 मिलियन टन (2006-07) से बढ़कर 3.16 मिलियन टन (2021-22) हो गया है। भारत में पिछले दशक के दौरान मूंग की गैर-पारंपरिक, विशेष रूप से ग्रीष्म, वसंत और परती धान की खेती के अंतर्गत आने वाले क्षेत्रों और उत्पादन में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। गैर-पारंपरिक खेती के अंतर्गत मूंग के क्षेत्रफल में 2006-07 में 6.5 लाख हैक्टेयर से 2020-21 में 13.00 लाख हैक्टेयर की वृद्धि हुई है। इस अवधि के दौरान उत्पादन 2006-07 में 2.8 लाख टन से बढ़कर 2020-21 में 10.88 लाख टन हो गया। ख़रीफ़ की तुलना में गैर-पारंपरिक खेती के तहत मूंग की उत्पादकता भी तुलनात्मक रूप से बेहतर रही है। उत्पादकता में हुई इस वृद्धि ने भारत में मूंग की उत्पादकता के राष्ट्रीय औसत को 2010-11 के 512 किग्रा/हैक्टेयर से बढ़ाकर 2020-21 के दौरान 601 किग्रा/हैक्टेयर कर दिया है। मूंग की गैर-पारंपरिक खेती (वसंत, ग्रीष्म, रबी और परती धान की खेती) लगभग 1.5 मिलियन हैक्टेयर क्षेत्रफल में होती है। राजस्थान मूंग की खेती में एक अग्रणी राज्य के रूप में उभरा है, जो देश के कुल क्षेत्रफल का 46.0% योगदान देता है। इस राज्य में मूंग की खेती का क्षेत्रफल 1.64 मिलियन हैक्टेयर (2016-17) से बढ़कर 2.56 मिलियन हैक्टेयर (2021-22) हो गया है।

ग्रीष्मकालीन मूंग मुख्य रूप से उत्तरी और पूर्वी भारत के सिंचित इलाकों में धान -गेहूं फसल चक्र में सह-नकदी फसल के रूप में उगाई जाती है। ग्रीष्मकालीन मूंग की फसल को उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, मध्य प्रदेश और गुजरात में लोकप्रिय बनाने के लिए विशेष प्रयास किए गए हैं। वर्ष 2016-21 के दौरान, मूंग की 30 से अधिक उच्च उपज वाली किस्मों को विभिन्न क्षेत्रों के लिए अधिसूचित किया गया है। आई पी एम 205-7 (विराट), एस एम एल 832 और शिखा (आई पी एम 410-3) ग्रीष्मकालीन खेती के अंतर्गत विभिन्न क्षेत्रों के लिए उपयुक्त हैं। हाल ही में जारी की गई सोर्या और एमएच 1142 किस्में उत्तर पूर्वी एवं उत्तर पश्चिमी मैदानी क्षेत्र में ख़रीफ़ की खेती के लिए उपयुक्त है। गुजरात और मध्य प्रदेश के नहर कमांड क्षेत्रों में अतिरिक्त फसल के रूप में और तमिलनाडु के कावेरी बेसिन के नए डेल्टा क्षेत्रों में ग्रीष्मकालीन मूंग उगाई जा सकती है। धान-धान फसल प्रणाली के लिए यह एक अच्छा विकल्प है।

मूंग में कम अवधि, ताप-असंवेदनशील और पीली मोज़ेक प्रतिरोधी किस्मों के विकास में उल्लेखनीय प्रगति हुई है। ये किस्में ख़रीफ़, वसंत और ग्रीष्मकालीन खेती तथा विभिन्न फसल प्रणालियों में आसानी से समायोजित की जा सकती है। उच्च उपज देने वाली पीली मोज़ेक वायरस प्रतिरोधी किस्में, जैसे आईपीएम 02-3, विराट, सम्राट, एसएमएल 668, एसएमएल

832 और पंत मूंग 5 के विकास और लोकप्रियता ने देश के उत्तरी भागों में मूंग की वसंत/ग्रीष्मकालीन खेती को सफल बनाया है। देश के दक्षिणी भागों में मूंग के क्षेत्रफल और उत्पादन में वृद्धि मुख्यतः परती धान के तहत इसकी रबी में खेती तथा चूर्णिल आसिता प्रतिरोधी किस्मों की उपलब्धता के कारण हुई है। अब तक मूंग की 186 से अधिक किस्मों को विभिन्न परिस्थितियों के लिए अनुशंसित किया गया है। इन किस्मों में प्रमुख जैविक और अजैविक तनावों के प्रति अंतर्निहित प्रतिरोध/सहिष्णुता है। इनमें से कई किस्में किसानों के बीच लोकप्रिय हैं और बीज श्रृंखला में प्रमुखता पा रही हैं। इनमें से मूंग की 52 किस्में राष्ट्रीय बीज श्रृंखला में आती हैं।

पिछले दशक में विकसित की गई मूंगबीन की उन्नत किस्में

अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना द्वारा जारी की गई किस्में

ग्रीष्मकालीन खेती के लिए:

एमएच 421 : यह किस्म चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार द्वारा विकसित की गई है। इस किस्म को 2012 में अधिसूचित और जारी किया गया था। यह उत्तर पश्चिमी मैदानी क्षेत्र में खेती के लिए उपयुक्त है। इसकी औसत उपज क्षमता 10-12 क्विंटल/हैक्टेयर है। यह किस्म 60 दिनों में परिपक्व होती है और पीले मोज़ेक वायरस के लिए प्रतिरोधी है।

आईपीएम 410-3 (शिखा) : यह किस्म भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान, कानपुर द्वारा विकसित की गई है। इस किस्म को 2016 में अधिसूचित और जारी किया गया था। यह किस्म उत्तर पश्चिमी मैदानी क्षेत्र और मध्य क्षेत्र के लिए उपयुक्त है। इसकी औसत उपज 11-12 क्विंटल/हैक्टेयर है। फसल 65-70 दिनों में परिपक्व होती है और पीले मोज़ेक वायरस के लिए प्रतिरोधी है।

आईपीएम 205-7 (विराट) : इस किस्म को भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान, कानपुर द्वारा विकसित किया गया है। इसे 2016 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह किस्म सभी क्षेत्रों के लिए अनुशंसित है। इसकी औसत उपज 10-11 क्विंटल/हैक्टेयर है। परिपक्वता अवधि 52-56 दिन है। यह किस्म पीले मोज़ेक वायरस के लिए प्रतिरोधी है।

एसएमएल 1115 : इस किस्म को पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना द्वारा विकसित किया गया है। इस किस्म को 2016 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह किस्म उत्तरी पूर्वी पर्वतीय क्षेत्र के लिए उपयुक्त है। इसकी औसत उपज क्षमता 11-12 क्विंटल/हैक्टेयर है। परिपक्वता अवधि 65-70 दिनों की है। ये किस्म पीले मोज़ेक वायरस के लिए मध्यम प्रतिरोधी है।

आईपीएम 512-1 (सूर्या) : इस किस्म को भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान, कानपुर द्वारा विकसित किया गया है। इसे 2020 में अधिसूचित और जारी किया गया था। यह किस्म उत्तर पूर्वी मैदानी क्षेत्र के लिए उपयुक्त है। इसकी औसत उपज क्षमता 12-13 क्विंटल/हैक्टेयर है। यह किस्म 60-65 दिनों में परिपक्व होती है तथा पीले मोज़ेक वायरस, सर्कोस्पोरा पर्ण धब्बा और एंथ्रेक्नोज रोगों के लिए प्रतिरोधी है।

ख़रीफ़ बुआई /खेती के लिए:

डीजीजीवी-2 : यह किस्म कृषि विज्ञान विश्वविद्यालय, धारवाड़ द्वारा विकसित की गई है तथा इसे 2014 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह किस्म कर्नाटक राज्य के लिए उपयुक्त है तथा इसकी औसत उपज क्षमता 11-14 क्विंटल/हैक्टेयर है। यह किस्म 70-75 दिनों में परिपक्व होती है और चूर्णिल आसिता रोग के लिए मध्यम प्रतिरोधी है।

पूसा 1371 : यह किस्म भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा विकसित की गई तथा इसे 2017 में अधिसूचित और जारी किया गया था। इस किस्म को उत्तरी पर्वतीय क्षेत्र के लिए अनुशंसित किया गया है। इसकी औसत उपज क्षमता 9-10 क्विंटल/हैक्टेयर है। यह किस्म 81-91 दिनों में परिपक्व होती है और पीले मोज़ेक वायरस, जड़ सड़न, वेब ब्लाइट और एंथ्रेक्नोज रोगों के लिए प्रतिरोधी है।

जीएम 6 : इस किस्म को सरदारकृषिनगर दांतीवाड़ा कृषि विश्वविद्यालय, दांतीवाड़ा द्वारा विकसित किया गया तथा इसे 2018 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह किस्म उत्तरी पूर्वी पर्वतीय क्षेत्र के लिए उपयुक्त है तथा इसकी औसत उपज क्षमता 11-12 क्विंटल/हैक्टेयर है। यह किस्म 70-75 दिनों में परिपक्व हो जाती है और पीले मोज़ेक वायरस और सर्कोस्पोरा पर्ण धब्बा के प्रति सहनशील है।

एमएच 1142 : यह किस्म चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार द्वारा विकसित की गई तथा इसे 2020 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह उत्तरी पूर्वी पर्वतीय क्षेत्र और उत्तर पश्चिमी मैदानी क्षेत्र के लिए अनुशंसित है। इसकी औसत उपज क्षमता 11-12 क्विंटल/हैक्टेयर है तथा 60-65 दिनों में परिपक्व होती है। यह पीले मोज़ेक वायरस के लिए प्रतिरोधी है जबकि एंथ्रेक्नोज और चूर्णिल आसिता के लिए मध्यम प्रतिरोधी है।

विभिन्न राज्यों द्वारा जारी की गईं किस्में

डीजीजीवी-2 : यह किस्म कृषि विज्ञान विश्वविद्यालय, धारवाड़ द्वारा विकसित की गई तथा इसे 2014 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह किस्म कर्नाटक के कृषि-जलवायु क्षेत्र 8 में खेती के लिए अनुशंसित है तथा इसकी उपज क्षमता 11-14 क्विंटल/हैक्टेयर है। इसकी अवधि 70-75 दिन है तथा इसमें चूर्णिल आसिता के लिए मध्यम प्रतिरोध और एपिऑन बीटल के लिए मध्यम सहिष्णु है। यह फली के टूटने के लिए प्रतिरोधी है और यांत्रिक कटाई के लिए उपयुक्त है।

शालीमार मूंग-2 : यह किस्म शेर-ए-कश्मीर कृषि विज्ञान और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, श्रीनगर केंद्र द्वारा विकसित की गई है तथा इसे 2014 में अधिसूचित और जारी किया गया था। यह कश्मीर घाटी में 1850 मीटर की ऊंचाई तक खेती के लिए उपयुक्त है। इसकी औसत उपज 10 क्विंटल/हैक्टेयर है। इस किस्म की अवधि 99 दिनों की है। यह सर्कोस्पोरा पर्ण धब्बा के लिए प्रतिरोधी है और एफिड (माहु) के लिए मध्यम प्रतिरोधी है।

सीओ (जीजी) 8 : इसे तमिलनाडु कृषि विश्वविद्यालय, कोयम्बटूर द्वारा विकसित किया गया तथा इसे 2014 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह तमिलनाडु में खेती के लिए उपयुक्त है। यह किस्म 60 दिनों में परिपक्व होती है और पीले मोज़ेक वायरस के लिए प्रतिरोधी है।

एसजीसी 16 : यह किस्म क्षेत्रीय कृषि अनुसंधान केंद्र, शिलांगानी, असम कृषि विश्वविद्यालय, नगांव, असम द्वारा विकसित की गई तथा इसे 2014 में अधिसूचित और जारी किया गया था। इसकी खेती के लिए असम राज्य उपयुक्त है। इस किस्म की पैदावार 13-14 क्विंटल/हैक्टेयर है। इस किस्म की परिपक्वता अवधि 60-65 दिन है। यह सर्कोस्पोरा पर्ण धब्बा और पीले मोज़ेक वायरस के लिए प्रतिरोधी है।

सोमनाथ : यह किस्म कृषि विज्ञान विश्वविद्यालय, रायचूर द्वारा विकसित की गई है तथा इसे 2014 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह कर्नाटक में खेती के लिए उपयुक्त है तथा इसकी औसत उपज 12-13 क्विंटल/हैक्टेयर है। इसकी अवधि 65-68 दिन है। यह चूर्णिल आसिता के लिए मध्यम प्रतिरोधी है। इसके बीज सुदृढ़ बोल्ड और फली लंबी होती है।

एमएच 318 : यह किस्म चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार द्वारा विकसित की गई है तथा इसे 2015 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह वसंत, ग्रीष्म और ख़रीफ़ मौसम के दौरान हरियाणा के वर्षा सिंचित और सिंचित क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है। इसकी उपज क्षमता ख़रीफ़ में 14 क्विंटल/हैक्टेयर और वसंत/ग्रीष्म में 10 क्विंटल/हैक्टेयर है। यह किस्म 60-61 दिनों में परिपक्व हो जाती है तथा पीले मोज़ेक वायरस के लिए प्रतिरोधी है। यह धान-गेहूं फसल चक्र के लिए अनुकूल है।

उत्कर्ष (केएम 11-584) : यह किस्म महाराष्ट्र राज्य बीज निगम द्वारा विकसित की गई है तथा इसे 2016 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह महाराष्ट्र में खेती के लिए उपयुक्त है। इस किस्म की पैदावार 12-13 क्विंटल/हैक्टेयर है तथा इसकी अवधि 60-65 दिन है। यह पीले मोज़ेक वायरस के लिए मध्यम सहनशील है।

यादाद्री (डब्ल्यूजीजी 42) : यह किस्म प्रोफेसर जयशंकर तेलंगाना राज्य कृषि विश्वविद्यालय, हैदराबाद द्वारा विकसित की गई है तथा इसे 2016 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह किस्म तेलंगाना राज्य के लिए अनुशंसित है और ख़रीफ़/रबी और ग्रीष्म में खेती के लिए उपयुक्त है। इस किस्म द्वारा प्राप्त औसत उपज 10-12 क्विंटल/हैक्टेयर है। इसकी परिपक्वता अवधि 55-60 दिन है, और यह पीले मोज़ेक वायरस के लिए प्रतिरोधी है।

श्री राम (एमजीजी 351) : यह किस्म प्रोफेसर जयशंकर तेलंगाना राज्य कृषि विश्वविद्यालय, हैदराबाद द्वारा विकसित की

गई है तथा इसे 2016 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह तेलंगाना राज्य के लिए अनुशंसित है और रबी/ग्रीष्म एवं परती धान की खेती के लिए उपयुक्त है। इस किस्म द्वारा प्राप्त औसत उपज 12-14 क्विंटल/हैक्टेयर है। इस किस्म की अवधि 60-65 दिन है। यह पीले मोज़ेक वायरस के लिए मध्यम प्रतिरोधी है।

एमएसजे 118 (केशवानंद मूंग 2) : यह किस्म राजस्थान कृषि अनुसंधान संस्थान, दुर्गापुरा द्वारा विकसित की गई है तथा इसे 2016 में अधिसूचित और जारी किया गया। इस किस्म को राजस्थान में खेती के लिए अनुशंसित किया गया है और यह ख़रीफ़/वसंत की खेती के लिए उपयुक्त है। इसकी औसत उपज 7-8 क्विंटल/हैक्टेयर है तथा यह 60-65 दिनों में परिपक्व होती है, और इसमें पीले मोज़ेक वायरस के लिए मध्यम प्रतिरोध है।

आरएमजी 975 (केशवानंद मूंग 1) : यह किस्म राजस्थान कृषि अनुसंधान संस्थान, दुर्गापुरा द्वारा विकसित की गई तथा इसे 2016 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह राजस्थान राज्य में ख़रीफ़ खेती के लिए उपयुक्त है। इस किस्म की उपज क्षमता 8-9 क्विंटल/हैक्टेयर और परिपक्वता अवधि 65-70 दिन है। यह पीले मोज़ेक वायरस के लिए मध्यम प्रतिरोधी है और जड़ गांठ नेमाटोड के लिए सहिष्णु है। बीज मध्यम सुदृढ़ और बोल्ड होते हैं।

एमएल 2056 : इस किस्म को पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना द्वारा विकसित किया गया तथा 2016 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह पंजाब में ख़रीफ़ की खेती के लिए उपयुक्त है। इसकी औसतन पैदावार 11-12 क्विंटल/हैक्टेयर है, यह लगभग 70-75 दिनों में परिपक्व होती है और पीले मोज़ेक वायरस के लिए प्रतिरोधी है।

जीबीएम-1 : इस किस्म को नवसारी कृषि विश्वविद्यालय, गुजरात द्वारा विकसित किया गया तथा 2016 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह गुजरात में रबी खेती के लिए उपयुक्त है। इसकी औसत उपज 11-12 क्विंटल/हैक्टेयर और परिपक्वता अवधि 102-105 दिन है।

पंत मूंग 8 (पीएम 09-6) : यह किस्म गोविंद बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पंतनगर द्वारा विकसित की गई तथा इसे 2017 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह उत्तराखंड में खेती के लिए उपयुक्त है। इसकी उपज क्षमता 10-11 क्विंटल/हैक्टेयर है और यह लगभग 78-83 दिनों में परिपक्व हो जाती है। यह मूंग के पीले मोज़ेक वायरस, सर्कोस्पोरा पर्ण धब्बा और चूर्णिल आसिता रोगों के लिए प्रतिरोधी है।

केएम 2328 : इस किस्म को चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर द्वारा विकसित किया गया तथा 2018 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह उत्तर प्रदेश के पश्चिमी क्षेत्र में ख़रीफ़ की खेती के लिए उपयुक्त है। किस्म की उपज क्षमता 10-12 क्विंटल/हैक्टेयर है। यह किस्म लगभग 60-62 दिनों में परिपक्व हो जाती है। इसमें पीले मोज़ेक वायरस के लिए स्थिर प्रतिरोध है। यह सर्कोस्पोरा पर्ण धब्बा, वेब ब्लाइट और एंथ्रेक्नोज रोगों के लिए भी प्रतिरोधी है।

पूसा 1431 : यह किस्म भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा विकसित की गई तथा इसे 2018 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह दिल्ली राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में वसंत में खेती के लिए उपयुक्त है। इस किस्म की औसतन उपज 12-14 क्विंटल/हैक्टेयर है। इस किस्म की परिपक्वता अवधि 56-66 दिन है। यह मूंग के पीले मोज़ेक वायरस, सर्कोस्पोरा पर्ण धब्बा, एन्थ्रेक्नोज, वेब ब्लाइट और उर्दबीन लीफ क्रिंकल वायरस के लिए प्रतिरोधी है।

एसजीसी 16 (रूपोही) : यह किस्म असम कृषि विश्वविद्यालय, जोरहाट, असम द्वारा विकसित की गई तथा इसे 2018 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह असम में ग्रीष्म और ख़रीफ़ में खेती के लिए उपयुक्त है। इस किस्म की उपज क्षमता 12-13 क्विंटल/हैक्टेयर है। यह किस्म लगभग 65-70 दिनों में परिपक्व हो जाती है। यह सर्कोस्पोरा पर्ण धब्बा और पीले मोज़ेक वायरस के लिए प्रतिरोधी है साथ ही वेब ब्लाइट के लिए भी मध्यम प्रतिरोधी है।

जीएएम 5 : यह किस्म आनंद कृषि विश्वविद्यालय, आनंद द्वारा विकसित की गई, तथा इसे 2018 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह गुजरात में ग्रीष्म और ख़रीफ़ में खेती के लिए उपयुक्त है। किस्म की उपज क्षमता 8-11 क्विंटल/हैक्टेयर है। इस किस्म को परिपक्व होने में लगभग 60-65 दिन लगते हैं। यह किस्म पीले मोज़ेक वायरस के लिए अत्यधिक प्रतिरोधी है।

गुजरात मूंग-7 (जीएम-7) : इस किस्म को नवसारी कृषि विश्वविद्यालय, नवसारी द्वारा विकसित किया गया तथा इसे 2018 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह गुजरात में ग्रीष्म और ख़रीफ़ में खेती के लिए उपयुक्त है। इस किस्म की उपज 10-11 क्विंटल/हैक्टेयर है। यह किस्म लगभग 75-80 दिनों में परिपक्व हो जाती है। यह पीला मोज़ेक वायरस के लिए प्रतिरोधी है।

वर्षा (आईपीएम 2के 14-9) : यह किस्म भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान, कानपुर द्वारा विकसित की गई तथा इसे 2018 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह उत्तर प्रदेश में ख़रीफ़ की खेती के लिए उपयुक्त है। इस किस्म की उपज क्षमता 10-11 क्विंटल/हैक्टेयर है। इस किस्म को परिपक्व होने में लगभग 65-75 दिन लगते हैं। यह पीले मोज़ेक वायरस और चूर्णिल आसिता के लिए प्रतिरोधी है।

कनिका (आईपीएम 302-2) : इस किस्म को भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान, कानपुर द्वारा विकसित किया गया तथा इसे 2018 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह उत्तर प्रदेश में वसंत और ख़रीफ़ की खेती के लिए उपयुक्त है। इस किस्म की उपज क्षमता 10-12 क्विंटल/हैक्टेयर है। इस किस्म को परिपक्व होने में लगभग 65-75 दिन लगते हैं। यह पीला मोज़ेक वायरस के लिए प्रतिरोधी है और इसके बीज मध्यम-बड़े आकार के (3.4 ग्राम/100 बीज वजन) होते है।

त्रिपुरा मूंग 1 (टीआरसीएम 131) : इस किस्म को भा.कृ.अनु.प.-अनुसंधान परिसर उत्तर पूर्वी क्षेत्र द्वारा विकसित किया गया तथा 2018 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह त्रिपुरा में ग्रीष्म और ख़रीफ़ की खेती के लिए उपयुक्त है। इस किस्म की औसत उपज क्षमता 10-11 क्विंटल/हैक्टेयर है। इस किस्म की परिपक्वता अवधि 55-60 दिन है। यह पीला मोज़ेक वायरस के लिए प्रतिरोधी है।

वीबीएन 4 (वीजीजी 10-008) : इस किस्म को राष्ट्रीय दलहन अनुसंधान केंद्र, वामबन द्वारा विकसित किया गया तथा इसे 2019 में अधिसूचित और जारी किया गया। इस किस्म को तमिलनाडु के लिए अनुशंसित किया गया है। किस्म की उपज क्षमता 10-11 क्विंटल/हैक्टेयर है। यह किस्म लगभग 65-70 दिनों में परिपक्व हो जाती है। यह पीले मोज़ेक वायरस, उर्दबीन लीफ क्रिंकल वायरस और चूर्णिल आसिता रोगों के लिए मध्यम प्रतिरोधी है।

पंत एम 9 (पीएम 09-11) : यह किस्म गोविंद बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पंतनगर द्वारा विकसित की गई तथा इसे 2019 में अधिसूचित और जारी किया गया। इस किस्म को उत्तराखंड में खेती के लिए अनुशंसित किया गया है और यह ख़रीफ़ और वसंत के मौसम के लिए उपयुक्त है। किस्म की औसत उपज 9-10 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है। यह किस्म लगभग 70-75 दिनों में परिपक्व हो जाती है। यह पीला मोज़ेक वायरस के लिए प्रतिरोधी है।

एसएमएल 1827 : इस किस्म को पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना द्वारा विकसित किया गया तथा इसे 2019 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह पंजाब में ख़रीफ़ की खेती के लिए उपयुक्त है। किस्म की उपज क्षमता 12-13 क्विंटल/हैक्टेयर है। इस किस्म की परिपक्वता अवधि 60-65 दिन है। यह पीला मोज़ेक वायरस के लिए प्रतिरोधी है।

केएम 2342 (आजाद मूंग 1) : इस किस्म को चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर द्वारा विकसित किया गया तथा इसे 2020 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह किस्म उत्तर प्रदेश में ख़रीफ़ की खेती के लिए उपयुक्त है। किस्म की उपज क्षमता 8-10 क्विंटल/हैक्टेयर है। इस किस्म की परिपक्वता अवधि लगभग 65-70 दिन है। इसमें पीले मोज़ेक वायरस के लिए मध्यम प्रतिरोध है।

आईपीएम 312-20 (वसुधा) : यह किस्म भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान, कानपुर द्वारा विकसित की गई है। इस किस्म को 2020 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह उत्तर प्रदेश में वसंत की खेती के लिए उपयुक्त है। किस्म की उपज क्षमता 10-11 क्विंटल/हैक्टेयर है। इस किस्म को परिपक्व होने में लगभग 70-75 दिन लगते हैं। इसमें पीले मोज़ेक वायरस के लिए प्रतिरोध और एंथ्राक्नोज और चूर्णिल आसिता रोगों के लिए मध्यम प्रतिरोध है।

आईपीएम 409-4 (हीरा) : यह किस्म भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान, कानपुर द्वारा विकसित की गई है। इस किस्म को 2020 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह उत्तर प्रदेश में वसंत और ग्रीष्म की खेती के लिए उपयुक्त है। किस्म की औसत उपज क्षमता 8-10 क्विंटल/हैक्टेयर है। यह किस्म लगभग 65-70 दिनों में परिपक्व होती है और पीले मोज़ेक वायरस के लिए प्रतिरोधी है।

पूसा 1641 : यह किस्म भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा विकसित की गई तथा इसे 2020 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह दिल्ली राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में ग्रीष्मकालीन खेती के लिए उपयुक्त है। किस्म की उपज क्षमता 12-13 क्विंटल/हैक्टेयर है। इस किस्म को परिपक्व होने में 62-64 दिन लगते हैं। यह पीले मोज़ेक वायरस और मूंग में लगने वाले प्रमुख कीटों के लिए भी प्रतिरोधी है।

एमजीजी 385 (मधिरा पेसारा) : यह किस्म प्रोफेसर जयशंकर तेलंगाना राज्य कृषि विश्वविद्यालय, हैदराबाद द्वारा विकसित की गई है। इसे 2021 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह तेलंगाना में ख़रीफ़, ग्रीष्म, रबी और परती-धान की खेती के लिए उपयुक्त है। इस किस्म की औसत उपज 12-13 क्विंटल/हैक्टेयर है। यह किस्म लगभग 70-75 दिनों में परिपक्व हो जाती है। यह पर्ण मरोड़ (पर्ण क्रिंकल), पर्ण कर्ल के लिए प्रतिरोधी है, और पीले मोज़ेक वायरस के लिए मध्यम प्रतिरोधी है। इस किस्म में प्रोटीन की मात्रा 29.05% है।

पीएम 707-5 (फुले चेतक) : यह किस्म महात्मा फुले कृषि विद्यापीठ, राहुरी द्वारा विकसित की गई तथा इसे 2021 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह महाराष्ट्र में ख़रीफ़ खेती के लिए उपयुक्त है। इस किस्म की उपज क्षमता 10-12 क्विंटल/हैक्टेयर है तथा परिपक्वता अवधि 70 दिन है। यह मूंग के पीले मोज़ेक वायरस, चूर्णिल आसिता और सर्कोस्पोरा पर्ण धब्बा रोगों के लिए मध्यम प्रतिरोधी है। इसके बीज का वजन 4.77 ग्राम/100 बीज है।

एमएल 1808 : इस किस्म को पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना द्वारा विकसित किया गया तथा इसे 2021 में अधिसूचित और जारी किया गया। पंजाब में ख़रीफ़ में खेती के लिए यह उपयुक्त है। इस किस्म की औसत उपज 12-13 क्विंटल/हैक्टेयर है। यह किस्म 70-75 दिनों में परिपक्व होती है और पीले मोज़ेक वायरस के लिए प्रतिरोधी है।

एसजीसी 16 (रुपोही) : यह किस्म असम कृषि विश्वविद्यालय, शिलांगानी, असम द्वारा विकसित की गई है तथा इसे 2022 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह किस्म असम में खेती के लिए उपयुक्त है। इस किस्म की उपज क्षमता 12-13 क्विंटल/हैक्टेयर है। यह किस्म लगभग 65-88 दिनों में परिपक्व हो जाती है। यह सर्कोस्पोरा पर्ण धब्बा और पीले मोज़ेक वायरस के लिए प्रतिरोधी और वेब ब्लाइट के लिए मध्यम प्रतिरोधी है।

जीएएम 8 (हरा मोती) : यह किस्म आनंद तमिलनाडु, वडोदरा, आनंद द्वारा विकसित की गई है तथा इसे 2022 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह किस्म गुजरात में खेती के लिए उपयुक्त है। इस किस्म की औसत उपज 11-12 क्विंटल/हैक्टेयर है तथा यह किस्म 70-80 दिनों में परिपक्व हो जाती है। यह पीले मोज़ेक वायरस के लिए प्रतिरोधी और चूर्णिल आसिता रोग के लिए मध्यम प्रतिरोधी है।

शालीमार मूंग 3 : यह किस्म शेर-ए-कश्मीर कृषि विज्ञान और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय श्रीनगर केंद्र, द्वारा विकसित की गई है तथा इसे 2022 में अधिसूचित और जारी किया गया। इस किस्म को जम्मू और कश्मीर में खेती के लिए अनुशंसित किया गया है। इस किस्म की औसत उपज क्षमता 9-10 क्विंटल/हैक्टेयर है। यह किस्म 90-95 दिनों में परिपक्व होती है और पीले मोज़ेक के लिए प्रतिरोधी है।

वीबीएन 5 (वीजीजी 15013) : इस किस्म को तमिलनाडु कृषि विश्वविद्यालय, वामबन द्वारा विकसित किया गया है। इसे 2022 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह किस्म नीलगिरी और कन्याकुमारी जिलों को छोड़कर पूरे तमिलनाडु में सभी मौसमों में खेती के लिए उपयुक्त है। इस किस्म की

उपज क्षमता 8-9 क्विंटल/हैक्टेयर है। यह किस्म लगभग 70-75 दिनों में परिपक्व हो जाती है तथा यह पीले मोज़ेक वायरस के लिए प्रतिरोधी है।

लाम पेसारा 574 (एलजीजी 574) : यह किस्म आचार्य एन जी रंगा कृषि विश्वविद्यालय, क्षेत्रीय कृषि अनुसंधान केंद्र, लाम, आंध्र प्रदेश द्वारा विकसित की गई है। इस किस्म को 2022 में अधिसूचित और जारी किया गया है तथा यह किस्म आंध्र प्रदेश में खेती के लिए उपयुक्त है। इसकी खेती रबी के मौसम में परती-धान और ऊपरी दोनों स्थितियों के लिए की जा सकती है। इस किस्म की उपज क्षमता 15-16 क्विंटल/हैक्टेयर है तथा इसे परिपक्व होने में लगभग 65-70 दिन लगते हैं। यह पीले मोज़ेक वायरस, उर्दबीन लीफ क्रिंकल वायरस, वेब ब्लाइट और सर्कोस्पोरा पर्ण धब्बा रोगों के प्रति सहिष्णु है।

लाम पेसारा 607 (एलजीजी 607) : यह किस्म आचार्य एनजी रंगा कृषि विश्वविद्यालय, क्षेत्रीय कृषि अनुसंधान केंद्र, लाम, आंध्र प्रदेश द्वारा विकसित की गई है तथा इसे 2022 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह किस्म आंध्र प्रदेश में खेती के लिए उपयुक्त है। यह ख़रीफ़ और रबी मौसम में परती-धान और ऊपरी दोनों स्थितियों के लिए उपयुक्त है। इस किस्म की औसत उपज 15-17 क्विंटल/हैक्टेयर है। इस किस्म को परिपक्व होने में 60-65 दिन लगते हैं। यह किस्म पीले मोज़ेक वायरस के लिए प्रतिरोधी है, उर्दबीन लीफ क्रिंकल वायरस, कवक जनित रोगों, वेब ब्लाइट, सर्कोस्पोरा पर्ण धब्बा और चूर्णिल आसिता के लिए सहिष्णु है।

टीआरसीआरएम 147 : यह किस्म कृषि अनुसंधान केंद्र, बीदर, कृषि विज्ञान विश्वविद्यालय, रायचूर, कर्नाटक द्वारा विकसित की गई तथा इसे 2022 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह किस्म कर्नाटक में ग्रीष्मकालीन खेती के लिए उपयुक्त है। किस्म की उपज क्षमता 8-9 क्विंटल/हैक्टेयर है। यह किस्म लगभग 63-65 दिनों में परिपक्व हो जाती है। यह पीले मोज़ेक वायरस रोग के लिए प्रतिरोधी है।

एचयूएम 27 (मालवीय जन क्रांति) : यह किस्म बनारस हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी द्वारा विकसित की गई है तथा इसे 2022 में अधिसूचित और जारी किया गया। यह किस्म उत्तर प्रदेश में खेती के लिए उपयुक्त है तथा यह प्रकाश एवं ताप-असंवेदनशील है। यह पीले मोज़ेक वायरस के लिए अत्यधिक प्रतिरोधी है और इसमें प्रोटीन की मात्रा 29.8% है।

विभिन्न राज्यों के लिए अनुशंसित मूंग की किस्में

ऋतु	राज्य	किस्में
वसंत/ग्रीष्म	असम	एचयूएम-16, आईपीएम 512-1
	बिहार, झारखंड	एचयूएम -16, आईपीएम 02-3, विराट (आईपीएम 205-7), आईपीएम 512-1
	गुजरात	शिखा (आईपीएम 410-3), विराट (आईपीएम 205-7), जीएएम 5, गुजरात मूंग 7, जीएएम 8
	हरियाणा	एमएच 421, आईपीएम 02-3, आईपीएम 410-3 (शिखा), विराट (आईपीएम 205-7)
	मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़	एचयूएम 1, पूसा 9531, एमईएचए, आईपीएम 410-3 (शिखा), विराट (आईपीएम 205-7)
	ओडिशा	पूसा 9972
	पंजाब	एसएमएल 832, आईपीएम 2-3, आईपीएम 410-3 (शिखा), एसएमएल 1115
	राजस्थान	आईपीएम 02-3, आईपीएम 410-3 (शिखा), विराट (आईपीएम 205-7)
	उत्तर प्रदेश, उत्तरांचल	एचयूएम -16, आईपीएम 02-3, केएम 2195, विराट (आईपीएम 205-7), केएम 2328, कनिका, आईपीएम 512-1, आईपीएम 409-4, आईपीएम 312-20, एचयूएम 27
	पश्चिम बंगाल	एचयूएम -16, आईपीएम 512-1

ऋतु	राज्य	किस्में
ख़रीफ़	आंध्र प्रदेश	पीकेवी एकेएम 4, आईपीएम 02-14, टीएम 96-2, एमजीजी 347, एमजीजी 207, एमजीजी 385
	बिहार, झारखंड	आईपीएम 2-3, एमएच 1142
	दिल्ली राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र	आईपीएम 2-3, पूसा 1431, पूसा 1641
	गुजरात	पीकेवी एकेएम 4, बीजीएस -9, जीएएम 5, जीएम 6
	हरियाणा	आईपीएम 2-3, एमएच 318, एमएच 1142
	हिमाचल प्रदेश, जम्मू और कश्मीर	पंत मूंग 6, केएम 2241, पूसा 0672, शालीमार 2, पूसा 1371, शालीमार मूंग 3
	कर्नाटक	आईपीएम 02-14, पीकेवी एकेएम 4, केकेएम 3, डीजीजीवी 2, बीजीएस 9, टीआरसीआरएम 147
	मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़	टीजेएम 3, पीकेवी एकेएम 4
	महाराष्ट्र	पीकेवी एकेएम 4, बीएम 200-1, पीकेवी हरा सोना (एकेएम 9911), बीएम 2003-2, उत्कर्ष, पीएम 707-5
	उत्तर-पूर्वी पहाड़ी राज्य	स्वाति, पूसा 0672, पूसा 1371, त्रिपुरा मूंग 1
	ओडिशा	पीकेवी एकेएम 4, आईपीएम 02-14
	पंजाब	आईपीएम 2-3, एमएल 2056, एसएमएल 1827, एमएच 1142
	राजस्थान	गंगा 1, आईपीएम 2-3, एमएच 2-15, एमएसजे 118, आरएमजी 975, एमएच 1142
	उत्तर प्रदेश, उत्तरांचल	आईपीएम 02-3, पंत मूंग 8, वर्षा, कनिका, पंत मूंग 9, एमएच 1142, केएम 2342
	तमिलनाडु	टीएम 96-2, आईपीएम 02-14, सीओ (जीजी) 8, वामबन 3, केकेएम 1, एडीटी 6, वीबीएन 4, वीबीएन 5
	तेलंगाना	डब्ल्यूजीजी 42, एमजीजी 351, आईपीएम 02-14, टीएम 96-2, एमजीजी 347, एमजीजी 207, एमजीजी 385
	पश्चिम बंगाल	एमएच 2-15, एमएच 1142
रबी	आंध्र प्रदेश	टीएम 96-2, डब्ल्यूजीजी 2, एमजीजी 385, एलजीजी 574, एलजीजी 607
	कर्नाटक	आईपीएम 02-14, टीआरसीआरएम 147
	तमिलनाडु	वामबन 8 (ग्रीष्म), वीबीएन 4, वीबीएन 5
	तेलंगाना	टीएम 96-2, डब्ल्यूजीजी 2, एमजीजी 385

सस्य तकनीकियों द्वारा फसल जैवसंवर्द्धन

शिवाधार मिश्रा[1], रणबीर सिंह[1] एवं ज्ञान प्रकाश मिश्रा[2]

[1]सस्यविज्ञान संभाग एवं [2]बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली 110 012

भारतीय कृषि ने गत वर्षों में बहुत ही प्रभावशाली प्रगति की है, तथा फसल उत्पादन में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। भारत में जनसंख्या का पांचवा हिस्सा गरीबी रेखा के नीचे रहता है और 15 प्रतिशत जनसंख्या कुपोषण की शिकार है, जिसकी वजह से वे स्वास्थ्य संबंधित बहुत सी समस्याओं से प्रभावित हैं। कुपोषण विशेष तौर पर विकासशील और अविकसित देशों में भयावह समस्या बनकर उभरी है। सूक्ष्म तत्व पोषण की पूर्ति कई माध्यमों से की जा सकती है; जैसे कि व्यावसायिक खाद्य संवर्द्धन, औषधि द्वारा पूर्ति, आहार का विविधीकरण तथा जैवसंवर्द्धित फसलों का उपयोग। जैवसंवर्द्धन को सर्वाधिक टिकाऊ और सस्ती तकनीक माना गया है और इसमें पोषक तत्व अपने प्राकृतिक स्वरूप में मानव शरीर में पहुंचते हैं। जैवसंवर्द्धन एक ऐसी विधि है जिसमें प्रजनन, पराजीनी तकनीकों या सस्य विधियों के माध्यम से फसलों के खाद्य भाग में विटामिन और खनिजों के घनत्व को बढ़ाया जाता है। पोषक तत्व प्रदान करने के लिए साधारण शब्दों में फसल जैवसंवर्द्धन आमजन तक खाद्य पदार्थों द्वारा पोषक तत्व पहुंचाने का एक अनूठा तरीका है। संक्षिप्त में कहा जा सकता है कि जैवसंवर्द्धन लक्ष्य सूक्ष्म पोषक तत्वों को लोगों तक पहुंचने का एक आसान तरीका है।

फसल जैवसंवर्द्धन के तरीकें

जैवसंवर्द्धन, पादप प्रजनन, ट्रांसजेनिक तकनीकों अथवा ज्ञान के माध्यम से फसलों में खनिजों और विटामिन को बढ़ाने को एक विकल्प है। जिनका संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है:

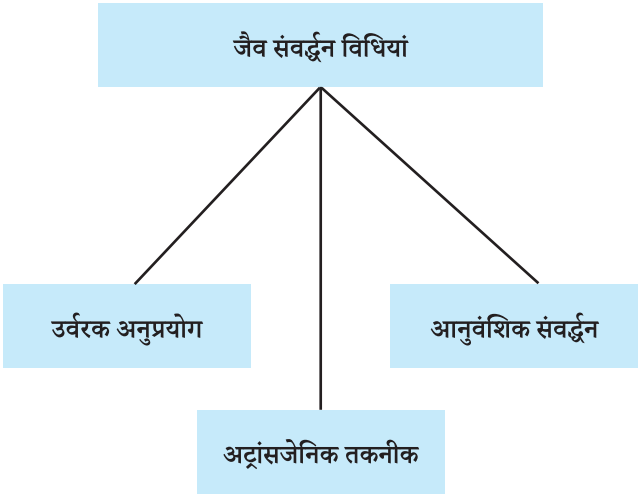

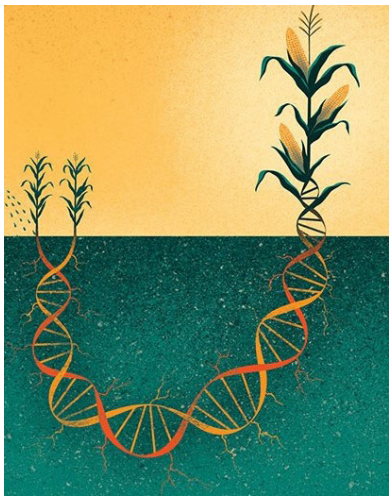

सस्य तकनीक द्वारा जैवसंवर्द्धन

फसलों के खाने हेतु प्रयोग किए जाने वाले भागों में पोषक तत्वों को बढ़ाने के लिए सस्य जैवसंवर्द्धन एक आसान तरीका है। उदाहरण के लिए कुछ देशों में सेलेनियम युक्त उर्वरकों के प्रयोग से गेहूं में सेलेनियम की मात्रा में सुधार किया जाता है। इसके अतिरिक्त अनेक शोधकर्ताओं ने जिंक, कैल्शियम और सेलेनियम के जैवसंवर्द्धन पर ध्यान केंद्रित किया है। इन खनिजों की मात्रा कुछ फसलों में सीमित पाई गई है।

पारंपरिक प्रजनन द्वारा जैवसंवर्द्धन

इसमें ऐसी फसलों की आवश्यकता होती है जिनमें प्राकृतिक रूप से उच्च पौष्टिक मूल्य होता है। ऐसी फसलों का उच्च उपज वाली स्थिर किस्मों के साथ संकरण किया जाता है। इस प्रक्रिया

में फसलों में आनुवंशिक स्तर पर वांछित सूक्ष्म पोषक तत्वों के पाने की संभावना अधिक होती है। ये पोषक तत्व खाद्य फसलों के भंडारण, प्रसंस्करण और यह खाना पकाने के दौरान कैसे प्रभावित होते हैं, इनका आंकलन कर जैवसंवर्द्धन की प्रभावशीलता को बढ़ाया जा सकता है। अब तक यह जिंक और लौह पोषक तत्वों हेतु फसलों में जैवसंवर्द्धन एक प्रभावी तरीके के रूप में उभरा है।

पराजीनी (ट्रांसजेनिक) तकनीक द्वारा जैवसंवर्द्धन

ये वांछित फसल में कुछ पोषक तत्वों के उत्पादन को बढ़ाकर उसे समृद्ध बना सकते हैं। वैकल्पिक रूप से विभिन्न जीनों, जो विभिन्न पोषक तत्वों के लिए कोड होते हैं, उन्हें भी एक फसल में डाला जा सकता है। सबसे अच्छे उदाहरणों में से एक है, गोल्डन राइस, जिसे बीटा कैरोटीन (विटामिन ए) बनाने वाले कारकों के साथ समृद्ध किया गया है।

सस्य तकनीकियों द्वारा फसल जैवसंर्द्धन की विधियां

सस्य तकनीकियों द्वारा जैवसंवर्द्धन फसलों की पोषण गुणवत्ता में सुधार और मानव के समग्र स्वास्थ्य विकास हेतु एक महत्वपूर्ण तरीका है। यह फसल की कार्यिकी में बढ़े हुऐ लौह और जिंक सामग्री के साथ जैवसंवर्द्धित खाद्य फसलों को विकसित करने हेतु एक तीव्र एवं पूरक तरीका है। सस्य जैवसंवर्द्धन पोषक तत्वों के अनुप्रयोग पर आधारित है। जैवसंवर्द्धन तकनीक द्वारा जिंक व सल्फर लेपित यूरिया के प्रयोग से अनाजों में सूक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा बढ़ाई जा सकती है। इससे एक ओर नाइट्रोजन उपयोग क्षमता तो बढ़ती ही है, साथ ही नाइट्रोजन उर्वरकों की मात्रा में भी कमी की जा सकती है। यह विधि सुगम, आसान व कम खर्चीली है। तथा इसके परिणाम भी बहुत कम समय में मिल जाते हैं। इसके अतिरिक्त जिंक व लौहयुक्त उर्वरकों का खड़ी फसल में पर्णीय छिड़काव करने से पोषक तत्वों मुख्यतः नाइट्रोजन के गैसीय, स्थिरीकरण व विनाइट्रीकरण इत्यादि द्वारा होने वाले ह्रास को भी कम किया जा सकता है। अतः इस तकनीक को किसानों व प्रसार कर्मियों में लोकप्रिय बनाने की नितांत आवश्यकता है जिससे आवश्यक सूक्ष्म पोषक तत्वों से भरपूर अनाजों का उत्पादन किया जा सके। साथ ही सूक्ष्म पोषक तत्वों से युक्त खाद्य पदार्थों को दैनिक आहार में प्रयोग करके विकासशील देशों के लोगों में इन पोषक तत्वों की कमी से होने वाली बीमारियों व कुपोषण को काफी हद तक कम किया जा सकता है।

सस्य तकनीक द्वारा जैवसंवर्द्धन हेतु निम्नलिखित तीन अलग-अलग विधियां हैं:

1. मृदा अनुप्रयोग
2. पर्णीय अनुप्रयोग
3. बीज उपचार (सीड ट्रीटमेंट)

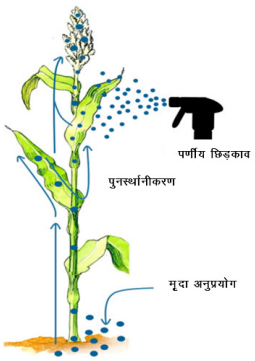

मृदा सुधार हेतु फसल बुआई के समय थोड़ी मात्रा में सूक्ष्म पोषक तत्वों को मृदा में देना आवश्यक है तथा विशिष्ट परिस्थितियों में पर्णीय छिड़काव का उपयोग भी किया जाता है। यह मृदा अनुप्रयोग की तुलना में पौधों के खाद्य भागों में पोषक तत्वों के बेहतर उन्नयन और इनके कुशल आबंटन को तीव्र करता है। ज्यादातर पत्तेदार सब्जियों और अनाज में मिट्टी में स्थिरीकरण से बचने के कारण तेज बहाव अधिक प्रभावी होता है। इस तकनीक की मुख्य समस्या यह है कि यह बहुत महंगी है तथा उपयोग करना भी काफी कठिन है और इसे आसानी से वर्षा द्वारा कम किया जा सकता है। कई रिपोर्ट के अनुसार दोनों दृष्टिकोणों (मिट्टी और पर्ण अनुप्रयोग) के समाकलन को सबसे कुशल विधि माना जाता है। सूक्ष्म पोषक तत्वों के साथ बीजों के उपचार की भी आवश्यकता होती है, जो पौधों के पोषण में सुधार के साथ पौधों के विकास को भी प्रोत्साहित करते हैं और जिससे फसल की पैदावार बढ़ सकती है। हालांकि इस दृष्टिकोण द्वारा हुई पोषण वृद्धि बहुत सीमित है तथा बीज प्राइमिंग और बीज लेपन द्वारा भी पौधों के पोषण में सुधार किया जा सकता है।

मिट्टी में उपलब्ध सूक्ष्म पोषक तत्व तथा उनकी उपलब्धता फसल जैवसंवर्द्धन के मुख्य कारक हैं। नाइट्रोजन और फॉस्फोरस की उचित उपलब्धता से जड़ों का विकास, प्ररोह से पोषक तत्वों के स्थानातंरण और पौधों के खाद्य भागों में उनके पुनः स्थानीयकरण पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। पादप नाइट्रोजन की स्थिति भी अनाज में लौह को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। पौधों में नाइट्रोजन बढ़ने से अनाजों में लौह और जिंक का अधिक संचय होता है। वानस्पतिक ऊतक से नाइट्रोजन, लौह और जिंक के पुनः स्थापन में शामिल आनुवंशिक पद्धति और बीज में उनके

अनुपात को समान पाया गया है। मिट्टी में नाइट्रोजन और यूरिया के पर्ण छिड़काव से प्ररोह और अनाज में लौह सघनता को बढ़ाया जा सकता है।

विभिन्न खाद्य फसलों में सस्य तकनीकियों द्वारा जैवसंवर्द्धन

अनाज की फसलों में बहुत सीमित मात्रा में लौह और जिंक तत्व होते है और लौह और जिंक की कमी वाली मिट्टी में इन

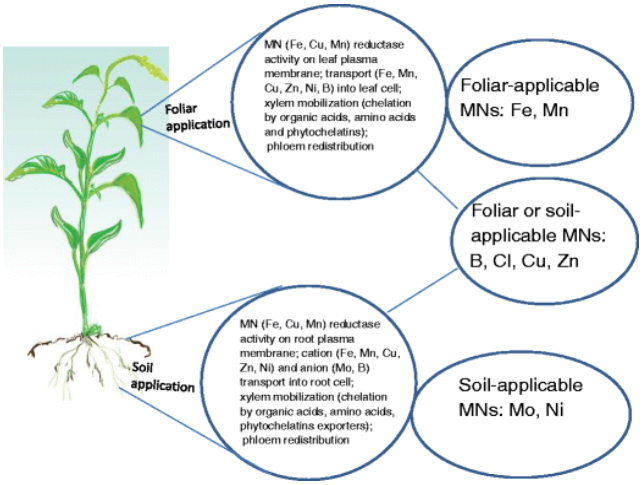

फसलों को उगाने से अनाज में उनका घनत्व कम हो जाता है। अनाज में जिंक की मात्रा को मिट्टी और पर्ण अनुप्रयोग द्वारा बेहतर बनाया जा सकता है। जिंक की तुलना में, अनाज की फसलों में लौह अंश में सुधार के लिए लौह उर्वरकों के प्रयोग पर तुलनात्मक रूप से कम शोध हुआ है। अब तक किए गए अधिकांश शोध लौह की कमी वाले क्लोरोसिस के सुधार के लिए उर्वरक प्रयोग तक ही सीमित है। लौह की सांद्रता में सुधार के लिए चिलेट और अजैविक लौह उर्वरकों का उपयोग अप्रभावी है। ये जड़ से लौह के खराब अवशोषण के कारण भी अप्रभावी है। अनाजों में, लौह उर्वरकों के पर्ण या मृदा अनुप्रयोगों ने पोषण गुणवत्ता में सुधार के लिए जिंक की तुलना में कम प्रभावशीलता दिखाई है।

धान का जैवसंवर्द्धन

पर्ण छिड़काव द्वारा लौह तत्व अंश में सुधार, चावल में लौह की कमी से निपटने का एक प्रभावी तरीका है। फेरस सल्फेट के साथ चावल का संवर्द्धन अंकुरित भूरे रंग के चावल में लौह की सांद्रता में 15.6 गुना की वृद्धि करता है। चावल के दानों में जिंक सांद्रता का जैवसंवर्द्धन और सांद्रता को बढ़ावा देने के लिए, पर्ण प्रयोग को एक प्रभावी पद्धति के रूप में अनुमोदित किया गया है। जिंक की कमी वाली मिट्टी में उगाए गए चावल के दानों में जिंक को बढ़ाने के लिए मिट्टी में जिंक उर्वरक के साथ-साथ पर्ण छिड़काव भी एक महत्वपूर्ण रणनीति बनकर उभरी है। सेलेनियम मनुष्यों के लिए एक महत्वपूर्ण तत्व है और एक शक्तिशाली एंटीऑक्सिडेंट भी है। यह मुख्य रूप से आहार से प्राप्त होता है। सेलेनियम की सांद्रता को उर्वरक के प्रयोग या पर्ण स्प्रे द्वारा बढ़ाया गया है।

गेहूं का जैवसंवर्द्धन

गेहूं के दानों में लौह संवर्द्धन, जैव-रासायनिक और रासायनिक उर्वरकों के उपयोग द्वारा किया जाता है। यूरिया के पर्णीय छिड़काव ने गेहूं में उच्च लौह तत्व के संचय में सकारात्मक सह-संबंध दिखाया है। ब्रेड और कठिया (ड्यूरम) गेहूं में जिंक उर्वरकों के पर्णीय और मिट्टी में अनुप्रयोग ने जिंक की सांद्रता में काफी सुधार किया है। तुर्की में जिंक तत्व की कमी वाली मिट्टी में जिंक सल्फेट के प्रयोग से डयूरम गेहूं में जिंक की सघनता और उपज में सुधार किया गया। ऑस्ट्रेलिया और भारत में मिट्टी में जिंक के अनुप्रयोग द्वारा गेहूं में जिंक की सांद्रता में इसी तरह की वृद्धि देखी गई। जिंक के पूर्ण अनुप्रयोग ने जिंक की कमी वाली मिट्टी में इसकी सघनता को बढ़ा दिया और फाइटिक अम्ल को कम करके जैव उपलब्धता में भी वृद्धि की है। फिनलैंड में पहले से ही राष्ट्रीय स्तर पर सेलेनियम के अनुप्रयोग को अपनाया गया है, इससे गेहूं में सेलेनियम सघनता में तत्काल वृद्धि दर्ज की गई।

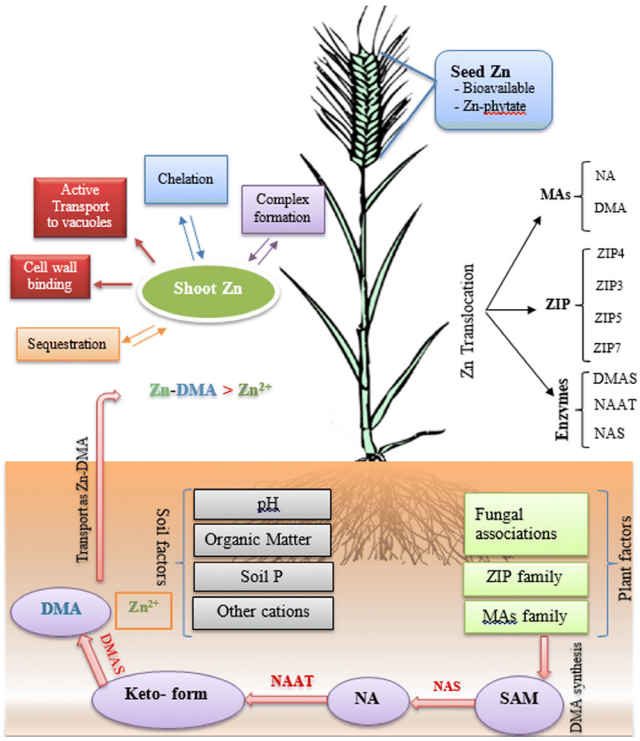

मक्का का जैवसंवर्द्धन

मक्का में अच्छी पैदावार और पोषण प्राप्त करने के लिए जिंक आवश्यक है। इसे मिट्टी और उर्वरकों के पर्ण अनुप्रयोग द्वारा प्राप्त किया जाता है। जिंक अनुप्रयोग तब अधिक प्रभावी होता है जब इसे मिट्टी में डाला जाता है, क्योंकि मक्का की जड़ों का लगभग 50 प्रतिशत शीर्ष परत (0 से 15 से.मी.) में होता है। यह पोषक तत्वों के उत्थान और वृद्धि को बढ़ाता है। मिट्टी में लौह और जिंक का अनुप्रयोग फसल की कटाई के बाद लौह और जिंक तत्व की मृदा में वृद्धि का कारण बनता है। सेलेनियम मनुष्यों तथा जानवरों के लिए महत्वपूर्ण है। कुछ एकल कोशिकाओं जैसे कवक, शैवाल और खाद्य फसलों में इसकी सांद्रता उर्वरकों के प्रयोगों से बेहतर हुई है। राइजोस्फीयर में मौजूद सूक्ष्मजीव पौधों में वृद्धि के लिए उनके विकास, संवर्द्धन तथा उपनिवेशीकरण द्वारा महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। राइजोबैक्टीरिया को बढ़ावा देने वाले इन पौधों की वृद्धि कार्बनिक पदार्थों को खनिज बनाने और अकार्बनिक पोषक तत्वों को बदलने में मदद करती है और प्रमुख फसलों में सूक्ष्म पोषक तत्वों को प्रभावी ढंग से सुधारने के लिए जैव संवर्द्धन को फसल पद्धति में भी शामिल किया गया है। मक्का में जिंक अंश में वृद्धि को विभिन्न साइनोबैक्टीरिया के साथ प्राप्त किया गया है।

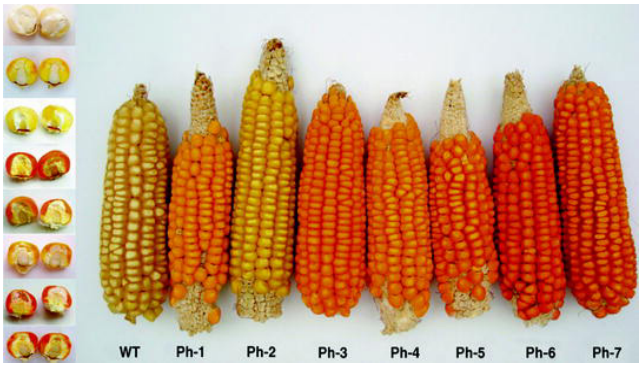

ज्वार का सस्य तकनीक द्वारा जैवसंर्द्धन

ज्वार एक दाने और चारे के लिए उगाई जाने वाली शुष्क भूमि वाली फसल है, जिसे मुख्यतय: कमजोर मृदा में उगाया जाता है। फसल के पोषक मूल्यों को उर्वरकों (जैविक और अकार्बनिक) के उपयोग से बढ़ाया जा सकता है, जो उपज पर एक समान प्रभाव डालते है। पौधों के विकास को बढ़ावा देने वाले जीवाणुओं और अब्बार्सकुलर माइकोराइजल कवक (AMF) का उपयोग करके पोषक तत्वों की सांद्रता में सुधार और इसके चयापचय में परिवर्तन के प्रयास किए गए हैं। मृदा में फॉस्फोरस और नाइट्रोजन की स्थिति में सुधार करके एजोस्पिरिलम और फॉस्फेट-घुलनशील बैक्टीरिया द्वारा ज्वार की उपज और प्रोटीन की मात्रा में वृद्धि दर्ज की गई।

जौ का जैवसंवर्द्धन

कार्बनिक और अकार्बनिक जैव उर्वरक के अनुप्रयोग द्वारा जौ में सूक्ष्म पोषक तत्वों की सांद्रता में सुधार दर्ज किया गया। फराहनी एवं अन्य (2011) ने अकार्बनिक उर्वरकों और वर्मीकम्पोस्ट के साथ-साथ जैवसंवर्द्धन के अनुप्रयोग द्वारा जौ में जिंक और लौह तत्व की सघनता में वृद्धि दर्ज की।

दलहन : सेलेनियम सांद्रता की वृद्धि हेतु सेलेनियम कॉम्प्लेक्स का पर्णीय अनुप्रयोग काफी कारगर सिद्ध होता है, यांग एवं अन्य (2003) ने चने में खनिज की कमी (जिंक, लौह, मैग्नीशियम, तांबा, कैल्शियम, मैंगनीज) को कम करने तथा पौधे के विकास को बढ़ावा देने के लिए एक्टिनोबैक्टीरिया के उपयोग को प्रभावशाली पाया। लौह और जिंक तत्व के लिए जैवसंवर्द्धन को अब्बार्सकुलर माइकोरिजल कवक के उपयोग द्वारा किया गया। जिंक सल्फेट हेप्टाहाइड्रेटे जिंक-एथिलीन डाई एलिन टेट्रा एसिटिक एसिड, सोडियम सेलेनिट के पर्णीय छिड़काव द्वारा चने में जिंक और सेलेनियम की सांद्रता में सुधार किया गया। मटर में जिंक तत्व की सघनता को पर्ण प्रयोग या मृदा अनुप्रयोगों के संयोजन से बढ़ाया गया। जिंक उर्वरक के प्रयोग से सेम में जिंक की सांद्रता में सुधार करने के लिए जैवसंवर्द्धन प्रभावी पाया गया। सेम में रासायनिक और जैविक उर्वरकों के अनुप्रयोग द्वारा नाइट्रोजन, पोटेशियम, मैंगनीज, तांबा, फॉस्फोरस और जिंक की सांद्रता को बढ़ाया गया।

दलहनी फसलों में सस्य तकनीक द्वारा जैवसंवर्द्धन

सोयाबीन

सेलेनियम-समृद्ध सोयाबीन का उत्पादन उर्वरकों के रूप में सेलेनियम जटिल लवणों के पर्ण प्रयोग द्वारा किया गया।

मटर

मटर दुनिया भर में दूसरी सबसे बड़ी दलहन है, जिसे उच्च प्रोटीन अंश के लिए भी जाना जाता है। इसमें जिंक संवर्द्धन को पर्णीय छिड़काव के साथ या मृदा के जिंक अनुप्रयोगों के साथ किया गया।

सेम

इसे सूखे अनाज के लिए भी उगाया जाता है तथा यह जिंक जैवसंवर्द्धन के लिए एक अच्छा दलहन है और इसे पर्णीय जिंक उर्वरक के प्रयोग द्वारा जिंक में समृद्ध किया जाता है। इसके अतिरिक्त यह भी पाया गया है कि जैविक और रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग ने सेम में तांबा, मैंगनीज और जिंक के अंश को भी बढ़ा दिया।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली द्वारा उपभोगक्ताओं की पोषणिक क्षमता व स्वास्थ्य में सुधार हेतु बायोफोर्टिफाइड किस्में

गेहूं: डब्ल्यूबी 2 जिंक (42.0 पीपीएम) और लौह (40.0 पीपीएम) से समृद्ध।

गेहूं: एचपीबीडब्ल्यू 1: उच्च लौह (40.0 पीपीएम) और जिंक (40.0 पीपीएम) युक्त।

मक्का: पूसा विवेक क्यूपीएम 9 उन्नत: देश का पहला प्रो विटामिन-ए युक्त मक्का।

मक्का: पूसा एचएम 8 उन्नत: 1.06 प्रतिशत ट्रिप्टोफेन और 3.62 प्रतिशत लाइसिन युक्त।

मक्का: पूसा एचएम 9 उन्नत: 0.68 प्रतिशत ट्रिप्टोफेन और 2.97 प्रतिशत लाइसिन युक्त।

बाजरा: एचएचबी 299: उच्च लौह (73.0 पीपीएम) एवं जिंक (41 पीपीएम) से युक्त।

बाजरा: एएचबी 1200: उच्च लौह (72.0 पीपीएम) से युक्त।

मसूर: पूसा अगेती मसूर: 65.0 पीपीएम लौह युक्त।

सरसों: पूसा डबल जीरो मस्टर्ड 31: तेल में इरुसिक अम्ल 2 प्रतिशत से कम और बीज में 30 पीपीएम से कम ग्लुकोसाइनोलेट।

आलू: भू सोना: उच्च बीटा कैरोटीन (14.0 मि.ग्रा.100 ग्राम)

शकरकन्द: भू कृष्णा: उच्च एंथेसाइनिन (90.0 मि.ग्रा. (100 ग्राम)

अनार: सोलापुर लाल: उच्च लौह एवं जिंक

सारांश

मानव को बेहतर स्वास्थ्य व अपनी शारीरिक क्रियाओं को पूरा करने के लिए दैनिक आहार में पौष्टिक तत्वों जैसे- कार्बोहाइड्रेट्स, वसा, प्रोटीन व विटामिनों के साथ अनेक सूक्ष्म तत्वों की आवश्यकता पड़ती है। जिनमें मुख्य रूप से जिंक, आयरन, विटामिन ए और आयोडिन इत्यादि हैं। फसल जैवर्द्धन सूक्ष्म तत्वों की उच्च मात्रा के साथ नई खाद्य फसल किस्मों को विकसित करने की तकनीक है। फसल जैवर्द्धन फसल सूक्ष्म पोषक तत्व कुपोषण के भार को कम करने के लिए एक महत्वपूर्ण वैकल्पिक कृषि आधारित स्रोत है। सस्य तकनीकियों द्वारा फसल संवर्द्धन विधि सुगम, आसान व कम खर्चीली तो है साथ ही परिणाम भी बहुत कम समय में मिल जाते हैं। इसके अतिरिक्त जिंक व आयरनयुक्त उर्वरकों का खड़ी फसल में पर्णीय छिड़काव करने से पोषक तत्वों मुख्यतः नाइट्रोजन के गैसीय, स्थिरीकरण व विनाइट्रीकरण इत्यादि द्वारा होने वाले ह्रास को भी कम किया जा सकता है। पूसा संस्थान, नई दिल्ली में किए गए विभिन्न प्रयोगों से धान के दानों में जिंक की मात्रा में उल्लेखनीय वृद्धि देखी गई।

ख़रीफ़ ऋतु में दलहनी फसल से अधिक उपज और लाभ कैसे प्राप्त करें?

रमनजीत कौर, समरथ लाल मीना, शीतल कुमार एवं सुनील कुमार

सस्य विज्ञान संभाग

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110 012

अरहर

उन्नत किस्में

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान तथा विभिन्न कृषि विश्वविद्यालयों द्वारा भारतवर्ष के उत्तरी क्षेत्रों के लिए अरहर की अनेक किस्मों का विकास किया गया हैं, जिनकी औसत उपज लगभग 20 से 25 क्विंटल/हैक्टेयर हैं। उनके बारे में विस्तृत जानकारी निम्नलिखित सारणी में दी गई हैं:

प्रक्षेत्र	किस्में	जारी करने का वर्ष	क्षेत्रों की ग्रहयता
उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र (उत्तर प्रदेश, हरियाणा, पंजाब और उत्तरी राजस्थान)	पी पी एच4 (संकर) (एस डी)	1994	पंजाब
	पूसा 992 (एस डी)	2002	संपूर्ण क्षेत्र
	पूसा 991	2005	संपूर्ण क्षेत्र
	पूसा 2001	2006	संपूर्ण क्षेत्र
	पूसा 2002	2008	संपूर्ण क्षेत्र
उत्तरी-पूर्वी क्षेत्र (मध्यम और पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल और असम	आजाद (एल डी)	1999	उत्तर प्रदेश, बिहार
	विरसा अरहर-1 (एम डी) (डब्ल्यू आर)	1992	बिहार के पहाड़ी क्षेत्र
	पूसा-9 (एल डी) (प्री रबी) (ए आर)	1993	संपूर्ण क्षेत्र
	नरेंद्र अरहर-1 (एल डी) एस एम आर)	1997	पूर्वी उत्तर प्रदेश
	बी.7 (श्वेता) (एल डी)	1982	पश्चिम बंगाल
	एम ए एल 13 (एल डी)	2004	संपूर्ण क्षेत्र
उत्तर-पहाड़ी क्षेत्र (हिमाचल प्रदेश, जम्मू कश्मीर और उत्तर प्रदेश के पहाड़ी क्षेत्र)	आई सी पी एल 151 (जागृति) (एस डी)	1989	संपूर्ण क्षेत्र
	आई सी पी एल 85010		हिमाचल प्रदेश के
	आई सी पी एल 85010	1994	मैदानी भाग
	आई सी पी एच 8 (संकर) एस डी	1991	संपूर्ण क्षेत्र

एस डी : कम समय में पकने वाली किस्म
एल डी : लंबी अवधि में पकने वाली किस्म
ए आर : आल्टेनेरिया रोधी
एस एम आर : स्टरीलीही मौजेक रोधी
प्री. रबी : रबी पूर्व
डब्ल्यू आर : विल्ट रोधी

खेत की तैयारी

अरहर की फसल उगाने के लिए खेत की अच्छी तैयारी होनी चाहिए। रबी की फसल की कटाई के बाद खेत की गहरी जुताई करके खुला छोड़ देना चाहिए, जिससे कि भूमि में उपस्थित कीड़े सूर्य की गर्मी से मर जाएं। अरहर बोने से पहले खेत में सिंचाई करते हैं। दो या तीन दिन बाद खेत जुताई योग्य होने पर देशी हल या कल्टीवेटर या हेरो से खेत की दो-तीन बार जुताई की जाती हैं तथा साथ ही पाटा चलाकर खेत को समतल कर देते हैं।

बुआई

जहां सिंचाई की सुविधा उपलब्ध हो, वहां जून के प्रथम सप्ताह में बुआई करना लाभप्रद रहता हैं। उत्तरी-पश्चिमी क्षेत्रों जैसे पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, दिल्ली एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश के इलाके में जून के दूसरे सप्ताह में पलेवा करके अरहर की अगेती किस्मों की बुआई करें। अति अगेती किस्में मानसून की पहली बरसात के बाद भी बुआई कर सकते हैं। उत्तर-पूर्वी क्षेत्रों जैसे बिहार, बंगाल और पूर्वी उत्तर प्रदेश में अरहर की बुआई मानसून की पहली बरसात के बाद जून के अंतिम सप्ताह में शुरू होती हैं। बीज बोने से पहले उसे जीवाणु टीका तथा फंफूदीनाशक दवा से उपचारित करें। पहले बीज को फंफूदीनाशक दवा बाविस्टीन 2 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। उसके बाद ही जीवाणु टीका से उपचारित करें।

जून माह या जुलाई के प्रथम सप्ताह में बोते समय पंक्ति से पंक्ति की दूरी 50 सें.मी. तथा पंक्ति में पौधे से पौधे की दूरी 15 सें. मी. होनी चाहिए। रबी पूर्व अरहर की बुआई में पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30 सें.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 सें.मी. होनी चाहिए। ख़रीफ़ में जहां पानी खड़ा रहने की समस्या होती हैं वहां उठी हुई क्यारियों में कूंड सिंचाई विधि द्वारा बुआई करनी चाहिए। बीज की मात्रा 15-20 कि.ग्रा./हैक्टेयर होनी चाहिए जोकि बीज के आकार और बुआई में पंक्तियों एवं पौधों की दूरी पर निर्भर करती हैं।

पोषक तत्व प्रबंधन

दलहनी फसल होने के कारण, अरहर के पौधे अपनी नाइट्रोजन की आवश्यकता मुख्यतः स्वयं अपनी जड़ों में पाए जाने वाली ग्रंथिकाओं द्वारा वायुमंडलीय नाइट्रोजन का यौगिकीकरण करके कर लेते हैं। बलुई-दुमट या दुमट भूमियों में, जहां नाइट्रोजन की मात्रा कम हो, प्रति हैक्टेयर करीब 20 से 30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन डालना आवश्यक होता हैं। फॉस्फोरस तथा पोटाश के लिए मृदा परीक्षण करना आवश्यक हैं। यदि भूमि में उपस्थित फॉस्फोरस एवं पोटाश की मात्रा कम हो, तो प्रति हैक्टेयर 80 से 100 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 40 से 60 कि.ग्रा. पोटाश डालना चाहिए। अरहर की अगेती किस्मों के लिए प्रति हैक्टेयर 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस और 40 कि.ग्रा. पोटाश की अनुशंसा की गई हैं।

जल प्रबंधन

जून के प्रथम सप्ताह में बोई गई फसल को वर्षा प्रारंभ होने से पहले दो या तीन हल्की सिंचाई करनी आवश्यक होती हैं। यदि वर्षा का वितरण ठीक प्रकार से न हो और मौसम लंबे समय तक सूखा रहे तो एक सिंचाई फूल निकलने के पहले और दूसरी उसके उपरांत फलियां बनते समय देनी चाहिए। अंतिम सिंचाई फसल की कटाई के 7 दिन पहले दें और फसल काटकर अगली फसल की बुआई के लिए खेत तैयार करें जिसमें समय की बचत होगी और गेहूं की फसल भी समय पर बोई जा सकेगी। खड़े पानी में अरहर की फसल को काफी नुकसान होता हैं, इसलिए खेत में जल निकास का समुचित प्रबंध होना आवश्यक है। जहां जलजमाव की समस्या हैं, वहां मेड़ों पर उगाई गई अरहर की फसल की पैदावार अधिक होती है।

खरपतवार प्रबंधन

बुआई के 45-50 दिन तक खरपतवारों की रोकथाम करना आवश्यक होता हैं। उसके बाद फसल की उपज जोर पकड़ लेती हैं और खरपतवार कोई विशेष हानि नहीं पहुंचा पाती हैं। खुरपी या कसोला के द्वारा फसल की बुआई के 30 और 45 दिन बाद, दो निराई-गुड़ाई करके खरपतवारों पर नियंत्रण पाया जा सकता है। खरपतवार नियंत्रण के लिए रसायनों का भी प्रयोग किया जा सकता हैं। इसके लिए एलाक्लोर (2 कि.ग्रा./हैक्टेयर) या पैन्डीमेथालिन (1 कि.ग्रा./हैक्टेयर) 600 लीटर पानी में घोल बनाकर बुआई के बाद तथा उगने से पहले छिड़काव कर दें। इसके अलावा फ्लुक्लोरेलिन 1 कि.ग्रा./हैक्टेयर 600 लीटर पानी में घोल बनाकर, बीज बोने से पहले भूमि की ऊपरी सतह पर छिड़काव कर देने से खरपतवार नष्ट हो जाते हैं। अरहर में अंतर-फसलीकरण/मिश्रित खेती से भी खरपतवारों का प्रकोप कम होता है।

कीट प्रबंधन

कीट अनेक प्रकार से अरहर की फसल को क्षति पहुंचता है, मुख्य हानिकारक कीट हैं: फली बेधक, प्लूम माथ, अरहर की फली बेधक मक्खी, फली बग, गेल्युसिड बीटल और जैसिड आदि।

फली बेधक: यह अरहर का मुख्य हानिकारक कीट हैं। युवा कीट पत्तियां खाते हैं और फली बनने तत्पश्चात उनमें छेद करके बीज खाते हैं। इस कीट से फसल को 10 से 80 प्रतिशत तक प्रतिवर्ष नुकसान हो जाता है। इसके नियंत्रण के लिए 0.07 प्रतिशत एन्डोसल्फान या 0.04 प्रतिशत मोनोक्रोटोफास 0.1 प्रतिशत इन्डाक्साकार्ब (अवान्ट) घोल का दो छिड़काव, पहला फूल आने के समय तथा दूसरा फली बनते समय करना चाहिए।

पिंच्छ की शलभ (प्लूम माथ):

यह कीट भारत के अनेक भाग विशेषकर आंध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, तमिलनाडु, महाराष्ट्र और कर्नाटक में अरहर के उत्पादन क्षेत्रों में पाई जाती हैं। इसकी इल्ली अरहर की फलियों को काटकर या छेदकर हानि पहुंचाती हैं। इस कीट का नियंत्रण एन्डोसल्फान 0.07 प्रतिशत या मोनोक्रोटोफास 0.04 प्रतिशत घोल के छिड़काव से किया जा सकता हैं।

अरहर की फली बेधक मक्खी:

उत्तरी भारत में यह कीट अरहर की फसल को काफी हानि पहुंचाता हैं। इस कीट के द्वारा 20 से 26 प्रतिशत तक अरहर की फसल को प्रतिवर्ष नुकसान होता हैं। इसका नियंत्रण मोनोक्रोटोफास (0.04 प्रतिशत घोल) या एण्डोसल्फान (0.07 प्रतिशत) छिड़कने से किया जा सकता हैं।

गेल्युसिड वीटल और जैसिड:

यह कीट अरहर की पत्तियां खाता है तथा सामान्य रूप से खेतों में पाया जाता है। मौसम के प्रारंभ में इन कीटों से हानि होती हैं। इन कीटों की रोकथाम फसल के अन्य कीटों की रोकथाम के साथ हो जाती है। अगर फिर भी आवश्यकता हो तो 5 प्रतिशत नीम के रस के घोल का छिड़काव करें।

फली बग:

इस कीट के वयस्क तथा अप्सराएं (नीम्फस) पत्तियों, कलियों, फूलों तथा फलियों के रस को चूसती हैं, जिससे की फलिया सिकुड़ जाती हैं और सही तरीकें से नहीं बन पाती। इसके नियंत्रण के लिए मोनोक्रोटोफास (0.04 प्रतिशत घोल) या डाइमिथोएट (0.03 प्रतिशत घोल) का छिड़काव करना चाहिए।

मारुका: एक अन्यंत हानिकारक कीट हैं, यह फूल, पत्ती और फली को मिलाकर एक जाल बुन लेता हैं तथा इसके अंदर बैठकर सभी कुछ चट कर जाता हैं। इसके बचाव के लिए बिना किसी देरी के 1 मि.लि./लि. पानी की दर से 'एवाट' (इंडाक्साकार्ब) का छिड़काव करें।

रोग प्रबंधन

तना विगलन: इसके रोगग्रस्त पौधे शीघ्रता से सूखकर मर जाते हैं। रोग की बढ़ी हुई अवस्था में जमीन की सतह के पास भूरे रंग के क्षत बन जाता हैं। इस रोग के नियंत्रण के लिए रोगरोधी किस्में उगानी चाहिए। इसके साथ ही फसल ऐसे खेत में बोनी चाहिए जिसमें पानी के निकास का अच्छा प्रबंध हो। बोने से पहले बीज को रिडोमील एम जेड-72 का 2.5 ग्रा/कि.ग्रा. द्वारा उपचार करना चाहिए।

उकठा: रोगी पौधों की पत्तियां पीली पड़ जाती हैं और बाद में पौधा मुरझाकर सूख जाता हैं। अधिक वर्षों वाले फसल चक्र अपनाने के साथ खेतों में खरपतवार नियंत्रण बनाए रखने व गर्मी की जुताई करने से भूमि में पड़े रोगजनक नष्ट हो जाते हैं। अरहर की फसलचक्र तंबाकू के साथ होने से बीमारी का प्रकोप कम हो जाता हैं। रोग से प्रभावित पौधों को कई वर्ष तक लगातार उखाड़ कर जला देने से भी रोग कम हो जाता है। इस रोग की रोकथाम का सबसे अच्छा एवं सरल उपाय रोगरोधी किस्मों का बोना हैं। बिहार में एन पी 15 व एन पी 38 किस्में काफी हद तक रोगरोधी पाई गई हैं। सेलेक्शन एन पी डब्ल्यू आर 15 व सेलेक्शन-2 ई-1 में भी रोग कम लगते हैं।

सर्कोस्पोरा पर्ण चित्तियां: रोग की रोकथाम हो सके उसके लिए एक ही खेत में लगातार अरहर नहीं बोनी चाहिए तथा खेत खरपतवारों से मुक्त रखना चाहिए। इसकी रोकथाम के लिए जिनेब जैसे कवकनाशी (0.3 प्रतिशत) से 10 दिन के अंतर पर आवश्यकतानुसार दो-तीन छिड़काव करना चाहिए।

वंध्यता मोजैक: इस रोग से प्रभावित पौधे हल्के हरे दिखाई देता हैं तथा स्वस्थ हरे पौधों से बिल्कुल भिन्न होता हैं। प्रायः

रोग ग्रसित पौधों की पत्तियां आकार में छोटी हो जाती हैं जिन पर अनियमित आकार के हरे हल्के और साधारण हरे रंग के धब्बे पड़ जाता हैं। रोग ग्रसित पौधों में फूल व फली उत्पन्न नहीं होती हैं। यह रोग एक विषाणु द्वारा फैलता हैं। इस रोगजनक विषाणु का वाहक इरिओफिडमाइट हैं। इस रोग के नियंत्रण के लिए खेतों में सफाई रखनी चाहिए व खरपतवार आदि उखाड़ देने चाहिए तथा जिस खेत में अरहर बोना हैं, यदि उसके आसपास अरहर के पुराने या अपने आप उगे पौधे हों, तो उन्हें नई फसल लगाने से पूर्व उखाड़ देना चाहिए। रोग नियंत्रण हेतु बीज को इमिडाक्लोप्रिड-70 डब्ल्यूएस 3.0 ग्रा./कि.ग्रा. से उपचारित करें तथा बुआई के 30 व 45 दिन पर कोन्फीडोर - 200 एस एल (100 मि.लि. दवा 500 लीटर पानी) का छिड़काव प्रति हैक्टेयर की दर से करना चाहिए।

कटाई एवं मड़ाई

अरहर की कुछ किस्में 5-6 महीने में तथा कुछ किस्में 10 महीनों में पककर तैयार होती हैं। अगेती किस्में नवंबर-दिसंबर में और पछेती किस्में मार्च-अप्रैल में काटी जाती हैं। फसल की कटाई परंपरागत कृषि यंत्रों/हंसिया/गंडासे आदि से की जाती हैं। फसल सूख जाने पर फलियों को काटकर या पीटकर दाने निकाले जाते हैं। यांत्रिक विधि में पूलमेन थ्रेशर का उपयोग किया जाता हैं।

उपज

अरहर की फसल की पैदावार उगाई गई किस्म तथा उसके प्रबंधन पर निर्भर करती हैं। सिंचित क्षेत्रों में शुद्ध फसल से 20-25 क्विंटल/हैक्टेयर तक दाने की पैदावार प्राप्त हो जाती हैं।

मूंग

उन्नत किस्में

मूंग की परिपक्वता के आधार पर इसकी किस्मों को अगेती, मध्यम एवं पछेती किस्मों में विभाजित किया गया हैं। भारत के विभिन्न क्षेत्रों के लिए अनुमोदित मूंग की किस्में तथा उनकी विशेषताएं यहां पर दी गई हैं –

पूसा संस्थान द्वारा विकसित मूंग की प्रमुख किस्मों का उल्लेख सारणी-1. में किया गया है।

सारणी-1. पूसा संस्थान द्वारा विकसित मूंग की प्रमुख किस्में

(1) ग्रीष्म/ख़रीफ़ मौसम में बुआई				
किस्म	**अनुमोदित वर्ष**	**अनुमोदित क्षेत्र/परिस्थिति**	**उपज (क्विं/है.)**	**विशेषताएं**
पूसा विशाल	2001	उत्तर पश्चिमी मैदानी क्षेत्र (पंजाब, हरियाणा, पश्चिम उत्तर प्रदेश, राजस्थान, जम्मू कश्मीर तथा हिमाचल प्रदेश का मैदानी क्षेत्र)/ बसंत/ग्रीष्म मौसम में बुआई के लिए	12 क्विं/है.	यह किस्म विषाणु जनित पीली चित्ती रोग की प्रतिरोधी है। यह किस्म एक साथ पकने वाली है जो बसंत के मौसम में 65-70 दिनों में और ग्रीष्म में 60-65 दिनों में पककर तैयार हो जाती है।
पूसा रतना	2005	राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, दिल्ली/ ख़रीफ़ मौसम में बुआई के लिए	12 क्विं/है.	यह किस्म एक साथ पकने वाली है जो 65-70 दिनों में पककर तैयार हो जाती है यह किस्म विषाणु जनित पीली चित्ती रोग के लिए सहिष्णु है।
पूसा 0672	अप्रैल 2009 में चिह्नित की गई	उत्तरी पहाड़ी क्षेत्र/ख़रीफ़ मौसम में बुआई के लिए	9.5-10 क्विं/है.	यह किस्म मूंग के विषाणु जनित पीली चित्बी रोग व अन्य रोगों की सहिष्णु है। इसका दाना चमकदार हरा, आकर्षक एवं मध्यम आकार का होता है।
(2) ख़रीफ़ मौसम में बुआई				
पूसा-9531	2001	पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, राजस्थान, जम्मू कश्मीर तथा हिमाचल प्रदेश का मैदानी क्षेत्र	12 क्विं/है.	यह किस्म 60-65 दिनों में पककर तैयार हो जाती है तथा विषाणु जनित पीली चित्ती रोग एवं कीटों के प्रति सहिष्णु है।

अन्य किस्में

i. **टाइप 44:** इसका पौधा बौना होता है। तना अर्धविस्तारी और पत्तियां गहरे हरे रंग की होती हैं। फूल पीले होते हैं। बीज गहरे हरे रंग के और मध्यम आकार के होते हैं। फसल पकने में 60-70 दिन का समय लेती हैं। यह किस्म सभी मौसमों में उगाई जा सकती हैं।

ii. **मूंग एस 8:** पौधा मध्यम ऊंचाई का और सीधे बढ़ने वाला होता हैं। तना विस्तारी होता हैं, फूल हल्के पीले रंग के होते हैं। फलियां 6-8 सें.मी. लंबी, चिकनी व काली होती हैं। एक फली में 10-12 तक हरे चमकदार बीज पाए जाते हैं। फसल तैयार होने में 75-80 दिन लेती हैं। इसमें पीले मोजेक रोग का प्रकोप कम होता है। यह किस्म ख़रीफ़ ऋतु में उगाई जा सकती हैं।

iii. **मूंग जवाहर 45:** इसका पौधा लंबा व सीधा होता है, पत्तियां हरी होती हैं। फूल पीले तथा बीज चमकदार व हरे रंग के होते हैं। फसल पकने में 80 दिन का समय लेती हैं। यह किस्म ख़रीफ़ के लिए उपयुक्त हैं।

iv. **पी एस 16:** पौधे की लंबाई 45 सें.मी. तक होती हैं तथा वह सीधा बढ़ने वाला होता हैं। पत्तियां पीलापन लिए हुए हरे रंग की होती हैं। फूल पीले तथा बीज चमकदार हरे रंग के होते हैं। फसल तैयार होने से 60-70 दिन का समय लगता हैं। यह किस्म ख़रीफ़ तथा ग्रीष्म, दोनों ऋतुओं के लिए उपयुक्त है।

v. **पी एस 10 (कांति):** इसका पौधा भी सीधा और फूल पीले बड़े आकार के होते हैं। फसल 75 दिन में तैयार हो जाती हैं। इस किस्म की फलियां एक साथ पकनी हैं, जिसके फलस्वरूप इसकी कटाई एक साथ की जा सकती हैं। यह किस्म ख़रीफ़ के लिए उपयुक्त हैं।

vi. **मूंग पूसा बैसाखी:** यह किस्म टाइप 44 के चयन से निकाली गई हैं। इसका पौधा बौना तथा झाड़ीनुमा होता हैं। पत्तियां हरी होती हैं तथा तने में हल्के गुलाबी रंग के धब्बे होते हैं। फूल भूरा रंग लिए हुए क्रीमी रंग के तथा बीज हरे रंग के मध्यम आकार के होते हैं। पौधे पर प्रकाश की अवधि का प्रभाव नहीं पड़ता। फसल 60 से 70 दिन में तैयार हो जाती हैं। सभी फलियां लगभग एक साथ पकती हैं जिससे कटाई में सुविधा होती हैं। यह किस्म ग्रीष्म ऋतु के लिए अधिक उपयुक्त हैं।

vii. **पंत मूंग 1:** इसका पौधा सीधा बढ़ने वाला गहरे हरे रंग का होता हैं। बीज हरे रंग के मध्यम आकार के होते हैं। यह किस्म पीला मोज़ेक विषाणु एवं सर्कोस्पोरा पर्ण चित्ती रोग के लिए काफी हद तक प्रतिरोधी हैं। यह किस्म ख़रीफ़ में 70 से 75 एवं जाएद में 65 से 70 दिन लेती हैं।

viii. **पंत मूंग 2:** इसका पौधा मध्यम ऊंचाई का होता है। पकने के लिए 60 से 65 दिनों की आवश्यकता पड़ती हैं। इसे ख़रीफ़ में उगाना चाहिए। ख़रीफ़ में यह 65 से 70 दिन लेती हैं। यह किस्म पीला मोज़ेक विषाणु रोग के लिए मध्यम प्रतिरोधी हैं।

ix. **पंत मूंग 3:** इसके पौधे सीधे बढ़ने वाले होते हैं। पकने के लिए 75-85 दिनों का समय लेती हैं। इसे ख़रीफ़ में उगाने से अधिक लाभ मिलता हैं। बीज चमकीले एवं मध्यम आकार के होते हैं। बीज 65-70 दिन में पकती हैं। यह किस्म बहुरोग प्रतिरोधी प्रजाति के हैं।

x. **पंत मूंग 4:** इसका पौधा मध्यम ऊंचाई का होता हैं। यह मूंग तथा उड़द दोनों के संयोग से विकसित की गई हैं। बीज चमकीले हरे एवं मध्यम आकार के होते हैं। यह बहुरोग प्रतिरोधी प्रजाति हैं। इसके पकने की अवधि 65 से 70 दिन हैं। यह किस्म उत्तर-पूर्वी भारत के मैदानी क्षेत्रों में ख़रीफ़ मौसम के लिए अनुमोदित की गई हैं।

xi. **पंत मूंग 5:** यह जाएद मौसम के लिए उपयुक्त हैं। इसके दाने चमकीले तथा बड़े आकार (1000 दानों का भार 50-55 ग्रा.) के होते हैं। फलियां गुच्छों में लगती हैं। यह किस्म उत्तरी भारत के मैदानी क्षेत्रों के लिए अनुमोदित हैं। इसकी औसत उपज 15-18 क्विंटल/हैक्टेयर हैं।

खेत की तैयारी

ग्रीष्मकालीन फसल को बोने के लिए गेहूं को खेत से काट लेने के बाद केवल सिंचाई करके (बिना किसी प्रकार की खेत की तैयारी करके) मूंग बोई जाती हैं। परंतु अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए एक बार हैरो चलाकर जुताई करके पाटा फेर कर खेत तैयार करना ठीक रहता हैं।

बुआई

वर्षा ऋतु की फसल को मध्य जुलाई से अगस्त के दूसरे सप्ताह तक बोना चाहिए। वसंतकालीन फसल फरवरी के दूसरे पखवाड़े या मार्च में बोनी चाहिए। इसी प्रकार ग्रीष्मकालीन फसल को गेहूं काटने के तुरंत बाद बो देना आवश्यक होता हैं क्योंकि बुआई में एक या दो दिन की भी देरी होने से पैदावार कम हो जाती हैं। ख़रीफ़ की फसल को 30 से 35 सें.मी. की दूरी पर पंक्तियों में बोना चाहिए और पौधे से पौधे की दूरी लगभग 7 से 10 सें.मी. होनी चाहिए। किस्म के अनुसार इसके लिए 12 से 15 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टेयर लगेगी। बसंत तथा ग्रीष्मकालीन ऋतु की फसल के पौधे की बढ़वार कम होती हैं। इसलिए 25-30 से.मी. पंक्ति से पंक्ति की दूरी पर्याप्त हैं। इसके लिए 20 से 25 कि.ग्रा. बीज/हैक्टेयर लगेगी। बीज को कवकनाशी रसायन जैसे थीरम से उपचारित करके बोना चाहिए। बोने के लिए सीडड्रिल का प्रयोग किया जा सकता है।

पोषक तत्व प्रबंधन

भारत के विभिन्न भागों में किसानों के खेतों पर किए गए परीक्षण से यह सिद्ध हुआ हैं कि 15-20 कि.ग्रा./हैक्टेयर नाइट्रोजन देने से मूंग की बढ़वार अच्छी होती हैं। कम उर्वरक शक्ति वाली भूमि में 40-50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस/हैक्टेयर डालना भी आवश्यक हो जाता है।

जल प्रबंधन

ग्रीष्म व बसंत कालीन मूंग की फसल को 4 से 5 सिंचाई देना आवश्यक होता हैं। प्रथम सिंचाई बुआई के 20 से 25 दिन बाद व अन्य सिंचाई 12 से 15 दिन के अंतर पर करें। वर्षा ऋतु में फसल की आवश्यकता अनुसार सिंचाई करें। वर्षा ऋतु में मूंग के लिए उचित जल-निकास की व्यवस्था आवश्यक है।

खरपतवार प्रबंधन

बोने के बाद 35-40 दिन के भीतर खरपतवारों की सघनता के अनुसार एक या दो निराई-गुड़ाई पर्याप्त होती हैं। बुआई के तुरंत बाद 2 कि.ग्रा./हैक्टेयर लासो (सक्रिय अवयव) का 1000 लीटर पानी में घोल बनाकर भूमि पर छिड़क देने से खरपतवारों का काफी समय के लिए नियंत्रण हो जाता है।

कीट प्रबंधन

i. **फफोला भृंग:** यह बहुभक्षी कीट लगभग पूरे देश में मूंग की फसल को हानि पहुंचाता हैं। इसके वयस्क, फूलों को चट कर जाते हैं और उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता हैं। इसका कीटनाशकों द्वारा नियंत्रण नहीं हो पाता हैं। रात्रि में प्रकाश पाश का प्रयोग करके इस कीट के प्रजनन को कम किया जा सकता हैं। इसके अलावा दस्ताने पहनकर कीटों को खेत में एकत्रित किया जा सकता हैं।

ii. **सूंडियां:** मूंग की फसल को नुकसान पहुंचाने वाली सूंडियों में हेलिकोवर्पा और तंबाकू की सूंडी प्रमुख हैं। हेलिकोवर्पा की सूंडी फली में छेद कर उसका अंदर का गूदा खा जाती हैं और तंबाकू की सूंडी मुख्यतः पत्तियों को बहुत तेजी से खाती हैं। इस कीट की निगरानी के लिए 5 फेरोमोन ट्रैप प्रति हैक्टेयर लगाएं तथा आवश्यकतानुसार बी टी और एच एन पी वी का छिड़काव करें। कीटनाशक एंडोसल्फान (2 मि.लि./लि.) अथवा डेल्टामेथ्रिन (1 मि.लि./लि.) का छिड़काव कीटों की संख्या को ध्यान में रखकर करें। तंबाकू की सूंडियों (छोटी अवस्था) को और उनके अंडों को चुनकर नष्ट कर दें। आवश्यकता होने पर एन पी वी का छिड़काव करें।

रोग प्रबंधन

सर्कोस्पोरा पर्ण-चित्ती: पत्तियों पर प्रायः वृत्ताकार तथा कभी-कभी कोणीय 0.5-4 एमएम (औसत 3-4 मि.मी.) व्यास के विक्षत प्रकट होते हैं। जिसका रंग बैंगनी लाल तथा मध्य भाग भूरा होता हैं। कभी-कभी रोग ग्रस्त भागों के साथ मिलने पर पत्ती की दो सिराओं के बीच अनियमित आकार का धब्बा बन जाता हैं। पत्ती की ऊपरी सतह पर धब्बे अधिक स्पष्ट होते हैं। अधिक धब्बे बनने के कारण फलियों का रंग काला पड़ जाता है और रोग की उग्र अवस्था में बीज भी संक्रमित हो जाते हैं। तनों पर बड़े आकार की चित्तियां बन जाती हैं। रोग के लक्षण दिखाई देने पर 0.05 प्रतिशत वाविस्टीन या 0.2 प्रतिशत जिनेब का छिड़काव करना चाहिए। 1000 लीटर घोल एक हैक्टेयर के लिए पर्याप्त होता है तथा इसे 7-10 दिन के अंतर पर दोहराते हैं। कुल 3-4 छिड़कावों से रोग का अच्छा नियंत्रण होता हैं। खेत में पड़े अवशेषों को निकालकर जलाने से आरंभिक निवेश द्रव्य की मात्रा कम हो जाती है।

पीला मोज़ेक: पीली कुर्बरता के रूप में यह रोग मूंग की रोग ग्राही जातियों में अधिक व्यापक होता हैं। नई उगती हुई पत्तियों में प्रारंभ से ही कुर्बरता के लक्षण दिखाई देते हैं। जिन पत्तियों में पीली कुर्बरता या पीली ऊतकक्षय कर्बरता के मिले-जुले लक्षण दिखाई देते हैं, उनके आकार छोटे रह जाते हैं। ऐसे पौधों में बहुत कम व छोटी फलियां होती हैं। ऐसी फलियों का बीज सिकुड़ा हुआ और मोटा व छोटा होता है। यह रोग सफेद मक्खी द्वारा फैलता है। इसलिए यह रोगवाहक सफेद मक्खी की रोकथाम से नियंत्रित हो सकता है। खेत में ज्यों ही रोगी पौधे दिखाई दे, डायमेथाक्साम (एक्टाश) या इमिडाक्लोप्रिड (कन्फीडोर) 0.02 प्रतिशत मेटासिस्टाक्स 0.1 प्रतिशत का छिड़काव कर दें। छिड़काव को 15-20 दिन के अंतर पर दोहराएं और कुल 3-4 छिड़काव करें। छिड़काव के 24 घंटे के बाद रोगी पौधे को उखाड़ कर जला देना चाहिए। प्रति हैक्टेयर 1000 लीटर में बना घोल पर्याप्त होता हैं। पीला मोज़ेक रोग ग्रीष्मकालीन तथा बसंतकालीन फसल में कम तथा वर्षा ऋतु में ज्यादा लगता हैं। बीज उपचार के लिए कीटनाशी रसायन क्रुजर या गऊचो का प्रयोग 4 ग्रा. प्रति कि.ग्रा. की दर से करें।

मोज़ेक: रोग का लक्षण अनियमित हल्के हरे क्षेत्र के रूप में पत्तियों पर प्रकट होता हैं। पत्तियां विरूपित होकर, आकार में छोटी हो जाती हैं और किनारे की ओर मुंह मोड़ लेती हैं। इस रोग की रोकथाम के निम्न उपाय किए जा सकते हैं।

i. रोगी पौधे से प्राप्त बीज को काम में नहीं लाना चाहिए।

ii. ज्यों ही रोग के लक्षण दिखाई दें रोगी पौधे को उखाड़ कर जला देना चाहिए।

iii. खेती की सफाई हेतु खरपतवार निकालते रहें तथा कीटों का नियंत्रण करना चाहिए।

कटाई एवं गहाई

वर्षा ऋतु में जब पौधों की अधिकतर फलियां पककर काली हो जाती हैं तो फसल काटी जा सकती है। ग्रीष्म तथा बसंतकालीन फसलों में जब 50 प्रतिशत फलियां पक जाए, फलियों की पहली तुड़ाई कर लेनी चाहिए। इसके बाद दूसरी बार फलियों के पकने पर कटाई की जा सकती है। फलियों को खेत में सूखी अवस्था में अधिक समय तक छोड़ने से वे चटक जाती हैं और दाने बिखर जाते हैं जिससे उपज की हानि होती है। फलियों से बीज को समय पर निकाल दें।

उपज

वर्षा ऋतु की फसल से प्रति हैक्टेयर 10 क्विंटल पैदावार मिल जाती है। ग्रीष्मकालीन फसल में समुचित प्रबंध द्वारा 10 से 15 क्विंटल तक पैदावार लेना संभव हैं। साथ ही लगभग 15-20 क्विंटल सूखा चारा भी प्राप्त हो जाता हैं।

उड़द

उन्नत किस्में

उड़द की प्रमुख उन्नत किस्में विभिन्न प्रांतों व क्षेत्रों के अनुसार नीचे सारणी में दर्शाई गई है।

उन्नत किस्में	संस्तुत क्षेत्र	उत्पादन क्षमता (क्विंटल/हैक्टेयर)
टाइप9, टाइप 19	उड़द उगाने वाले समस्त राज्य	10-15
पंत उड़द 30	पहाड़ी क्षेत्रों के लिए, साथ ही पीला मौजेक के प्रतिरोधी	10-12
बसंत बहार	उड़द उगाने वाले सभी क्षेत्रों के लिए और पीले विषाणु रोग के प्रतिरोधी	10-13
उत्तरा	पूर्वी मैदानी व उत्तर पश्चिमी मैदानी क्षेत्रों के लिए तथा विषाणु रोग के प्रति अवरोधी	10-15
पंत उड़द 40	उड़द उगाने वाले क्षेत्रों तथा अंत: फसलों के साथ उगाने के लिए	10-13
शेखर 2	महाराष्ट्र, हरियाणा, पंजाब	10-14
नरेंद्र उड़द 1	उड़द उगाने वाले समस्त क्षेत्र	10-12
पंत उड़द 35	ख़रीफ़ व जाएद दोनों मौसम में उगाने के लिए उपयुक्त	10-14
एलवीजी 623, एलवी 611, वामबान1, वामबान2, वामबान3	दक्षिणी भारत के उड़द उगाने वाले समस्त राज्यों के लिए उपयुक्त	10-14

खेत की तैयारी

खेत की अच्छी तैयारी परिणामस्वरूप अच्छा अंकुरण व फसल में एक समानता के लिए बहुत जरूरी है। भारी मिट्टी की तैयारी में अधिक जुताई की आवश्यकता होती है। सामान्यतः 2-3 जुताई करके खेत में पाटा चलाकर समतल बना लिया जाता है तो खेत बुआई के योग्य बन जाता है। ध्यान रहे कि जल निकास नाली की व्यवस्था अवश्य करें।

बुआई

ख़रीफ़ की बुआई का उचित समय मध्य जून से मध्य जुलाई तक माना जाता है। देर से बुआई करने पर उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। गर्मी की बुआई का उचित समय मार्च महीने में करें। रबी की बुआई का उचित समय मध्य अगस्त से मध्य सितंबर तक अच्छा माना जाता हैं, इससे उपज भी अच्छी प्राप्त होती हैं। बुआई के समय पंक्तियों का अंतर 30 से 45 सें.मी. और पौधे से पौधे का अंतर 5 से 10 सें.मी. सही रहता हैं। ख़रीफ़ की बुआई के लिए 12 से 15 कि.ग्रा./हैक्टेयर बीज पर्याप्त रहता हैं। गर्मी की बुआई के लिए 20 से 25 कि.ग्रा./हैक्टेयर पर्याप्त रहता है। अधिक बीज दर रखने से पौधों की वृद्धि एवं विकास अच्छा नहीं होता हैं और साथ ही पैदावार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। बुआई से पूर्व बीज का उपचार राइजोबियम टीके से और पी एस वी के टीके से करना चाहिए इससे उपज में बढ़ोत्तरी होती है।

पोषक तत्व प्रबंधन

उड़द की प्रारंभिक अवस्था में अच्छी वृद्धि और विकास के लिए 15 से 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन/हैक्टेयर बुआई के समय देना आवश्यक होता है। उड़द की अधिक उपज के लिए नाइट्रोजन के साथ-साथ 40 से 50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस और 30 कि.ग्रा. पोटेशियम/हैक्टेयर का प्रयोग करें।

जल प्रबंधन

सामान्यतः उड़द की अच्छी पैदावार लेने के लिए 4-5 सिंचाई की आवश्यकता होती हैं। सिंचाई क्रांतिक अवस्था पर करें तो बहुत अच्छा रहता है। पुष्पावस्था व फलियों में दाना बनते समय सिंचाई अवश्य करनी चाहिए। ध्यान रखें कि अधिक पानी खेत में खड़ा रहने से जड़ों की ग्रंथियों (नाइट्रोजनधारी) का विकास नहीं होता है और परिणामस्वरूप उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

खरपतवार प्रबंधन

उड़द की फसल को नुकसान करने वाले खरपतवार जैसे सावां, क्रेब, घास, सांठी, मोथा, कनंकआ, जंगली जूट, मुरेल सतुर्मुर्ग-दुहदी सैंजी लटजीरा आदि है। समय पर इनकी रोकथाम करना अतिआवश्यक हैं। इनकी रोकथाम के लिए बुआई के 25 से 30 दिन के बाद सिंचाई के बाद से निराई करके नियंत्रित किया जा सकता हैं। आवश्यकता पड़ने पर खरपतवार नाशी रसायनों का उपयोग कर सकते हैं। खरपतवारनाशी जैसे एलाक्लोर या पेन्डिमीथेलीन 1.0 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर का 400-500 लीटर पानी में घोल बनाकर बुआई के बाद एवं अंकुरण से पूर्व करना चाहिए।

कीट प्रबंधन

उड़द में सामान्यतः मिट्टी के झींगुर और मूंग के डिंभक कीट अंकुरण होते समय अधिक नुकसान करते हैं। इनकी रोकथाम के लिए फोरेट 10 प्रतिशत ग्रेन्यूल रसायन को 10 कि.ग्रा./हैक्टेयर मात्रा बारीक मिट्टी अथवा रेत में मिलाकर खेत में छिड़काव करें अथवा मोनोक्रोटोफास रसायन की एक मि.लि. मात्रा/लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव कर सकते हैं।

एक अन्य कीट रोमिल गिंडार फसल को काफी नुकसान करता है। इसकी रोकथाम के लिए एन्डोसल्फान 35 ई सी की 1-1.25 लीटर मात्रा/हैक्टेयर का छिड़काव कर सकते हैं। इनके अलावा तना मक्खी की रोकथाम के लिए कोर्बोफ्यूरान 25 कि.ग्रा./हैक्टेयर को बुआई के समय मृदा में मिला देने से इसका नियंत्रण किया जा सकता हैं।

रोग प्रबंधन

पीला मौजेक: इसकी रोकथाम के लिए बीज उपचार क्रुजर या गऊचो 4 ग्राम प्रति कि.ग्रा. की दर से करें। पर्णीय छिड़काव एक्टारा या कन्फीडोर 0.02 प्रतिशत का बुआई के 30 दिन उपरांत करें, और रोग अवरोधी किस्मों का चयन करें।

पर्ण धब्बा रोग: यह पत्तियों पर धब्बे होने से पहचानी जा सकती हैं। इसकी रोकथाम के लिए कैपटान अथवा जिनेब 2.5 ग्रा. दवा/लीटर पानी का घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

जड़ गलन: पौधा उखाड़ने पर जड़ों में जड़ गलन का लक्षण दिखाई देता हैं। इसकी रोकथाम के लिए बीज को थीरम अथवा कैपटान 2.5 ग्रा./कि.ग्रा. बीज से उपचारित करें।

एन्थ्रेकनोज: इसका प्रभाव पत्तियों एवं तने पर देखा जा सकता है। इसके अधिक प्रभाव से पैदावार में भारी कमी आ जाती हैं। इसकी रोकथाम के लिए थीरम 2-3 ग्रा/कि.ग्रा. बीज अथवा 0.2 प्रतिशत जिनेब का 10 दिन के अंतराल पर 1-2 छिड़काव करने से इसका नियंत्रण सफलतापूर्वक किया जा सकता है।

चूर्ण आसिता रोग: यह उड़द का भयंकर रोग है। सफेद पाउडर पत्तियों पर आ जाता है। बाद में तने पर फैल जाता है जिससे पैदावार में गिरावट आ जाती है। इसकी रोकथाम के लिए कार्बेन्डाजिम अथवा बेनेमिल का छिड़काव करना चाहिए। रसायन की 2 ग्राम मात्रा/लीटर पानी में घोल बनाकर खड़ी फसल में समान रूप से छिड़काव करें।

कटाई एवं गहाई

फसल की कटाई बुआई के समय और किस्म पर निर्भर होती हैं। जैसे-जैसे फलियां पकती जाए उनकी तुड़ाई करते रहें और यदि ऐसी किस्म हैं कि फलियां एक साथ पक रही हैं तो ऐसी स्थिति में हंसिया से कटाई करें। जब फसल पूर्ण रूप से सूख जाए तब थ्रेशर से गहाई कर सकते हैं। ध्यान रहे कि दाने में 10-12 प्रतिशत तक नमी होनी चाहिए।

उपज

अच्छी प्रकार प्रबंधन की गई फसल से 10-15 क्विंटल प्रति हैक्टेयर तक दाने की उपज आसानी से मिल जाती हैं।

लोबिया

उन्नत किस्में

आवश्यकता के अनुसार लोबिया की विभिन्न प्रकार की किस्में पाई जाती हैं, इनमें से कुछ किस्में एक से अधिक उद्देश्य के लिए उगाई जाती हैं, जैसे चारे व दाने के लिए; दाने व सब्जी के लिए जो किस्में चारे के लिए उगाई जाती हैं उनको हरी खाद वाली फसल के रूप में भी उगाते हैं। बसंत और गर्मी के मौसम के लिए अपेक्षाकृत कम अवधि वाली किस्में उपयुक्त पाई गई हैं, जबकि ख़रीफ़ के मौसम के लिए अधिक अवधि वाली किस्में अच्छी होती हैं। लोबिया की उल्लेखनीय उन्नत किस्में इस प्रकार हैं:

पूसा संस्थान द्वारा विकसित लोबिया की प्रमुख किस्मों का उल्लेख सारणी-1. में किया गया है।

सारणी-1. पूसा संस्थान द्वारा विकसित लोबिया की प्रमुख किस्में

समय पर बुआई				
किस्म	**अनुमोदित वर्ष**	**अनुमोदित क्षेत्र/परिस्थिति**	**उपज (क्विं/है.)**	**विशेषताएं**
पूसा संपदा (वी.585)	1999	उत्तरी-पश्चिमी मैदानी क्षेत्र/समय पर बुआई के लिए	8.6 क्विं/है.	यह किस्म विषाणु जनित पीली चित्ती रोग की प्रतिरोधी है तथा 100 दिनों में पककर तैयार हो जाती है।
पूसा 578	2005	राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, दिल्ली/ समय पर बुआई के लिए	12 क्विं/है.	यह किस्म विषाणु जनित पीली चित्ती रोग की प्रतिरोधी है तथा 90 दिनों में पककर तैयार हो जाती है।

पूसा फाल्गुनी: यह अत्यधिक अगेती किस्म है। बसंत और गर्मी के लिए यह किस्म सबसे उपयुक्त हैं। इसको पकने में लगभग 70-75 दिन लगते हैं। दाना सफेद तथा मध्यम आकार का होता हैं, अतः दाल के लिए ज्यादा अच्छी हैं। इसकी हरी फलियों से सब्जी बनाई जाती हैं। यह किस्म मिश्रित खेती के लिए भी उपयुक्त हैं।

पूसा दो फसली: यह किस्म 80-85 दिन में पक जाती हैं तथा सभी मौसमों में उगाई जाती हैं। यह सब्जी के लिए अधिक उगाई जाती हैं।

पूसा बरसाती: ख़रीफ़ के लिए उपयुक्त किस्म हैं। यह 110-120 दिन में पककर तैयार हो जाती हैं। यह विशेषतः हरी सब्जी के लिए उगाई जाती हैं। फलियां बुआई से 45-50 दिन बाद सब्जी के लायक हो जाती हैं।

अन्य महत्वपूर्ण किस्में: टाईप 2, पूसा ऋतुराज (एफ एस 68), सी 22, सी 152, सी 13, सी ओ 1, एस 203, पूसा कोमल, फिलीपाइन्स अर्ली, एस 488, सलेक्शन 2-1, सलेक्शन 263, आई आई एच आर 16, अर्का गरिमा, बिधान बारबती 1, बिधान

बारबती 2, काशी श्यामल, काशी गौरी, काशी कंचन, काशी उन्नति आदि हैं।

खेत की तैयारी

भूमि की गहरी जुताई से लोबिया की जड़ों का अनुकूल विकास होता है। एक बार खेत जोतकर डिस्क हैंरो चलाकर भूमि तैयार की जा सकती हैं। जब फसल गर्मी या बसंत में उगाई जाती हो तो कम से कम जुताई की जानी चाहिए। खेत की अंतिम तैयारी करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि भूमि समतल हो जाए तथा उसमें जल निकास अच्छा हो।

बुआई

उत्तर भारत में लोबिया की फसल मुख्यतः ख़रीफ़ में उगाई जाती हैं। इसके लिए बरसात की शुरूआत होते ही लोबिया की बुआई की जानी चाहिए। बुआई में देरी करने पर उपज कम हो जाती हैं क्योंकि पुष्पन अवधि घट जाती हैं। ग्रीष्मकालीन लोबिया की बुआई के लिए मार्च अंत से मध्य अप्रैल का समय अनुकूल होता है तथा देरी करने पर उपज कम हो जाती हैं व मानसून से फसल बरबाद हो जाती हैं। लोबिया की बुआई कतार में या छिटकवां विधि से की जा सकती हैं। इसके लिए देसी हल या सीड ड्रिल का प्रयोग किया जाता है। दाने व सब्जी के लिए उगाई फसल के लिए 20-25 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टेयर उपयुक्त होते हैं तथा हरी खाद वाली फसल के लिए यह दर 35 से 45 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर तक उपयुक्त पाई जाती हैं। बीज को बुआई से पहले राइज़ोबियम कल्चर से उपचारित करने से उपज पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है।

बसंत व ग्रीष्म में पौधे से पौधे दूरी 8-10 सें.मी. व कतार से कतार की दूरी 30 सें.मी. जबकि ख़रीफ़ में 45 से 60 से.मी. दूरी पर बिजाई करने पर अधिकतम उपज प्राप्त होती हैं।

पोषक तत्व प्रबंधन

दलहनी फसल होने के कारण इसे नाइट्रोजन की आवश्यकता कम पड़ती हैं। अतः बुआई के कुछ दिनों बाद तक की नाइट्रोजन आवश्यकता के लिए 15-20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन/हैक्टेयर बुआई के समय देनी चाहिए। फॉस्फोरस व पोटाश मृदा पोषक तत्व परीक्षण के अनुसार देना चाहिए। फॉस्फोरस व पोटाश की मात्रा सामान्यतः 50 से 60 कि.ग्रा./हैक्टेयर देने से अच्छी उपज प्राप्त होती हैं। सभी पोषक तत्व बुआई से पहले वाली जुताई के समय भूमि में 6-7 से.मी. गहराई में देने से अधिक उपज प्राप्त होती हैं। इसमें सामान्यतः सूक्ष्म तत्व की आवश्यकता नहीं पड़ती, फिर भी कम उपजाऊ मृदा में मृदा परीक्षण के आधार पर सूक्ष्म तत्व देने से उपज बढ़ती हैं।

जल प्रबंधन

ख़रीफ़ की फसल में सिंचाई की ज्यादा आवश्यकता नहीं पड़ती फिर भी लंबे समय तक सुखा पड़ने पर सिंचाई करनी चाहिए। लोबिया में पुष्पन व फलियो के भरने के समय अगर नमी में कमी आती हैं तो उपज में भारी कमी आती हैं। अतः सूखे के समय पुष्पन व फलियां भरने के समय मृदा में नमी की मात्रा कम न होने दें। बसंत व गर्मी की फसल में 10 से 15 दिन के अंतराल में सिंचाई देने से अच्छी उपज मिलती हैं। बसंत व गर्मी की फसल के लिए 5 से 7 सिंचाई की आवश्यकता पड़ती हैं। सिंचाई की संख्या मृदा, किस्म, तापमान व किस उद्देश्य के लिए फसल ली जा रही हैं पर निर्भर करती हैं। भारी व ज्यादा वर्षा वाले क्षेत्र में जल निकास का अच्छा प्रबंधन करने से उपज में वृद्धि पाई जाती है।

खरपतवार प्रबंधन

अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए फसल को शुरूआत के 25 से 30 दिन तक खरतपवार मुक्त रखना आवश्यक हैं। इसके लिए कम से कम दो बार निराई-गुड़ाई करनी चाहिए। अगर हाथ से खरपतवार नियंत्रण नहीं हो पाए तो फ्लूक्लोरेलीन 1 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हैक्टेयर 800-1000 लीटर पानी के साथ बीजाई से पहले देने से अच्छा खरपतवार नियंत्रण होता हैं।

रोग प्रबंधन

जीवाणु झुलसा: रोग के प्रकोप की प्रारंभिक दशा में बड़े पैमाने पर नवजात पौधों की मृत्यु हो जाती हैं। यह मध्य वर्षा के मौसम में होता हैं। रोग के लक्षण सर्वप्रथम पत्तियों पर छोटे-छोटे हरे रंग के धब्बे के रूप में प्रकट होता हैं। प्रभावित पत्तियां जल्दी से गिर जाती हैं। इसकी रोकथाम के लिए रोग रोधी किस्मों को उगाएं; रोगरहित बीज का प्रयोग करें; 0.2 प्रतिशत का ब्लाईटाक्स का छिड़काव करें।

लोबिया मोजेक: यह बीमारी सफेद मक्खी द्वारा संचारित होती हैं। संक्रमित पौधों की पत्तियां पीली व पत्तियों का आकार विकृत हो जाता हैं। इसकी रोकथाम के लिए स्वस्थ व रोगरहित बीज

का उपयोग करें; सफेद मक्खी को रोकने के लिए 0.1 प्रतिशत मेटासिस्टाक्स या डाइमेथोएट का छिड़काव 10 दिन के अंतराल पर करें।

चूर्णिल आसिता: रोग से पौधों की पत्तियों, तनों, शाखाएं व फलियों पर सफेद रंग के कवक बीजाणुओं का चूर्ण दिखाई देता हैं। रोग की उग्र अवस्था में पत्तियां पीली पड़कर गिर जाती हैं। इसकी रोकथाम के लिए रोग सहनशील या अवरोधी किस्मों का चुनाव किया जाए एवं पेन्कानोजोल 0.25 ग्राम या ट्राइडेमार्फ की 1 मि.लि. मात्रा या डिनोकेप की 1 मि.लि. मात्रा को प्रति लीटर की दर से पानी में घोलकर 5-7 दिन के अंतराल पर छिड़काव किया जाए।

कीट प्रबंधन

हेयरी केटरपीलर: यह लोबिया का प्रमुख कीट हैं और फसल को भारी नुकसान पहुंचाता है। यह नवजात पौधे को काट देता हैं व हरी पत्तियों को खा जाता है। इस कारण कभी-कभी दोबारा बुआई करनी पड़ती हैं। इसकी रोकथाम के लिए अंडा व लारवों को इकट्ठा करके जला दें; जवान कैटरपिलर को मारने के लिए 25 से 30 कि.ग्रा./हैक्टेयर की दर से 2 प्रतिशत मिथाइल पेराथीयान पाउडर छिड़काव करें या 1.45 लीटर एण्डोसल्फान 35 ई सी छिड़कें।

लीफ होपर, जैसीड, एफीड: ये कीट पौध के रस को चूसकर उसे पीला व कमजोर कर देते हैं। इनकी रोकथाम के लिए प्रारंभिक अवस्था में डाईमेथोएट 30 ई सी या मिथाइल डिमेटान 30 ई सी की 2 मि.लि. प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें; जब फसल में फलियां आ जाती हैं उस अवस्था में इसका प्रकोप होने पर फलियों की तुड़ाई के बाद एन्डोसल्फान 35 ई सी की 2 मि.लि./लीटर की दर से पानी में घोलकर छिड़काव किया जाए।

कटाई एवं गहराई

लोबिया के दाने की फसल, उस समय काटी जाती हैं जब 90 प्रतिशत फलियां पक गई हों। कटाई में देरी करने से उपज में हानि होती हैं। यदि वर्षा होने की आशंका हो तो पहले ही फलियां तोड़ लेनी चाहिए। चारे तथा हरी खाद वाली फसल को दाना भरने की अवस्था में काटना लाभकारी होता है। हरी फलियों के उपयोग के लिए उगाई फसल की फलियां 45 से 90 दिन तक तोड़ सकते हैं। इसके बाद यह फलियां सब्जी के लिए उपयुक्त नहीं रहती क्योंकि फलियों में दाना पक जाता हैं तथा फलियां रेशा युक्त हो जाती हैं और इनसे सब्जी नहीं बन पाती हैं। फसल की गहाई दो-तीन दिन तक कटी हुई फसल को सुखाकर करनी चाहिए। इसकी गहाई ट्रैक्टर या बैलों से भी की जा सकती हैं लेकिन गहाई सामान्यता: हाथ से की जाती हैं। गहाई-मड़ाई करते समय ध्यान रखना चाहिए कि दाना टूटने न पाए। इसके लिए गहाई से पूर्व फसल को अच्छी तरह धूप में सुखा लेना चाहिए।

उपज

अच्छी तरह उगाई फसल से लगभग 12 से 15 क्विंटल दाना व 50-60 क्विंटल भूसा प्राप्त हो जाता हैं। अगर फसल चारे के लिए उगाई गई हो तो 250 से 350 क्विंटल तक हरा चारा प्रति हैक्टेयर तक प्राप्त किया जाता हैं। सब्जी वाली फसल से 75 से 100 क्विंटल तक हरी फलियां प्रति हैक्टेयर प्राप्त हो जाती हैं।

सोयाबीन फसलोत्पादन तकनीक

धर्मपाल सिंह, अतुल कुमार, मोनिका ए. जोशी, ज्ञान प्रकाश मिश्रा एवं रविश चौधरी

बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान नई, दिल्ली 110 012

भारत में सोयाबीन ख़रीफ़ मौसम की दलहनी एवं तिलहनी फसल है। इनका उपयोग तेल के अलावा सोया बड़ी, सोया दूध, सोया पनीर, सोया चाप आदि चीजें बनाने में होता है। सोयाबीन में 42 प्रतिशत प्रोटीन, 22 प्रतिशत तेल तथा 21 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट होता है। इसमें प्रोटीन की मात्रा अधिक होने के कारण इसको शाकाहारी लोगों का मीट भी कहते है। सोयाबीन में उपयुक्त प्रौद्योगिकियों की कमी, आदानों की कमी वाली परिस्थितियों में खेती, जैविक और अजैविक दबावों का मुकाबला करना, सोयाबीन की कम उत्पादकता के कुछ प्रमुख कारण हैं।

जलवायु

सोयाबीन गर्म और नम जलवायु में उगाई जाने वाली, वातावरण के प्रति अत्यधिक संवेदनशील फसल है। सोयाबीन की अधिकांश किस्मों के लिए 25 से 30 डिग्री सेल्सियस तक का तापमान अनुकूल माना जाता है। परंतु किस्मों के अंकुरण लिए 16 डिग्री सेल्सियस तापमान या उससे अधिक मिट्टी का तापमान तेजी से अंकुरण का पक्ष लेता है। सोयाबीन को अच्छी फसल के लिए एक सीजन में 400 से 500 मिमी बारिश की जरूरत होती है। अंकुरण, फूल और फली बनाने के चरण के समय उच्च नमी की आवश्यकता होती है।

मृदा

सोयाबीन की खेती के लिए कम अम्लीय मिट्टी 6.0 से 7.5 पीएच वाली दोमट मिट्टी सबसे उपयुक्त है। लवणीय मिट्टी एवं जल जमाव बीजों के अंकुरण के प्रति प्रतिकूल प्रभाव डालता है। 8 से अधिक पीएच वाली मिट्टी में सोयाबीन उगाने की सिफ़ारिश नहीं की जाती है।

भूमि तैयारी

सोयाबीन की खेती के लिए गर्मियों में एक गहरी जुताई एवं दो से तीन बार हेरोइंग करके मिट्टी को मुलायम करने की आवश्यकता होती है। गर्मियों में गहरी जुताई करने से मिट्टी में रहने वाले हानिकारक जीव और खरपतवारों के प्रबंधन में सहायता मिलती है। यह कार्य अप्रैल-मई के महीने में किया जाता है। मिट्टी के ढ़ेलो को तोड़ दिया जाता हैं। अन्तिम हेरोईग के पहले मिट्टी में जैविक खाद जैसे गोबर की खाद /कम्पोस्ट /वर्मी कम्पोस्ट के साथ उर्वरकों की बेसल डोज डाल कर भूमि को ठीक से समतल किया जाता है।

सोयाबीन की उन्नत किस्में:-

पूसा-12, पूसा 16, पूसा 97 12, जे.एस.- 20 34, जे.एस.20 29, जे.एस.-95.60, एन.आर.सी. 142, के.एस.103, डी.एस.बी 21, पी.एस. 1347, पी.एस. -19, वी. एल. सोया. 77, राज. सोया-24, आर.एस.सी . 11 07, एम.ए.सी .एस.1460, के.डी. एस. 753, एम. ए. यु. एस.725 मोनेटा इत्यादि।

बुआई का समय

लघु दिवसीय/ख़रीफ़/वर्षा आधारित फसल होने के कारण जून के द्वितीय पखवाड़े से जुलाई के द्वितीय पखवाड़े तक सोयाबीन की बुआई कर देनी चाहिए। वर्षा आधारित सोयाबीन फसल उत्पादन के लिए प्रथम 10 से.मी. वर्षा के बाद बीजों की बुआई कर देनी चाहिए।

बीज उपचार

विभिन्न रोग कारकों एवं फसल की अच्छी वृद्धि एवं विकास के लिए सोयाबीन के बीजों को एफ. आई. आर. क्रम से उपचारित किया जाता है। जैविक फफूंदनाशक *ट्राइकोडर्मा विरिडी* 10 ग्रा. प्रति कि.ग्रा. या रासायनिक फफूंदनाशक जैसे कास्केड इत्यादि, इनके बाद कीटनाशी रसायनों जैसे इमिडाक्लोप्रिड व अंत में राइजोबियम कल्चर तथा पीएसबी कल्चर से उपचारित कर के बीजों को अच्छी तरह से छाया में सुखा कर उपयोग करना चाहिए।

बीज दर एवं फसल विन्यास

सोयाबीन फसल उत्पादन के लिए 25 कि.ग्रा. प्रति एकड़ अच्छी गुणवत्ता वाले बीजों की आवश्यकता होती है, जिनकी

अंकुरण क्षमता 70 प्रतिशत एवं कीट, बीमारियों एवं खरपतवार के बीजों से मुक्त होना चाहिए। बड़े दाने वाली किस्मों का अंकुरण छोटे दाने वाली किस्मों की अपेक्षाकृत कम होता है, इसलिए बड़े दाने वाली किस्मों की बुआई उथली एवं बीज दर अंकुरण परीक्षण के अनुसार कर देना चाहिए। बीजों की बुआई के लिए लाईन से लाईन की दूरी 30 से 45 से.मी. एवं बीज से बीज की दूरी 5 से 10 से.मी. एवं बीजों की गहराई 2 से 3 से.मी. होनी चाहिए। सोयाबीन की बुआई रिज फरो या ब्राड बेड फरो, (बी बी एफ) पद्धति से करने से नालियों का उपयोग सिंचाई के साथ-साथ आवश्यकतानुसार नमी संचयन/अतिरिक्त जल निकास के उपयोग में लिया जा सकता है। व्यावहारिक रूप से मक्का, मंडुआ और तिल के साथ सोयाबीन की मिश्रित फसल अधिक लाभकारी होती है।

खाद एवं उर्वरक

निरंतर उत्पादन प्राप्त करने एवं भूमि की उर्वरा शक्ति बनाए रखने के लिए खाद एवं उर्वरकों की आवश्यकता होती है इसलिए गर्मियों में 5 से 10 टन गोबर की खाद भूमि में अंतिम जुताई के समय मिला देनी चाहिए। खड़ी फसल मे उर्वरकों का प्रयोग केवल मृदा परीक्षण के आधार पर करने से उर्वरकों पर होने वाले अनावश्यक खर्च को कम किया जा सकता है। सोयाबीन एक दलहनी एवं तिलहनी फसल होने के कारण इसमें पोटाश एवं गंधक का प्रयोग करना चाहिए।

सिंचाई

ख़रीफ़ की फसल होने के कारण ज्यादातर असिंचित क्षेत्रों में सोयाबीन की बुआई की जाती है। सोयाबीन फसल की क्रांतिक अवस्था (नवजात पौधा, फूल लगना एवं दाने भरना) के दौरान मृदा में नमी होना अति आवश्यक होती है, अन्यथा उत्पादन पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। सिंचाई का साधन उपलब्ध होने पर क्रांतिक अवस्था या मृदा में दरारे पड़ने से पूर्व सिंचाई अवश्य करनी चाहिए।

खरपतवार प्रबंधन

सोयाबीन फसल को प्रारंभिक 45 से 60 दिन क्रांतिक अवस्था होने के कारण खेत को खरपतवारों से मुक्त रखना अत्यंत आवश्यक है। फसल में यदि खरपतवारों का प्रबंधन क्रांतिक अवस्था पर सही से नहीं किया गया, तो फसल में 50 से 70 प्रतिशत तक उत्पादन कम हो जाता है। सोयाबीन की फसल के लिए खरपतवारों का प्रबंधन गर्मियों में गहरी जुताई करके, फसल चक्र अपनाकर, खरपतवार मुक्त बीजों का प्रयोग, बुआई के समय में थोडा बदलाव, रसायनिक खरपतवारनाशियों इत्यादि का प्रयोग करके खरपतवारों का प्रबंधन किया जा सकता है। यदि मानव संसाधन उपलब्ध है तो फसल बुआई के 20-25 दिन बाद पहली निराई–गुड़ाई एवं उनके बाद आवश्यकतानुसार 3 से 4 निराई–गुड़ाई करके खरपतवारों का प्रबंधन कर सकते हैं। रासायनिक खरपतवारनाशी रसायनों में बीज बुआई के 24 घंटों के भीतर पेण्डीमिथालीन 30 ई.सी. का 2.5 लीटर/हैक्टेयर, पानी में मिलाकर एक समान मात्रा में छिड़काव करना चाहिए। बीजों के अंकुरण के बाद प्रोपीकीजाफॉस 10 प्रतिशत रसायन का प्रयोग करना चाहिए।

पौध संरक्षण

सोयाबीन में पीला मोजेक वायरस रोग एक प्रमुख समस्या है। जो सफ़ेद मक्खी के द्वारा मुख्य रूप से फैलता है। रोग की शुरूआत में नई पत्तियों पर पीले चमकीले धब्बे दिखाई देते है, जो बाद में अनियमित रूप से बढ़ते हुए पत्तियों का लगभग पूर्ण भाग पीला हो जाता है। सफ़ेद मक्खी का प्रबंधन इमिडाक्लोरपिड द्वारा किया जा सकता है। इसी प्रकार बेक्टीरियल ब्लाईट, कॉलर रोट, एन्थ्रेक्नोज, पर्पल स्टेम इत्यादि रोग विभिन्न कीटों द्वारा प्रभावित होते हैं।

सोयाबीन की कटाई

सोयाबीन की फसल बुआई के 125 से 145 दिनों बाद पूर्ण रूप से पक जाती है। अर्थात जब फलियों का हरा रंग समाप्त होकर भूरा हो जाए या चटकने वाली किस्मों की कटाई, पूर्ण भूरा होने के 1 से 2 दिनों पहले कटाई कर लेने से फलियों के चटकने से होने वाले नुकसान से बचाव किया जा सकता है। कटाई के 2 से 3 दिनों तक सुखाने के बाद थ्रेशर या डंडे से पीट कर दाना अलग किया जाता है।

उपज एवं भंडारण

सोयाबीन की उपज अनुकूल वातावरणीय परिस्थितियों में 18 से 25 क्विंटल/हैक्टेयर प्राप्त की जा सकती है तथा इनका भंडारण स्वच्छ, नमी रहित, हवादार स्थान जहां पर कीट एवं पक्षियों से मुक्त स्थान हो, वहां पर करना चाहिए। बीज के लिए उपयोग किए जाने वाले सोयाबीन का भंडारण, 40 कि.ग्रा. वाली जूट की बोरियों में अधिकतम 5 फीट की ऊंचाई तक ही करना चाहिए।

ड्रिप सिंचाई तकनीक ने किया कमाल

नरेन्द्र मोहन सिंह, अलका सिंह, हरबीर सिंह, नित्यश्री एम.एल.,
कुन्दन कुमार, पवन कुमार मलिक एवं सागर सूद

कृषि अर्थशास्त्र संभाग
भा.कृ.अनु.प.-भातीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110 012

हमारे देश में भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के कृषि वैज्ञानिकों के अथक प्रयासों व कड़ी मेहनत द्वारा विकसित की गई आधुनिक तकनीकों व नई विकसित फलों की प्रजातियों के दम पर बागवानी कृषि पर समुचित ध्यान केंद्रित करने से हमारे देश में फलों का उत्पादन और निर्यात बढ़ा है। हमारे देश में लगभग सभी प्रकार की उष्णीय, अर्ध उष्णीय तथा शीतोष्ण बागवानी फसलें देश में पैदा की जाती है। बागवानी फसलें खाद्य, पोषण सुरक्षा में महत्वपूर्ण स्थान रखती है साथ ही इनमें ज्यादा मात्रा में एंटीअक्सिडेंट पाए जाते है जो हमें रोगों से बचाते हैं। बदलते जलवायु परिदृश्य में पर्यावरण प्रदूषण भी एक गंभीर समस्या बनती जा रही है।

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के कृषि वैज्ञानिकों के अनुसार बागवानी फसलें उगा कर प्रदूषण की गंभीर समस्या को भी काफी हद तक कम किया जा सकता है। बागवानी फसलों के उत्पादन से वातावरण में ऑक्सीजन और कार्बन-डाइ-आक्साइड जैसी गैसों का संतुलन बना रहता है बागवानी कृषि में उन्नत अनुसंधान करने हेतु भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का बागवानी संभाग, 10 केंद्रीय संस्थानों, 6 निदेशालयों, 7 राष्ट्रीय अनुसंधान केंद्रों, 13 अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजनाओं और 6 नेटवर्क प्रोयोजनाओं व प्रसार कार्यक्रमों के जरिए भारत में कृषि मंत्रालय के अंतर्गत भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान द्वारा बागवानी अनुसंधान पर कार्य चल रहा है। बागवानी उत्पादों में 7 गुणा वृद्धि से पोषण सुरक्षा और रोजगार के अवसरों में वृद्धि हुई है। बागवानी कृषि का देश के कई राज्यों के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान है और कृषि जीडीपी में इसका योगदान 30.4% प्रतिशत है। भारत आम, केला, नारियल, काजू, पपीता, अनार आदि का शीर्ष उत्पादक देश है व आने वाले दिनों में हमारा देश सभी बागवानी फसलों के उत्पादन में विश्व में पहले स्थान पर होगा, गत कई दशकों से बागवानी फसलों के उत्पादन में लगातार वृद्धि हो रही है। बागवानी फसलों में फल उत्पादन में सबसे अधिक वृद्धि 9.5 प्रतिशत वार्षिक दर से दर्ज की जा रही है। देश के उत्तर–पूर्वी राज्यों में बागवानी फसलें ग्रामीण किसानों की कमाई का मुख्य स्रोत बन चुकी है इस कारण से भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में बागवानी फसलों का विशेष महत्व बन चुका है। इसका श्रेय हमारे कृषि वैज्ञानिकों के साथ-साथ हमारे जागरूक किसानों को भी जाता है जो कृषि वैज्ञानिकों के लगातार संपर्क में रहते हुए आधुनिक तकनीकी ज्ञान का प्रयोग अपनी कृषि या बागवानी में करते रहते हैं और भारत सरकार द्वारा दी जा रही योजनाओं का भी पूरा लाभ सामाजिक एवं आर्थिक सशक्तिकरण के लिए उठाते हुए, निरंतर सफलता की ओर बढ़ रहे है और ऐसे ही एक सफल किसान है राहुल दहिया जी, जो ग्राम देहमण, फतेहाबाद, हरियाणा के रहने वाले है। इन्होंने किस तरह से बागवानी किसानी को समझा और एक सफलता की गाथा इन्होंने लिखी इसके लिए ये सम्मान के अधिकारी है। अब ये दूसरे किसानों के लिय भी प्रेरणा का स्रोत बन उनका मार्गदर्शन कर रहे हैं, व साथ-साथ 30 से 35 ग्रामीण युवाओं को रोजगार देकर ग्रामीण विकास में अपना योगदान भी दे रहे है। राहुल दहिया जी कहते हैं कि कौन कहता है कि खेती में अच्छा मुनाफा नहीं हो सकता बस थोड़ा अलग सोचने व थोड़ा समझदारी से काम लेने की जरूरत होती है

और वैज्ञानिकों के लगातार संपर्क में रहते हुए उनकी सलाह अनुसार तकनीकी ज्ञान के प्रयोग द्वारा निश्चित रूप से सफलता प्राप्त होती है। इन्होंने बागवानी कृषि से संबंधित जानकारी के लिए भा.कृ.अनु.प.-भा.कृ.अनु.सं., नई दिल्ली व कृषि विज्ञान केंद्र फतेहबाद, हरियाणा के साथ जुड़कर मार्गदर्शन प्राप्त किया और सिर्फ 2 एकड़ से ड्रिप सिंचाई (इरीगेशन) आधुनिक तकनीक द्वारा अमरुद का बाग लगाकर कुछ वर्ष पहले यह शुरुआत की, आज 23 एकड़ जमीन पर सफलतापूर्वक बागवानी कर रहे हैं।

इसमें 13 एकड़ अपनी खुद की जमीन है बाकी 10 एकड़ किराए पर है। राहुल जी कहते हैं कि खेती का तरीका बदलने में शुरूआती खर्च जरूर आया पर धीरे-धीरे मुनाफा बढ़ता गया। इन्होंने प्रचलित सब्जियों व अन्य फसलों की जगह अमरुद व विभिन्न फलों के बाग लगाकर बागवानी को अपनाया तथा दिल्ली, हरियाणा व पंजाब की फल मंडियों का लाभ उठाते हुए खूब मुनाफा कमाया व सफलता की पायदान चढ़ते चले गए।

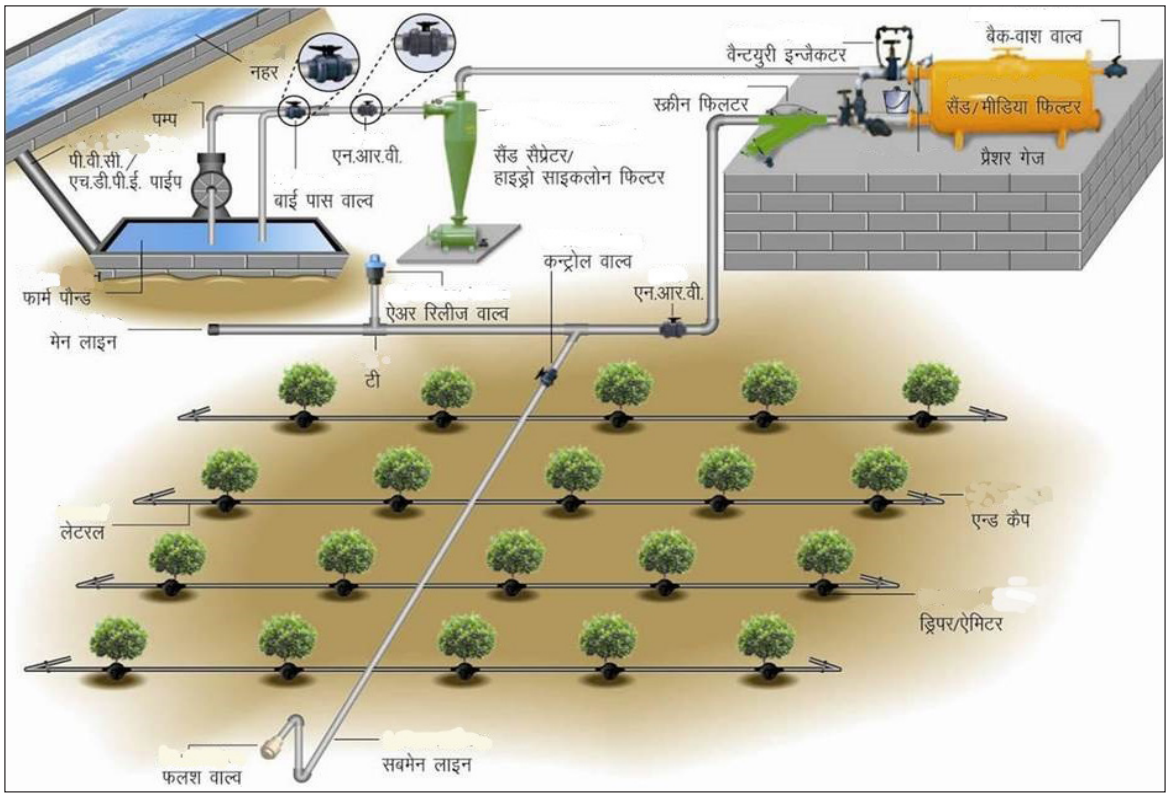

चित्र : बागवानी फसलों में आधुनिक ड्रिप सिंचाई तकनीक विधि प्रदर्शन

इन्होंने भारत सरकार की कई योजनाओं का लाभ लेकर इनपुट लागत को कम किया कई सरकार की सब्सिडी का भी लाभ लिया, इस तरह से शुरूआत करने पर 2 से 4 साल में ही दिन बदलने लगे। राहुल दहिया जी ने सिर्फ 2 एकड़ में अमरुद का बाग लगाकर शुरूआत की थी लेकिन आज अमरुद के अलावा आलूबुखारा, आड़ू, केला, माल्टा, किन्नू, पपीता, मौसमी, आम (आम्रपाली व मल्लिका) आदि फलों की बागवानी सफलतापूर्वक कर रहे है। जिसमें 4 एकड़ में अमरुद हिसार सफेदा, 5 एकड़ में आड़ू शाने पंजाब, 5 एकड़ में आलूबुखारा सतलुजपर्पल, 2.5 एकड़ में आम (आम्रपाली व मल्लिका) केला (जी- 9) व बाकी जमीन में पपीता, मौसमी, माल्टा, किन्नू व साथ–साथ मुर्गीपालन आदि है। आज उनके ग्राम में कुल 450 एकड़ ज़मीन पर इसी तरह से दूसरे किसान भी विभिन्न फलों की बागवानी कर रहे है और अधिक मुनाफा कमा रहे हैं। राहुल जी ने भारत सरकार द्वारा ड्रिप सिंचाई (इरीगेशन) पर दी जा रही 90% सब्सिडी का लाभ लेते हुए इसी विधि का प्रयोग अपनी बागवानी में किया क्योंकि खेत की जमीन का पानी नमकीन होने के कारण ड्रिप सिंचाई के लिए तालाब बनाना जरूरी था। राष्ट्रीय बागवानी मिशन के अंतर्गत समुदायिक तालाब निर्माण द्वारा ड्रिप सिंचाई योजना का लाभ लिया। राहुल जी ने अंतर फसल विधि (इंटरक्रॉपिंग) को भी अपनी बागवानी कृषि में एक महत्वपूर्ण स्थान दिया।

चित्र : बागवानी फसलों में आधुनिक ड्रिप सिंचाई तकनीक विधि

सारणी-1. बागवानी मुख्य फसलों का उत्पादन लागत एवं शुद्ध आय विवरण प्रति एकड़

क्र.सं.	तकनीकी विवरण	लागत/ एकड़	कुल आय/एकड़	शुद्ध आय/ एकड़
अमरुद की प्रजाति (हिसार सफेदा) का आकलन				
1.	प्रथम वर्ष	48,000	1,00,000	52,000
2.	द्वितीय वर्ष	20,000	1,70,000	1,50,000
3.	तितीय वर्ष	20,000	2,25,000	2,05,000
4.	चौथे वर्ष	20,000	2,35,000	2,15,000
आड़ू की प्रजाति (शाने पंजाब) का आकलन				
1.	प्रथम वर्ष	40,000	1,60,000	1,20,000
2.	द्वितीय वर्ष	20,000	3,00,000	2,80000
3.	तितीय वर्ष	20,000	4,00,000	3,80,000
4.	चौथे वर्ष	20,000	4,00,000	3,80,000
आलूबुखारा प्रजाति (सतलुजपर्पल) का आकलन				
1.	प्रथम वर्ष	40,000	1,50,000	1,10,000
2.	द्वितीय वर्ष	20,000	3,00,000	2,80000
3.	तितीय वर्ष	20,000	4,00,000	3,80,000
4.	चौथे वर्ष	25,000	4,25000	4,00000

नोट: (प्रथम वर्ष की लागत में बाग लगाने का खर्च सम्मलित किया गया है व दूसरे वर्ष की लागत में रख रखाव का खर्च सम्मलित किया गया है।)

उनके अनुसार अंतर फसल विधि व साथ-साथ मुर्गीपालन, मछलीपालन व गौपालन को अपनाकर किसान अपनी शुद्ध आय में वृद्धि कर निरंतर आमदनी प्राप्त कर सकते है। यह विधि खरपतवार नियंत्रण, कीट व रोग नियंत्रण व मृदा स्वास्थ्य के लिए भी महत्वपूर्ण सिद्ध हुई है। क्योंकि अंतर फसल विधि से न केवल अतिरिक्त मुनाफा होता है बल्कि खेतों के लिए प्राकृतिक खाद भी मिल जाती है।

इनकी नर्सरी हरियाणा बागवानी बोर्ड व राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड से मान्यता प्राप्त है जिसमें आड़ू की प्रजाति शाने पंजाब व आलू बुखारा की प्रजाति सतलुज पर्पल और हिसार सफेदा अमरुद की प्रजातियों की अधिक मांग रहती है सभी फलों के पौधों को सब्सिडी मूल्यों पर ही बेचा जाता है। राहुल जी बागवानी कृषि पर किसानों का ध्यान केंद्रित करवाना चाहते हैं वे कहते हैं कि किसानों द्वारा उत्पादित पारंपरिक फसलों की तुलना में बागवानी फसलों की खेती अत्यधिक विशिष्ट, तकनीकी व लाभकारी उद्यम है जो रोजगार के अवसरों में वृद्धि प्रदान करती है। अगर बड़े ज़मीदार बागवानी कृषि से जुड़ते है तो छोटे ज़मीदार खुद बागवानी कृषि को अपना लेते हैं।

यदि किसी भी धान या गेहूं या सब्जियों की फसल से प्राप्त आय से तुलना की जाए तो फलों की बागवानी से प्राप्त कुल आय 10% से 15% तक अधिक होती है और फ़ूड प्रोसेसिंग के द्वारा मुनाफा और अधिक बढ़ाया जा सकता है व युवाओं को रोजगार प्रदान कर सामाजिक एवं आर्थिक सशक्तिकरण किया जा सकता है। किसान भाई इन से फल प्रजातियों के पौधो को सब्सिडी मूल्यों पर खरीदने के लिए इनके ग्राम देहमण, फतेहबाद, हरियाणा में इनकी नर्सरी में जाकर संपर्क कर सकते हैं व साथ–साथ बागवानी से संबंधित सभी जानकारियां व मार्गदर्शन प्राप्त कर सकते हैं।

खुबानी की खेती के लिए सफल दिशा-निर्देश

पूनम मौर्या, मधुबाला ठाकरे, शिखा जैन एवं कृपा शंकर

फल एवं औद्यानिकी प्रौद्योगिकी संभाग
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110 012

परिचय

खुबानी भारत के शुष्क समशीतोष्ण और मध्य-पहाड़ी क्षेत्रों में उगाया जाने वाला एक महत्वपूर्ण फल है। खुबानी का वैज्ञानिक नाम *प्रूनस् आरमीनिआका* है जो रोज़ेसी कुल से संबंधित है। खुबानी का मूल स्थान चीन है, जबकि जंगली खुबानी जिसे "जरदालु या चुली" के नाम से जाना जाता है, का उत्पति स्थान भारत है। अन्य फलों की तुलना में खुबानी के फलों में विटामिन 'ए' और नियासिन की अधिक मात्रा होती है। खुबानी से तैयार किए जाने वाले उत्पादों की बाजार में बहुत मांग रहती है, जो व्यापारिक रूप से भी लाभकारी है।

औषधीय गुण

खुबानी में फोलेट और आयरन की भरपूर मात्रा पाई जाती है जो खून की कमी को पूरा कर एनीमिया रोग को दूर करने में काफी मदद करती है। इसका सेवन रक्त वाहिकाओं और धमनियों के तनाव को आराम देता है, और रक्तचाप को कम करने में सहायता करता है। यह हड्डियों को मजबूत बनाने, सूजन दूर करने, वजन कम, अस्थमा रोग दूर करने तथा शारीरिक कमजोरी दूर करने के लिए बहुत उपयोगी है। खुबानी में विटामिन ए, विटामिन बी-6, विटामिन सी, विटामिन ई, पोटेशियम, आयरन, शुगर, फाइबर, कॉपर, कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, जिंक, मैंगनीज, फोलेट और फैट आदि कई पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। गुठली से मिलने वाले तेल का उपयोग पीठ दर्द और जोड़ों के दर्द से राहत दिलाने के लिए जाना जाता है।

जलवायु और मृदा

खुबानी की खेती के लिए ठंडे क्षेत्र तथा गर्मियों का तापमान 16.6-32.2 डिग्री तक होना उत्तम रहता है। इसे हिमालय के उत्तरी पश्चिमी भागों में 1000-2000 मीटर की ऊंचाई तक उगाया जा सकता है। अधिक उपज और गुणवत्ता वाले फलों के लिए 400-1000 चिलिंग आवर्स, पालारहित और गर्म बसंत अनुकूल हैं। इसकी खेती के लिए बलुई दोमट मिट्टी सर्वोत्तम होती है। भूमि का पी.एच. मान लगभग 7 के आस पास का होना चाहिए।

प्रमुख खुबानी उत्पादक राज्य

खुबानी का उत्पादन उत्तर के पहाड़ी इलाकों में किया जाता है, जिसमें जम्मू कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड आदि शामिल है। इसके अतिरिक्त इसे उत्तर पूर्व के कुछ पहाड़ी राज्यों में भी में उगाया जाता है। भारत में सबसे अधिक खुबानी का उत्पादन लद्दाख में होता है, जिसका उत्पादन 15,789 टन है, जो कुल उत्पादन का लगभग 62 प्रतिशत है। लद्दाख में खुबानी की खेती 2,303 हैक्टेयर क्षेत्र में की जाती है।

भारत में खुबानी की प्रमुख प्रजातियां

खुबानी की कई किस्में हैं, जिनमें न्यू कैशल, कैशा, शिपलेज, चौबटिया मधु, चौबटिया केसरी, चौबटिया अलंकार, डुन्स्टानअर्ली, न्यूलार्जअर्ली और मास्काट आदि शामिल है, जो शीघ्र तैयार होने वाली किस्में हैं। इसके अलावा मध्यावधि में तैयार होने वाली किस्में – शक्करपारा, चारमग्ज, हरकोट, ऐमा, सफेदा, मोरपार्क, टर्की और क्लूथागोल्ड आदि शामिल है। साथ ही देर से तैयार होने वाली किस्में – एलेक्स, रायल, सेन्टएम्ब्रियोज और वुल्कान आदि हैं, जो भारत में काफी प्रचलित किस्मों में से एक हैं। अधिक ऊंचे क्षेत्रों के लिए अर्ली सिप्ले, सफेदा, चारमग्ज, शकरपारा तथा सूखे ठंडे क्षेत्रों के लिए चारमग्ज, सफेदा, शकरपारा एवं कैशा आदि प्रमुख उन्नत किस्में है। चारमग्ज, सकरपारा, नारी तथा हलमन आदि किस्मों का उपयोग सुखाने के लिए किया जाता है।

खुबानी के फल

पुष्पण एवं फलन

खुबानी के पौधे चार से पांच साल बाद उपज देना शुरू कर देते हैं। इनके पौधों में फूल आने का समय फरवरी से मार्च तक का होता है। मध्य-पर्वतीय परिस्थितियों में खुबानी में फूल मार्च के महीने में आते हैं और उच्च पर्वतीय परिस्थितियों में मार्च के अंत और अप्रैल में आते हैं। इसके अलावा फल मई से जून तक पककर तैयार होते है।

पुष्पण एवं फलन

प्रवर्धन

खुबानी को व्यावसायिक रूप से मूलवृंत पर ग्राफ्टिंग या बडिंग द्वारा प्रसारित किया जाता है। जंगली खुबानी (चुली) और जंगली आड़ू के पौधों को व्यावसायिक रूप से मूलवृंत के रूप में उपयोग किया जाता है। बीजूमूलवृंत को विकसित करने के लिए बीजों को पूरी तरह से पके हुए जंगली खुबानी से एकत्र किया जाता है और सुप्तावस्था को तोड़ने के लिए बीजों को 45-50 दिनों के लिए 4 डिग्री सेल्सियस पर स्तरीकृत किया जाता है। स्तरीकृत बीजों को अच्छी तरह से तैयार नर्सरी बेड में 6-10 सेमी गहराई पर, बीज से बीज के बीच 15-20 सेमी की दूरी पर, पंक्तियों में 25-23 सेमी की दूरी पर बोया जाता है। यह एक वर्ष में पेंसिल की मोटाई प्राप्त कर लेते हैं, जिन्हें फरवरी के महीने में टंग ग्राफ्टिंग से ग्राफ्ट किया जाता है, जबकि कम मोटाई के पौधे मई-जून में टी-बडिंग के द्वारा तैयार किए जाते हैं।

भूमि की तैयारी, दूरी और रोपण

रोपण से ठीक 1 महीने पहले 1 x 1 x 1 मीटर^3 आकार के गड्ढे खोदें। प्रत्येक गड्ढे को मिट्टी और 60 किलोग्राम अच्छी तरह से सड़ी हुई गोबर की खाद एवं 1 किलोग्राम सिंगल सुपर फॉस्फेट के मिश्रण से भर देना चाहिए। यदि दीमक का प्रकोप हो तो गड्ढे को **क्लोरपायरीफॉस** के घोल (20-30 मिलीलीटर/10 लीटर पानी) से उपचारित कर देना चाहिए। ढलान वाली भूमि पर समोच्च रोपण प्रणाली और समतल भूमि पर वर्गाकार या त्रिकोणीय रोपण विधि अपनाई जानी चाहिए। खुबानी के पौधें आम तौर पर 6 मीटर x 6 मीटर की दूरी पर लगाए जाते हैं।

खुबानी मे काट-छांट

खुबानी के पेड़ों की मोडीफाईड सेंट्रल लीडर प्रणाली से संधाई करनी चाहिए। खुबानी में छंटाई का उद्देश्य गुणवत्तापूर्ण फल उत्पादन के लिए नई वृद्धि को प्रेरित करना है। अत्यधिक सघन, रोगग्रस्त, क्षतिग्रस्त और कीटग्रस्त शाखाओं को छंटाई करके हटा देना चाहिए, जिससे पेड़ के हर हिस्सें में पर्याप्त धूप जा सके। खुबानी में स्पर्स और एक साल पुरानी शाखाओं पर फल लगते हैं। इन स्पर्स का जीवनकाल 3-4 वर्ष तक होता है। खुबानी में फल के आकार और गुणवत्ता में सुधार के लिए, एक साल पुरानी शाखाओं में 25-30 % तक *थिनिंग* की जाती है तथा बची हुई शाखाओं को हैडिंग *बैक* के द्वारा एक तिहाई तक छांटने की सलाह दी जाती है।

खाद एवं उर्वरक

खाद एवं उर्वरक की मात्रा के निर्धारण के लिए सर्वप्रथम मृदा परीक्षण कर लेना चाहिए। खुबानी के पौधे के अच्छे विकास

और उपज के लिए गोबर की सड़ी हुई खाद 10 किग्रा., 90 ग्राम नाइट्रोजन, 30 ग्राम फॉस्फोरस, 90 ग्राम पोटाश प्रति पेड़ प्रति/वर्ष के हिसाब से बढ़ाकर 6 वर्ष तक डाली जाती है। गोबर की सड़ी हुई खाद, फॉस्फोरस व पोटाश की संपूर्ण मात्रा दिसंबर-जनवरी में तथा नाइट्रोजन की आधी मात्रा फूल आने के पहले, शेष आधी मात्रा फूल आने से पहले, शेष आधी मात्रा एक माह बाद देनी चाहिए।

जल प्रबंधन

खुबानी के पौधे की अच्छी बढ़वार के लिए नियमित अंतराल तथा समय-समय पर सिंचाई की आवश्यकता होती है। गर्मी के मौसम में पौधों की सिंचाई 7 से 9 दिन के अंतराल में की जाती है, तथा सर्दियों के मौसम में 20 से 25 दिन के अंतराल में पौधों को पानी देना होता है।

प्रमुख कीट, रोग एवं रोकथाम

खुबानी के पौधों पर लगने वाले रोग और कीट जिनमें आर्मिलारिया रूट रोट, यूटाइपा डाइबैक, ब्राउन रोट ब्लॉसम, *फाइटोफ्थोरा* रूट और क्राउनरोट, फल सड़न, शॉट होल डिजीज, बैक्टीरियल कैंकर, रस्ट, प्लमपॉक्स वायरस, यूरोपियन ईयरविग, फ्रूट ट्री लीफरोलर, ग्रीनफ्रूटवर्म आदि हैं। इन रोगों तथा कीटों से बचाने के लिए उपयुक्त दवाइयों का इस्तेमाल करना चाहिए।

फलों की तुड़ाई और पैदावार

खुबानी के पौधे रोपाई के तक़रीबन 4 से 5 वर्ष बाद देना फल आरम्भ करते है। खुबानी के पौधे 8 से 10 की उम्र में अधिकतम फल देते है। आमतौर पर खुबानी के फल मई-जून के अंत तक पक जाते हैं। इसके अलावा अन्य किस्में जून से लेकर जुलाई तक

फलों की तुड़ाई के तरीकें

तैयार होती है। खुबानी का पूर्ण विकसित पौधा 50 से 60 वर्षों तक उपज देता है। उन्नत किस्मों के आधार पर पूर्ण रूप से तैयार एक पेड़ से तकरीबन 80 किलोग्राम का उत्पादन प्रति वर्ष प्राप्त हो जाता है।

उपयोग

खुबानी का उपयोग मिठाइयों, जैम, स्क्वैश बनाने के लिए किया जा रहा है और इन फलों को सुखाकर डिब्बाबंद किया जा सकता है। शुष्क फलों का सेवन सूखे मेवे के रूप में भी किया जाता है। खुबानी फल की गुठली (मीठी) का उपयोग कन्फेक्शनरी और तेल निष्कर्षण (कड़वी गुठली) में किया जाता है।

उत्तर-पश्चिमी हिमालयन पर्वतीय क्षेत्रों में गोभी वर्गीय सब्जियों की बेमौसमी खेती : आय का एक बेहतर वैकल्पिक स्त्रोत

सुनील दत्त, चन्द्र प्रकाश, संदीप कुमार, यामिनी ठाकुर एवं निशा ठाकुर

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, कटराईं, कुल्लू, हिमाचल प्रदेश 175 129

भारतीय हिमालयन क्षेत्र अपनी समृद्ध जैव-विविधता के साथ-साथ सामाजिक-आर्थिक विविधता के लिए भी प्रसिद्ध है। यह तीन प्रकार के जैव भौगोलिक क्षेत्रों में विभाजित है जिसमें परा हिमालय, हिमालय व उत्तर पूर्वी भारत शामिल हैं। हिमाचल प्रदेश परा हिमालय व उत्तर-पश्चिमी हिमालय श्रृंखला के अंतर्गत आता है। भौतिक-वैज्ञानिक रूप से हिमाचल, तीन विशिष्ट क्षेत्रों में विभाजित है, जिसमें बाह्य हिमालय (शिवालिक), केंद्रवर्ती हिमालय (मध्य पर्वत) व हिमाद्री (उच्च पर्वत) तथा कृषि पारिस्थितिकी रूप से चार क्षेत्रों में विभाजित हैं, जो कि उपोषण कटिबंधीय नीची पहाड़ियां (240-1000 मी.), उप आर्द्र मध्य पहाड़ियां (1001-1500 मी.), आर्द्र शीतोष्ण उच्च पहाड़ियां (1500-3250 मी.) और शुष्क शीतोष्ण उच्च पहाड़ियां (3251 से 4250 मी.व अधिक) है। इन सभी कृषि पारिस्थितिकी क्षेत्रों में केवल उपोषण कटिबंधीय नीची पहाड़ियों को छोड़ कर, गोभी वर्गीय सब्जियों की गैर मौसमी खेती की जाती है।

गोभी वर्गीय फसलों को अंग्रेजी में कोल (cole) फसलों के नाम से जाना जाता है जिसकी उत्पत्ति लैटिन भाषा के शब्द कॉलिस से हुई है जिसका मतलब तना या पौधे की डंडी होता है। इनकी उत्पत्ति का केंद्र भूमध्यसागरीय (मेडीटेरेनियन) क्षेत्र है। गोभी वर्गीय फसलें मुख्यतः गोभी की जंगली फसलों के उत्परिवर्तन व अनुक्रमण के साथ विकास की प्रक्रिया के दौरान मानव द्वारा चयनित, अपनाई और विकसित की गई हैं। खाने हेतु उगाने से पूर्व, गोभी वर्गीय फसलों को मुख्यतः औषधीय रूप में उगाया जाता था। गोभी वर्गीय फसलों की उत्पत्ति एक जंगली गोभी से हुई है जिसे कोलवार्ट (*ब्रासिका ओलेरेशिया* वैरायटी *सिलवेस्ट्रिस*) के नाम से जाना जाता है। गोभी वर्गीय सब्जियां ब्रस्सिकेसी या क्रुसिफरेई फ़ैमिली की सदस्य हैं जिसके सदस्यों में बंदगोभी (*ब्रासिका ओलेरेशिया* वैरायटी *केपिटाटा*), फूलगोभी (*ब्रासिका ओलेरेशिया* वैरायटी *बोट्रायटिस*), ब्रोकली (*ब्रासिका ओलेरेशिया* वैरायटी *इटालिका*), ब्रुसेल्स स्प्राउट्स (*ब्रासिका ओलेरेशिया* वैरायटी *जैम्मीफेरा*), केल (*ब्रासिका ओलेरेशिया* वैरायटी *असिफला*) और गांठ गोभी (*ब्रासिका ओलेरेशिया* वैरायटी *गोंगिलोड्स*) शामिल हैं।

ये फसलें बीज उत्पादन के लिए द्विवार्षिक हैं परंतु सब्जी की फसल लेने व गैर मौसमी खेती के लिए वार्षिक रूप से उगाई जाती है। गोभीवर्गीय फसलों को भारत के निचले क्षेत्रों में मुख्यतः सर्दियों में उगाया जाता है लेकिन देश के पहाड़ी क्षेत्रों (हिमाचल प्रदेश, जम्मू और कश्मीर, उत्तराखंड) में इन्हें सर्दियों के आलावा गर्मियों में बेमौसमी फसल के रूप में भी उगाया जाता है। बेमौसमी फसल के किसानों को अच्छे दाम मिलते हैं और इन सब्जियों की वर्षभर उपलब्धता संभव हो पाती है । हिमाचल जैसे प्रदेश में गोभी वर्गीय फसलें किसानों के लिए आय का एक अच्छा वैकल्पिक स्रोत है, क्योंकि प्रदेश में कृषि के क्षेत्र में उन्नति के साथ साथ पर्यटन में भी वृद्धि हुई है और चायनीज व्यंजनों का काफी प्रचलन भी बढ़ा है। जिससे वर्ष भर बंदगोभी व अन्य गोभी वर्गीय फसलों की मांग रहती है। हिमाचल प्रदेश जैसा राज्य विविध कृषि पारिस्थितिकी क्षेत्रों के होने के कारण वर्षभर गोभी वर्गीय फसलों के मौसमी व गैर मौसमी उत्पादन के लिए समर्थ है। पिछले कुछ समय में हिमाचल प्रदेश ने व्यवसायिक कृषि व सब्जी उत्पादन के क्षेत्र में काफी उन्नति की है, और प्रदेश का मुख्य उद्देश्य कृषि में सुधार व उन्नति करना है। प्रदेश में सड़क, यातायात और संचार के क्षेत्र में उन्नति होने के साथ कृषि का व्यवसायीकरण हो रहा है। किसान पारंपरिक फसल उगाना छोड़ कर गैर मौसमी व्यवसायिक फसलें उगा रहे हैं जिससे राज्य में किसानों की आय में वृद्धि हुई

है खास तौर पर छोटे व सीमांत किसान काफी लाभांवित हुए हैं। वर्त्तमान ध्येय गोभी वर्गीय फसलों के व्यावसायिक व गैर मौसमी उत्पादन को बढ़ाना है जिसका मुख्य उद्देश्य रोज़गार देना, आय में वृद्धि व उपलब्ध संसाधनों का उचित उपयोग करना है। प्रदेश में बंदगोभी, फूलगोभी व ब्रोकली की काफ़ी ज्यादा खेती की जाती है परंतु किसानों को अभी अन्य गोभी वर्गीय फसलों जैसे केल, ब्रुसल स्प्राउट्स और गांठ गोभी के उत्पादन के बारे में जागरूक होने की आवश्यकता है। इनकी उत्पादन, लागत व प्रबंधन भी अन्य गोभी वर्गीय फसलों के समान ही है। इसके लिए किसानों व ग्रामवासियों को गोभी वर्गीय फसलों की व्यावसायिक खेती व स्वयं के उत्पादन हेतु मैदानी स्तर पर प्रशिक्षण व अन्य राज्य के किसानों द्वारा अपनाई जाने वाली विधि की जानकारी देना भी आवश्यक है। तालिका-1. में गोभी वर्गीय फसलों के उत्पादन, सुझाई गई किस्में, मृदा स्थिति, रोपाई व बुआई संबंधी जानकारियां दी गई हैं।

बंदगोभी

लाल पत्ता गोभी

फूलगोभी

बैंगनी फूलगोभी

गांठ गोभी

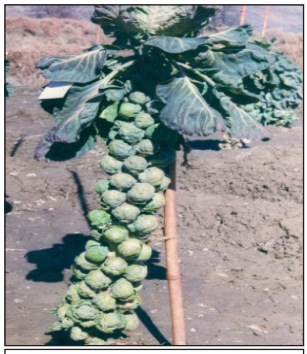

ब्रुसल स्प्राउट्स

ब्रोकली

केल

छायाचित्र : विभिन्न प्रकार की गोभी वर्गीय फसलें

तालिका-1. बेमौसमी फसल लेने हेतु गोभी वर्गीय सब्जिओं की उत्पादन तकनीकें

क्रमांक	फसल	मृदा स्थिति	बीज की मात्रा/ हैक्टेयर (ग्राम)	बुआई	रोपाई	रोपण दूरी (सेंटीमीटर)	सुझाई गई किस्में
1.	बंदगोभी	बलुई व चिकनी दोमट मिट्टी	400-500	जनवरी-फरवरी	मार्च-अप्रैल	45×45	गोल्डन एकर, पूसा कैबेज-1 (संकर), पूसा हाइब्रिड-81, पूसा हाइब्रिड-82, पूसा रेड कैबेज हाइब्रिड-1, सेंट, ग्रीन वोयजर, रेड स्काई, स्कारलेट रेड
2.	फूलगोभी	बलुई व चिकनी दोमट मिट्टी	400-500	दिसंबर-जनवरी	फरवरी-मार्च	45×45	पूसा हिम्ज्योती, पूसा स्नोबॉल-1, पूसा स्नोबॉल के-1, पूसा स्नोबॉल के-25, पूसा स्नोबॉल हाइब्रिड-1 पूसा स्नोबॉल हाइब्रिड-2 पूसा हाइब्रिड-301 पूसा पर्पल कौलीफ्लावर-1, जीवोंट, कैस्पर, महारानी, हिमदेव
3.	ब्रोकली	चिकनी बलुई मिट्टी	400-500	दिसंबर-जनवरी	फरवरी-मार्च	45×45	पूसा ब्रोकली केटीएस-1, पालम समृधि, पालम कंचन, पालम हरितिका, पालम विचित्रा, पंजाब ब्रोकली-1, लक्की, साकी
4.	ब्रूसल स्प्राउट्स	बलुई दोमट मिट्टी	300-400	जनवरी-फरवरी	मार्च-अप्रैल	75×60	हिल्ड्स आइडियल
5.	केल	बलुई दोमट मिट्टी	800-900	जनवरी-फरवरी	मार्च-अप्रैल	30×30	पूसा केल-64, काशी केल -1
6.	गांठ गोभी	बलुई दोमट मिट्टी	800-1000	जनवरी-फरवरी	मार्च-अप्रैल	30×30	पूसा विराट, व्हाईट विआना, पर्पल विआना, पालम टेंडरनोब

पोषक तत्वों के प्रबंधन द्वारा बाजरे की गुणवत्ता एवं उत्पादकता में सुधार

विनोद कुमार शर्मा[1], इंदु चोपड़ा[1], मन्दिरा बर्मन[1], शिल्पी वर्मा[1], देबरूप दास[1], नरेश कुमार[2] एवं रीना चौहान[3]

[1]मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विज्ञान संभाग एवं [2]आनुवंशिकी संभाग
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110 012
[3]कीट विज्ञान विभाग, चौ. चरण सिंह कृषि विश्वविद्यालय, हिसार 125 004

भारतीय कृषि में बार-बार मानसून की कमी महसूस की जाती है। कम सिंचाई की आवश्यकता के कारण यह भारत में बहुत उपयोगी फसल है जिसे कम सिंचाई वाले सूखे इलाकों के साथ-साथ कम उपजाऊ और कम नमी वाली मृदा में उगाया जा सकता है बाजरा की फसल कम समय (65-80 दिनों) में पककर तैयार हो जाती है। बाजरे का भंडारण बीज के लिए अगर ठीक से किया जाए तब यह बीज दो वर्षों तक या इससे ज्यादा समय तक प्रयोग में किया जा सकता है। बाजरा के दानों को पौष्टिक अन्न एवं बाजरा फसल के अवशेषों (सूखा चारा) का पशुओं के लिए सूखे चारे के रूप में भी प्रयोग करते हैं जिससे यह सूखे वाले क्षेत्रों में एक आरक्षित फसल के रूप में लाभकारी सिद्ध होता है।

बाजरा अन्न का उपयोग

बाजरे का दालों/तिलहनों के साथ इस्तेमाल करके इससे पौष्टिक भोजन जैसे; चपातियां, ब्रैड, लड्डू, पास्ता एवं बिस्कुट तैयार किए जा सकते हैं। छिलके उतारने के बाद इसका इस्तेमाल चावल की तरह किया जा सकता है। इसके आटे का प्रयोग विभिन्न उत्पादों के बनाने में में भी कर सकते हैं जैसे बेसन के साथ मिलाकर इसका इस्तेमाल इडली, डोसा और उत्पम बनाने में किया जा सकता है। बाजरे का इस्तेमाल करने से पहले परंपरागत नए तरीके की प्रोसेसिंग भी की जा सकती है। जिसमे रागी और गेहूं के आटे को मिलाकर इससे मुरक्कू, पापड़, वड़िया, भूजिया, वर्मीसेली, स्पाघेटी, नूडल्स, मेकरोनी इत्यादि बनाई जा सकती है। साथ ही साथ बाजरे के आटे को गेंहूं के आटे में मिलाकर बहु-अनाज आटा तैयार किया जा सकता है जिसका उपयोग बिस्कुट, डबलरोटी, बन, रस, केक, और मफीन के लिए कर सकते हैं। इसीलिए बाजरे अन्न से बने (आंशिक रूप से तैयार) उत्पाद मार्केट में पेश किए जा सकते हैं जिन्हें प्रत्येक घरों में उपयोग करने से बाजरे अन्न की खपत भी बढ़ेगी और पौष्टिक अनाज के रूप में इसकी अधिक मांग होने से यह चावल और गेंहूं जैसे मुख्य खाद्य पदार्थों की श्रेणी में अपना एक स्थान प्राप्त कर सकेगा।

बाजरा अन्न की पौष्टिकता

बाजरा अन्न में लोहा, कैल्सियम, जस्ता, मैग्नीशियम और पोटैशियम जैसे तत्वों की प्रचुरता होती है। बाजरा अन्न में लौह तत्व अधिक होता है। जबकि रागी में कैल्सियम अधिक मात्रा में होता है भोजन के लिए आवश्यक फाईबर की अधिकता के साथ-साथ विभिन्न विटामिन्स (कैरोटिन, नियासिन, विटामिन बी और फोलिक एसिड) भी होते हैं इसीलिए यदि प्रत्येक व्यक्ति नियमित रूप से बाजरा को खाने में प्रयोग करता है तब भारत की आबादी का अधिकांश भाग कुपोषण मुक्त हो सकता है। हालांकि बाजरे को मोटा आनाज कहा जाता है लेकिन पोषण तत्वों में समृद्ध होने के कारण इस अनाज को न्यूट्रिया मिलेट्स/न्यूट्रिया सीरियल्स भी कहा जाता है। बाजरे में अनेक गुण होने के बावजूद अधिकांशतः इस अनाज का इस्तेमाल कुछ ही जैसे: जनजातीय समुदाय करते हैं, जो इसका इस्तेमाल पहले से करते आ रहे हैं। हाल ही में बाजरे पर काफी लोगों का ध्यान गया है और कोशिश की जा रही है कि इस अनाज से तैयार उत्पादों का उपयोग अधिक से अधिक मात्रा में किया जाए।

मिट्टी एवं सिंचाई की आवश्यकता

बाजरा आंध्र प्रदेश के तटीय इलाकों से लेकर उत्तराखंड और पूर्वोत्तर राज्यों के पहाड़ी इलाकों में उगाया जाता है। इसीलिए बाजरा यह दर्शाता है इसे कम नमी, अधिक तापमान, उच्च आद्रता

एवं विभिन्न प्रकार की रेतीली मिट्टी से अनउपजाऊ मिटटी में सफलता पूर्वक उगाया जा सकता है। जिससे इसे देश के किसी भी राज्य में आसानी से अपनाया जा सकता है। जहां सिंचाई सुविधाएं कम हैं अतः ऐसे इलाकों में खाने के लिए उपयुक्त अनाज (पौष्टिक भोजन) के रूप में बाजरे की खेती करनी चाहिए। इसी कारण देश की आबादी को खाद्य सुरक्षा देने के लिए यह एक महत्वपूर्ण फसल है और इसकी उपज, खपत और वितरण पर नियंत्रण भी रखा जा सकता है। परंतु भोजन के रूप में इसे लोकप्रिय बनाने की आवश्यकता है।

उर्वरकों का प्रयोग

1. सामान्य संस्तुति

मृदा परीक्षण के आधार पर उर्वरकों का प्रयोग करें। यदि परीक्षण के परिणाम उपलब्ध न हो ता सिंचित क्षेत्र में संकर प्रजाति के लिए 80 किलोग्राम नाइट्रोजन, 40 किलोग्राम फॉस्फोरस एवं 40 किलोग्राम पोटाश तथा असिंचित क्षेत्र में यह 60 किलोग्राम नाइट्रोजन, 30 किलोग्राम फॉस्फोरस एवं 30 किलोग्राम पोटाश/ हेक्टेयर की दर संस्तुति की जाती है। फॉस्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा तथा नाइट्रोजन की आधी मात्रा बुआई से पहली बेसल ड्रेसिंग तथा जब पौधे 25-30 दिन के हो जाने पर शेष नाइट्रोजन की आधी मात्रा टापड्रेसिंग के रूप में देनी चाहिए।

2. मृदा परिक्षण पर आधारित उर्वरकों की संस्तुति

जब मृदा परीक्षण के बाद मृदा में उपलब्ध जीवांश पदार्थ (कार्बनिक पदार्थ), नाइट्रोजन, फॉस्फोरस एवं पोटाश की मात्रा के आधार पर इन्हें निम्न,मध्यम एवं उच्च वर्ग (**सारणी-1**) में विभाजित कर लिया जाता है इसके आधार पर जब किसी खेत की उर्वराशक्ति मध्यम वेग में होती है उस खेत के लिए उस तत्व की सामान्य उर्वरक संस्तुति का ही प्रयोग करते हैं। अति निम्न एवं निम्न वर्ग में आने वाली उर्वरता के लिए सामन्य संस्तुति का क्रमशः 50 से 25 प्रतिशत तक अधिक (मृदा में उपलब्ध पोषक तत्वों की मात्रा को ध्यान में रखकर) उर्वरक मात्रा की संस्तुति की जाती है। इसी प्रकार अति उच्च एवं उच्च वर्ग में आने वाली उर्वरता के लिए सामान्य संस्तुति का क्रमशः 50 से 25 प्रतिशत कम (मृदा में उपलब्ध पोषक तत्वों की मात्रा को ध्यान में रखकर) उर्वरक मात्रा की संस्तुति की जाती है।

3. मृदा परीक्षण पर आधारित बाजरा की लक्षित उपज हेतु उर्वरक संस्तुति

इस तकनीक से किसान अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार मृदा परीक्षण के बाद मृदा में उपलब्ध पोषक तत्वों की मात्रा के अनुसार बाजरा फसल के लिए उर्वरकों की मात्रा का निर्धारण लक्षित उपज (उपज क्षमता का 90%) तथा फार्म पर उपलब्ध गोबर खाद की मात्रा के अनुसार कर सकता है। पोषक तत्वों की मात्रा की गणना नीचे दिए गए समीकरणों का प्रयोग करते हुए कर सकते हैं।

मृदा परीक्षण आधारित बाजरा हेतु पोषक तत्वों का निर्धारण के लिए उर्वरक समायोजन समीकरण:

1.) बिना गोबर खाद

अ) नाइट्रोजन की मात्रा (किग्रा./है.) = 6.97 x लक्षित उपज (कु./है.) - 0.38 x मिट्टी में उपलब्ध नाइट्रोजन की मात्रा (किग्रा./है.)

ब) फॉस्फोरस की मात्रा (किग्रा./है.) = 5.73 x लक्षित उपज (कु./है.) – 4.81 x मिट्टी में उपलब्ध फॉस्फोरस की मात्रा (किग्रा./है.)

स) पोटाश की मात्रा (किग्रा./है.) = 3.92 x लक्षित उपज (कु./है.) – 0.28 x मिट्टी में उपलब्ध पोटाश की मात्रा (किग्रा./है.)

2.) गोबर खाद के साथ (एकीकृत)

अ) नाइट्रोजन की मात्रा (किग्रा./है.) = 5.35 x लक्षित उपज (कु./है.) - 0.29 x मिट्टी में उपलब्ध नाइट्रोजन की मात्रा (किग्रा./हे.) - 2.23 x गोबर खाद की मात्रा

सारणी-1. मृदा में उपलब्ध पोषक तत्वों का वर्ग निर्धारण

तत्व	निम्न	मध्यम	उच्च
जैविक कार्बन (प्रतिशत)	0.50 से कम	0.50-0.75	0.75 से अधिक
नाइट्रोजन (कि.ग्रा./हैक्टेयर)	280 से कम	280-560	560 से अधिक
फॉस्फोरस (कि.ग्रा./हैक्टेयर)	10 से कम	10-25	25 से अधिक
पोटाश (कि.ग्रा./हैक्टेयर)	120 से कम	120-280	280 से अधिक

ब) फॉस्फोरस की मात्रा (किग्रा./है.) = 4.72 x लक्षित उपज (कु./है.) - 3.29 x मिट्टी में उपलब्ध फॉस्फोरस की मात्रा (किग्रा./है.) - 2.48 x गोबर खाद की मात्रा

स) पोटाश की मात्रा (किग्रा./है.) = 2.88 x लक्षित उपज (कु./है.) – 0.17 x मिट्टी में उपलब्ध पोटाश की मात्रा (किग्रा./है.) – 1.35 x गोबर खाद की मात्रा

इसके अलावा बाजरा की लक्षित उपज 30 क्विंटल/हैक्टेयर के लिए मृदा में उपलब्ध पोषक तत्वों के अनुसार बार चार्ट भी दिए गए हैं। जब किसान अपनी लक्षित उपज को अपने अनुसार घटाता एवं बढ़ाता है तब उसे समीकरणों का प्रयोग करना चाहिए। अंत में पोषक तत्वों (नाइट्रोजन, फॉस्फोरस एवं पोटाश) की मात्रा अनुसार उर्वरकों (यूरिया, डीएपी एवं म्यूरेट ऑफ़ पोटाश) की गणना आवश्यक है।

फसल : बाजरा

लक्षित उपज: 30 क्विंटल/हैक्टेयर

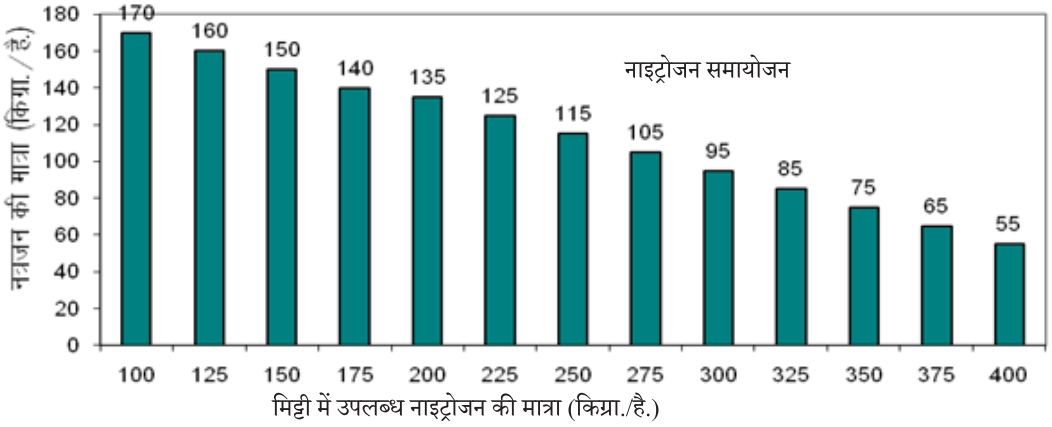

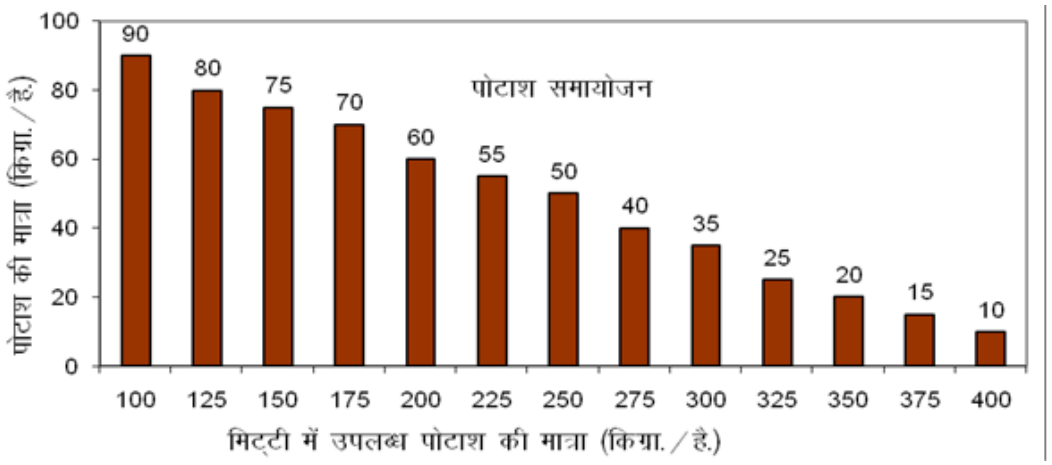

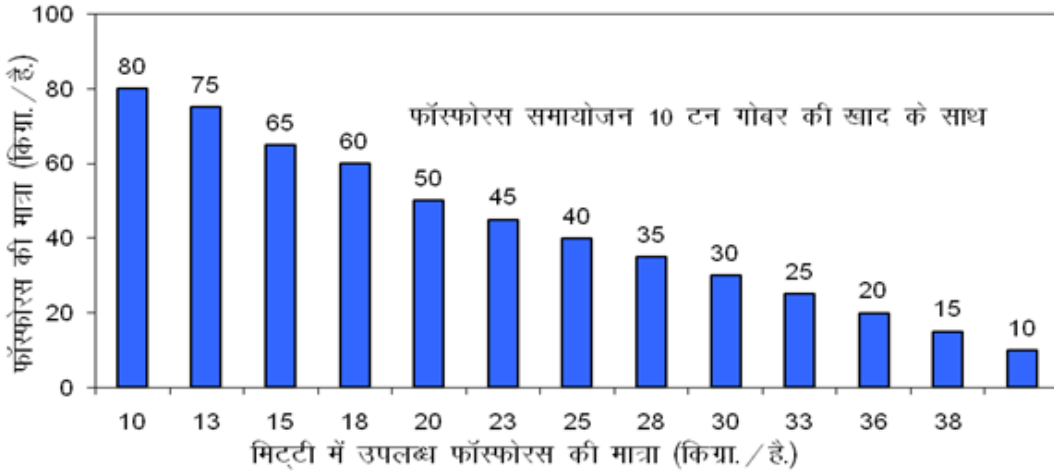

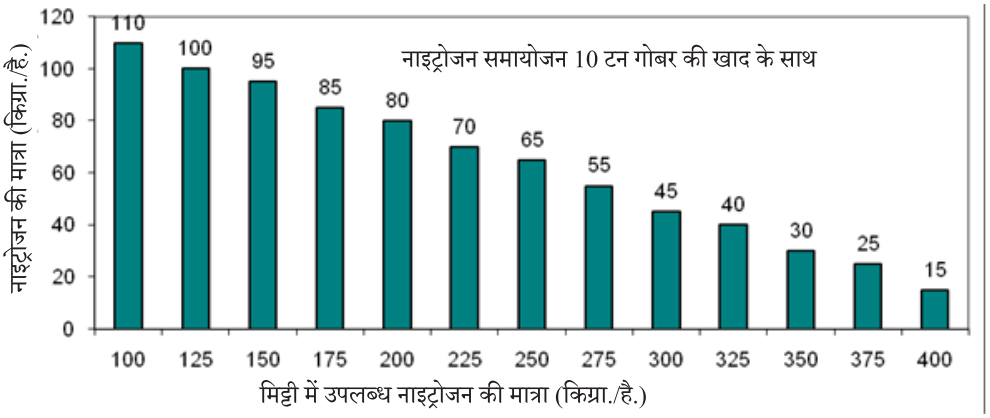

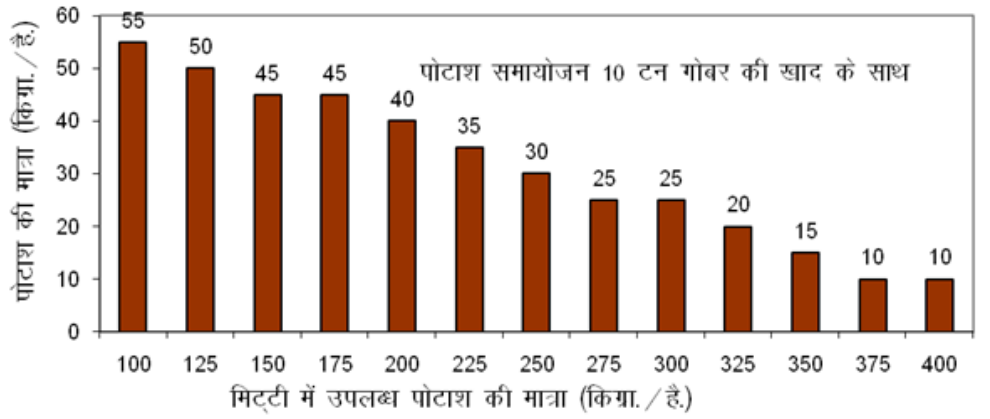

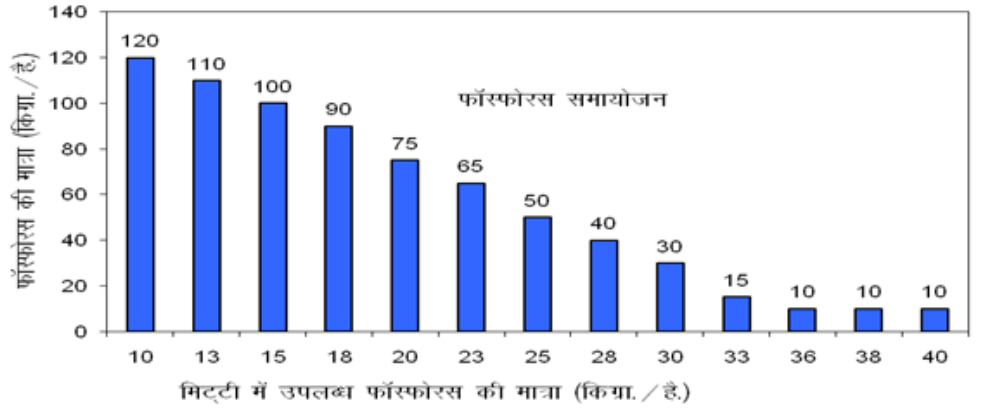

10 टन गोबर खाद के साथ (एकीकृत)

यदि मृदा जांच में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी है तब गोबर खाद, हरी खाद (ढेंचा) या कार्बनिक पदार्थों का उपयोग अत्यंत आवश्यक है। साथ ही साथ सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को दूर करने किए इनके खादों के उपयोग से इनकी कमी को दूर करना बहुत आवश्यक है जो अन्न की पौष्टिकता एवं फसल उत्पादकता बनाए रखने के लिए अत्यंत आवश्यक हैं।

सारांश: आधुनिक कृषि प्रणाली में मृदा परीक्षण के आधार पर संतुलित उर्वरकों का उपयोग बहुत आवश्यक है। यह खेती से गुणवत्ता युक्त उत्पाद एवं उच्च उत्पादकता के साथ-साथ मृदा स्वास्थ्य (उर्वराशक्ति) को निरंतर बनाए रखने में सहायक सिद्ध होता है जिससे भविष्य में उत्पादन लागत में भी कमी आएगी।

किन्नू बागवान स्थापना एवं प्रबंधन

रवि कुमार मीणा एवं बी.एस.मीणा

कृषि अनुसंधान केंद्र, श्रीगंगानगर

भारत वर्ष में उगाये जाने वाले विभिन्न फलों में नींबू प्रजाति के फलों का महत्वपूर्ण स्थान है। इनमें विटामिन-ए, बी, सी एवं खनिज तत्व प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। नींबू वर्गीय फलों में किन्नू फल की एक अलग पहचान है। यह फल राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश तथा उत्तर प्रदेश के कुछ क्षेत्रों में सफलतापूर्वक उगाया जाता है, लेकिन राजस्थान के श्रीगंगानगर क्षेत्र में उगाए गए फलों का स्वाद, रंग एवं गुणवत्ता उत्तम मानी जाती है, जिसके कारण इसकी राजस्थान के अलावा देश के विभिन्न बड़े शहरों जैसे दिल्ली, मुंबई, सूरत, अहमदाबाद, चेन्नई, बैंगलोर, कलकत्ता आदि में श्रीगंगानगर के किन्नू की मांग दिनों-दिन लगातार बढ़ रही है। बाग की स्थापना लंबे समय का निवेश है अतः किन्नू फलदार पौधों की रोपाई योजनाबद्ध, विशेष सावधानियां रखते हुए करनी चाहिए।

भूमि एवं स्थान का चुनाव

बाग लगाने के लिए ऐसे स्थान का चुनाव करें, जहां सिंचाई का समुचित प्रबंध हो तथा सड़क एवं यातायात की अच्छी व्यवस्था हो, जहां तक संभव हो समतल खेत का चयन करना चाहिए। यदि खेत समतल न हो तो बाग स्थापना से पूर्व समतल कर लेना चाहिए। साथ ही पानी निकासी की भी उचित व्यवस्था अवश्य होनी चाहिए।

बाग लगाने के लिए दोमट, उपजाऊ, गहरी एवं उचित जल निकास वाली भूमि उपयुक्त रहती है। क्षेत्र में दो मीटर की गहराई तक किसी प्रकार की सख्त या कंकर की तह नहीं होनी चाहिए। पानी का जल स्तर दस फीट से नीचा होना चाहिए। क्षारीय व अम्लीय भूमि में जहां तक हो सके बाग न लगाए या फिर उन्हीं फलदार पौधों को लगाए जो इसके प्रति प्रतिरोधक क्षमता रखते हों। अतः बाग लगाने से पहले मिट्टी व पानी का परीक्षण (जांच) अवश्य करवा लेनी चाहिए, क्योंकि यह जरूरी नहीं है कि जिस जमीन में अच्छी फसल ली जा रही है, उसमें फलदार पेड़ भी सफलतापूर्वक लगाए जा सकते है। अतः निम्न तरीकें द्वारा मिट्टी का नमूना लेना चाहिए। (तालिका 1.)

- मिट्टी के नमूने ऊपरी 15 सेंटीमीटर, 15 से 30 सेंटीमीटर, 30 से 60 सेंटीमीटर, 60 से 90 सेंटीमीटर, 90 से 120 सेंटीमीटर, 120 से 150 सेंटीमीटर तथा 150 से 200 सेंटीमीटर की तह से लें। एक ही स्थान से लिए गए इन सातों नमूनों को आपस में नहीं मिलाना चाहिए। इनको अलग-अलग साफ पोलीथीन की थैलियों में भरना चाहिए एवं प्रत्येक थैली में नमूने की पहचान हेतु एक कार्ड (टेग) अवश्य डालना चाहिए।
- मिट्टी का नमूना लेते समय जमीन में पाई जाने वाली कंकर की तह की गहराई एवं मोटाई अवश्य अंकित करें और इनका नमूना अलग से लें।

(तालिका 1.) किन्नू के बाग हेतु मिट्टी जांच की अधिकतम सीमाएं

क्र.सं	परीक्षण	मिट्टी जांच की अधिकमत सीमाएं
1.	पी.एच.मान.	8.5
2	ई.सी.(ds/m)	0.5
3.	केल्सियम कार्बोनेट (%)	5
4.	चूना (%)	10

पौधों का चुनाव

उद्यान की सफलता बहुत हद तक अच्छे फल वृक्षों की पौध के चुनाव पर आधारित है। पौधे स्वस्थ, औसत ऊंचाई के हो, कलम (बडेड/ग्राफ्टेड) बांधने के बाद कम से कम एक वर्ष तक पौधाशाला (नर्सरी) में रखे गए हो तथा रोग एवं कीट से मुक्त हों। इसके लिए पंजीकृत या किसी विश्वसनीय पौधशाला से स्वयं जाकर खरीदने चाहिए। कलम का जोड़ भूमि से लगभग 25-30 सेंटीमीटर ऊंचा होना चाहिए। बडेड/ग्राफ्टेड भाग की बढ़वार 15 सेंटीमीटर से कम नहीं होनी चाहिए तथा उस पर 10-12 पत्ते अवश्य हों। पॉलीथीन बैग में लगे पौधों को ही खरीदे। यदि पौधा

जमीन में लगा है तो पौधों को निकालते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए, कि उनकी जड़ों को कोई क्षति न पहुंचे।

पौध लगाना

किन्नू के पौधे 6मी.x 6मी. की दूरी पर लगाना चाहिए। पौधे लगाने के लिए एक घनमीटर आकार के गड्ढ़े मई-जून के महीने में खोद लेने चाहिए। गड्ढ़ों में 25-30 किलो गोबर की खाद तथा एक किलो सुपर फॉस्फेट, 50 से 100 ग्राम क्यूनालफॉस (1.5 प्रतिशत) चूर्ण गड्ढ़ों की मिट्टी में मिलाकर भर देनी चाहिए। पौध लगाने का सबसे उपयुक्त समय जुलाई से सितंबर रहता है। जहां पानी की अच्छी सुविधा हो वहां इनको फरवरी-मार्च में भी लगाया जा सकता है। किन्नू में ड्रिप पद्धति से सिंचाई के लिए फसल ज्यामित 6x4 वर्ग मीटर एवं 6x4 वर्ग मीटर उत्तम पाई गई।

1. बूंद-बूंद सिंचाई आधारित किन्नू बाग

2. किन्नू बाग

(तालिका 2.) खाद एवं उर्वरक मात्रा प्रति पौधा (कि.ग्रा. में)

खाद/उर्वरक (कि.ग्रा.)/वर्ष प्रति पौधा में	किन्नू के पौधों की आयु वर्षों में						
	एक वर्ष	दो वर्ष	तीन वर्ष	चार वर्ष	पांच वर्ष	छः वर्ष	सात वर्ष से अधिक
गोबर खाद	20	40	60	100	100	100	100
सुपर फास्फेट	0.250	0.500	0.750	1.250	1.250	1.500	1.500
म्यूरेट ऑफ पोटाश	--	--	0.300	0.500	0.500	0.500	0.500
नाइट्रोजन	0.060	0.120	0.180	0.450	0.450	0.625	0.750
जिंक सल्फेट	0.035	0.070	0.100	0.250	0.250	0.250	0.250

गोबर की खाद + सुपर फास्फेट + म्यूरेट ऑफ पोटाश – जनवरी से फरवरी के प्रथम सप्ताह तक दें तथा नाइट्रोजन 1/3 भाग फरवरी (फूल आने से पहले) + 1/3 भाग अप्रैल में (फल या दाना लगने बाद) + 1/3 भाग अगस्त के चौथे सप्ताह से प्रथम पांच साल तक दें।

सूक्ष्म तत्वों का छिड़काव

सूक्ष्म तत्वों की कमी की पूर्ति के लिए जिंक सल्फेट 500 ग्राम, कॉपर सल्फेट 300 ग्राम, फेरस सल्फेट 200 ग्राम, मैंगनीज सल्फेट 200 ग्राम, मैगनीशियम सल्फेट 200 ग्राम, बोरिक एसिड 100 ग्राम तथा चूना 900 ग्राम व पानी 100 लीटर में अलग-अलग घोल कर फिर एक साथ मिलाकर नए पत्ते खुलने के बाद छिड़काव करना चाहिए।

सिंचाई

जनवरी के प्रथम सप्ताह से सिंचाई बंद कर दें तथा फल लगने के बाद से सिंचाई आरंभ कर दें, गर्मियों में करीब 7-10 दिन के

अतंर पर व सर्दियों में 20 से 25 दिन के अतंर पर सिंचाई करनी चाहिए। फल तोड़ने से 12-15 दिन पहले सिंचाई बंद कर दें।

बूंद-बूंद सिंचाई पद्धति

बाग में बूंद-बूंद पद्धति से सिंचाई करना, बाग में ड्रिपर्स की पौधों से दूरी, पौधे की उम्र तथा बढ़वार पर निर्भर करता है। सामान्यतय: नए लगाए गए बाग में पौधे की तने से ड्रिपर्स की दूरी दोनों ओर से एक फुट की होनी चाहिए तथा ड्रिपर्स 4 लीटर प्रति घंटा की क्षमता का लगाएं। इसी हिसाब से हर साल दूरी को पौधे की बढवार के हिसाब से बढाते रहें तथा ड्रिपर्स भी बढ़ाएं। जब तक कि यह पौधे से एक मीटर की दूरी हो जाए। पानी की मात्रा एक दिन छोड़कर तथा महीने के हिसाब से नीचे दी गई तालिका-2 के अनुरूप ही दें।

तालिका-3. किन्नू में बूंद-बूंद सिंचाई पर पानी की मात्रा एक दिन के अंतराल पर (लीटर में) प्रति पौधा

आयु	मार्च	अप्रैल	मई	जून	जुलाई	अगस्त	सितं.	अक्टू.	नव.	दिस.	जनवरी	फरवरी
प्रथम वर्ष	3.5	5.8	7.2	7.5	6.9	6.6	5.4	4.0	2.4	1.5	1.5	2.4
द्वितीय वर्ष	8.02	13.0	16.2	16.9	15.5	14.9	12.1	9.0	5.4	3.4	3.5	5.4
तृतीय वर्ष	14.5	23.0	28.8	30.1	27.6	26.5	21.7	16.1	9.5	6.1	6.2	9.5
चतुर्थ वर्ष	44.4	51.8	64.8	67.8	62.2	59.5	48.7	36.2	21.5	13.6	13.9	21.5
पंचम वर्ष	58.0	92.1	115.2	120.6	110.2	105.8	86.7	64.3	38.2	24.1	24.6	38.2
छठा वर्ष	58.0	92.1	115.2	120.6	110.5	105.8	86.7	64.3	38.2	24.1	24.6	38.2
सातवां वर्ष	65.2	100.1	120.5	142.0	135.0	120.8	95.7	73.8	58.0	44.0	32.6	58.0

अंतरासस्य

पेड़ों में फल आना शुरू होने तक (प्रारंभ के तीन वर्षों तक) बाग में विभिन्न सब्जियां जैसे ग्वार, मटर, चैला, धनिया, मेथी, गाजर, मूली, टमाटर, बैंगन तथा मिर्च आदि उगाई जा सकती है, परंतु बेलदार सब्जियां (कुष्माण्ड कुल की सब्जियां) लेना उचित नहीं है। इसके अतिरिक्त दलहनी फसलें (मूंग तथा चना) भी ली जा सकती हैं। मध्यंतर फसलें लेने से खेत में निराई-गुड़ाई व खुदाई होती रहती है, जोकि बाग के लिए उपयुक्त रहती है, परंतु अत्यधिक सिंचाई चाहने वाली फसलें तथा सब्जियां किन्नू के बाग में नहीं लेनी चाहिए।

देखभाल

पौधों की प्रारंभिक अवस्था में ट्रेनिंग की आवश्यकता होती है। फल देने वाले पौधे को कम छंटाई की आवश्यकता होती है। फलों को तोड़ने के उपरांत ऐसी शाखाएं जो जमीन से संपर्क में आ जाती है; उनको काट देते हैं। सभी रोगग्रस्त, घनी मध्य से सूखी हुई शाखाओं तथा गुल्ले (वाटर स्प्राउटस) को काट दें तथा कांट-छांट के तुरंत बाद एक सेंटीमीटर से मोटी टहनियों पर बोड्रेक्स पेन्ट का लेप करें तथा पूरे वृक्ष पर बोर्डो मिश्रण (2:2:250) या 200 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 100 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करें।

वायुरोधक पौध लगाना

वायु अवरोधकों को उत्तर-पश्चिम दिशा में लगाएं। यदि इन्हें बाग के चारों और लगाया जाएं तो और अच्छा होगा। अर्जुन, आंवला, देशी जामुन, देशी आम के पौधे लगाने चाहिए। वायु अवरोधकों को और अधिक प्रभावी बनाने के लिए बडे पौधों के मध्य या दूसरी पंक्ति में छोटे आकार के पौधे जैसी देशी बेर, जटटी-खट्टी, करौंदा, शहतूत आदि लगाएं। वायु अवरोधक वृक्षों की आपसी दूरी 4-5 मीटर रखें। इन वृक्षों की जड़ों को मुख्य बाग में जाने से रोकने के लिए 1 से 1.5 मीटर गहरी खाई इन वृक्षों के पास बाग की ओर खोद दें।

कीट प्रबंधन-किन्नू के बाग में कीट प्रबंधन तालिका-3 के अनुसार करें।

तालिका-4. किन्नू के बाग में समन्वित कीट प्रबंधन

क्र.सं.	कीट	नियंत्रण
1.	नींबू का सिल्ला	डाईफेन्थुरान (50 डब्ल्यू पी) 2 ग्राम/लीटर पानी अथवा डीसीट्रान प्लस 0.5 प्रतिभात अथवा नोवाल्यूरान 10 ईसी 1 मिली/लीटर पानी का छिड़काव आवश्यकतानुसार 10-15 दिन के अंतराल पर दो बार करें।
2.	नींबू की सफेद मक्खी	डाईफेन्थुरान (50 डब्ल्यु पी) 2 ग्राम/लीटर पानी अथवा नोवाल्यूरान 10 ईसी 1 मिली प्रति लीटर पानी अथवा करन्ज ऑयल (1 प्रतिशत) का छिड़काव करें।
3.	मिली बग	क्लोरपायरीफॉस (20 ईसी) 2 मिली/लीटर पानी या डाईफेन्थुरान (50 डब्ल्यु पी) 2 ग्राम/लीटर पानी या डीसीट्रान प्लस 0.5 प्रतिशतया करन्ज ऑयल (0.1 प्रतिशत) का छिड़काव करें।
4.	नींबू की वरूथी (सिट्रस माइट)	प्रोपार्जाइट (57 ईसी) 2 मिली/लीटर पानी या टाईजोफॉस (40 ईसी) 2.5 मिली/लीटर पानी या डाईफेन्थरॉन (50 डब्ल्यु पी) 2 ग्राम/लीटर पानी का छिड़काव 7 दिन के अंतराल पर करें।
5.	नींबू का थ्रिप्स	थायोमिथोक्जाम (25 डब्ल्यु जी) 0.4 ग्राम या एसिटामिप्रिड (20 एसपी) 0.4 ग्राम/लीटर पानी या डाईफेन्थुरान (50 डब्ल्यु पी) 2 ग्राम/लीटर पानी का छिड़काव या टाईजोफॉस (40 ईसी) 2 मिली/लीटर पानी का छिड़काव 10 दिन के अंतराल पर करें।

प्रमुख व्याधियां-फाईटोप्थोरा गलन/गोंदाति रोग (गमोसिस)

फाईटोप्थोरा गलन के कारण पौधों की जड़ें एवं तने की छाल गलने लगती है तथा पत्तियां अंदर की ओर मुड़ जाती हैं। तनों पर भूमि के पास से और टहनियों के रोगग्रस्त भाग से गोंद जैसा पदार्थ निकलकर छाल पर बूंदों के रूप में इकट्ठा हो जाता है, जिसकी वजह से छाल सूख कर फट जाती है और भीतरी भाग भूरे रंग का हो जाता है। रोग के प्रकोप से अंत में पौधा मरने की स्थिति में पहुंच जाता है।

नियंत्रण के लिए तने या टहनी की रोगग्रस्त छाल को चाकू से छिल कर हटा दें। इस प्रक्रिया में रोग ग्रस्त भाग से सटी थोड़ी स्वस्थ छाल भी हटाएं। तत्पश्चात मेटालेक्सिल.एम 4 प्रतिशत मेन्कोजेब 64 प्रतिशत (68 डब्ल्यु पी) की 20 ग्राम मात्रा एक लीटर अलसी के तेल में घोल बनाकर छिले हुए भाग पर लेप दें अथवा स्यूडोमोनास फल्यूरोसेन्स या ट्राइकोडर्मा हरजैनियम (पाऊडर आधारित) की 100 ग्राम मात्रा का एक लीटर पानी में घोल बनाकर छिले हुए भाग पर लेप दें एंव 5 दिन बाद इसी भाग पर अलसी का तेल लेप दें। साथ ही मेटालेक्सिल.एम 4 प्रतिशत मेन्कोजेब 64 प्रतिशत (68 डब्ल्यु पी) 25 ग्राम/पौधे के हिसाब से 40-45 लीटर पानी में घोल बनाकर पौधे की जड़ों में दे अथवा ट्राइकोडर्मा हरजैनियम की 60 ग्राम मात्रा/पौधे के हिसाब से जड़ों के चारों तरफ खुरपे से मिट्टी में मिलाकर 40-50 लीटर पानी पौधे के चारों तरफ भूमि पर छिड़क दें।

इन समस्त क्रियाओं को फरवरी व अगस्त माह में करें तथा भूमि उपचार मेटालेक्सिल.एम 4 प्रतिशत मेन्कोजेब 64 प्रतिशत (68 डब्ल्यु पी) अथवा ट्राईकोडर्मा को दोनों माह में 15 दिन के अंतराल पर दोहराएं।

चित्र: किन्नू का फायटोप्थोरा (गमोसिस) रोग

बाग में पानी का प्रबंध इस प्रकार करें कि पानी तने के सीधे संपर्क में न आए तथा रोगग्रसित पौधे का पानी स्वस्थ पौधे में न जाएं। इसके अतिरिक्त बगीचे की देखभाल, पानी के अच्छे निकास, धूप, हवा आदि का ध्यान रोग से बचाव के लिए अतिआवश्यक है।

तुड़ाई पूर्व फलों का गिरना एवं तुड़ाई उपरांत फलसड़न

किन्नू में रोगों एवं अन्य कारणों (जलवायु संबंधी) से तुड़ाई पूर्व फलों का गिरना एवं तुड़ाई उपरांत फलसड़न से बचाव हेतु

कार्बेन्डाजिम 50 डब्ल्यू पी 1 ग्राम प्रति लीटर पानी या प्रोपीनाजोल 25ईसी1 मिली/लीटर पानी या प्रोपीनेब 70 डब्ल्यू पी 2 ग्राम/लीटर पानी या जैव नियंत्रक यीस्ट ''स्पोरिडीयोबोलस पैरारोजेअस'' (के एफ आई-1) 10^9 सी.एफ.यू. प्रति मिली. पानी के धोल में पांच छिड़काव-मार्च, अप्रैल, अगस्त, सितंबर एवं अक्टूबर माह में करें। अप्रैल, अगस्त एवं सितंबर माह में छिड़काव के लिए प्रयोग किए जाने वाली धोल में जिब्रेलिक एसिड 20 मिलीग्राम प्रति लीटर घोल की दर से मिलाएं।

सितंबर माह से फल गिरने लग जाते हैं। इनकी रोकथाम के लिए एक ग्राम 2,4-डी होर्टीकल्चर ग्रेड या सोडियम 2,4-डी को 100 लीटर पानी में किन्नू के वृक्षों पर छिड़काव करना चाहिए।

तुड़ाई एवं उपज

किन्नू फल का रंग जब हल्का पीला हो जाए, तब इन्हें तोड़ लेना चाहिए। किन्नू की उपज प्रति प्रौधा 150-175 किलो होती है। किन्नों के फलों को 100-200 गेज के पॉलीथीन के लिफाफे में रखकर 45-50 दिन तक संग्रह किया जा सकता है। 10 दिन के अंतराल पर एक बार लिफाफे से बाहर निकालें।

चित्र: किन्नू पौधा में फनल

तुड़ाई पूर्व नींबू वर्गीय फलों का गिरना : कारण एवं प्रबंधन

नताशा गुरुंग[1], सुजीत सरकार[1], बिजॉय सिंह[1], चंदन कुमार[1], साजिद अली[2], नेशन चामलिंग[3] एवं कृति शर्मा[4]

[1]भा.कृ.अनु.प.-भा.कृ.अनु.सं. क्षेत्रीय केंद्र कलिम्पोंग, पश्चिम बंगाल-734301
[2]क्षेत्रीय अनुसंधान केंद्र (पहाड़ी क्षेत्र), यूबीकेवी कलिम्पोंग-734301
[3]कृषि विभाग, नाम्ची, दक्षिण सिक्किम-737126
[4]भा.कृ.अनु.प.-भा.कृ.अनु.सं., हिंदी अनुभाग, नई दिल्ली-110012

भारत में नींबू वर्गीय फल (मौसमी, संतरा, ग्रेप फ्रूट, लेमन कागजी नींबू आदि) केला और आम के बाद भारत में तीसरी सबसे महत्वपूर्ण फसल है। नींबू-वर्गीय फलों में संतरा भारत में सर्वाधिक (40%) उगाया जाने वाला फल है। पश्चिम बंगाल के दार्जिलिंग और कालिम्पोंग पहाड़ियों में संतरा की खेती प्राचीनकाल से की जा रही है। यह सिक्किम और दार्जिलिंग का स्थानीय फल है तथा पूरे देश में बहुत लोकप्रिय है। सिक्किम की तीस्ता और रगित नदियों तथा उनकी सहायक नदियों की घाटियां और पश्चिम बंगाल के निकटवर्ती दार्जिलिंग जिले, संतरा की खेती के लिए एक आदर्श हिमालयी जलवायु प्रदान करते हैं। संतरे में फरवरी में प्रचुरता से फूल खिलते हैं लेकिन उनसे बने कुछ ही फल परिपक्वता तक पहुंचते हैं। अधिकांश व्यावसायिक रूप से महत्वपूर्ण नींबू वर्गीय फलों में प्रचुर मात्रा में फलते हैं। एक परिपक्व पेड़ पर 1,00,000-2,00,000 तक फूल आते हैं लेकिन इनमें से 1-2% फूल तुड़ाई योग्य फल पैदा करते हैं। किन्नू में, कम से कम 1 प्रतिशत फूल परिपक्व फलों में बदल पाते हैं। पर्याप्त मात्रा में फूल आने और प्रारंभिक फल लगने के बावजूद, अत्यधिक फल गिरने से उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, तथा दुनिया भर के कई संतरा उत्पादक देशों में यह एक गंभीर समस्या है। सभी फल एक ही समय में नहीं गिरते, बल्कि अलग-अलग समय पर गिरते हैं, जिन्हें लहरें भी कहा जाता है। संतरा में फल गिरावट कुछ अलग-अलग लहरों में होती है। फूल खिलने के बाद गिरना, गर्मी या जून में गिरना, बरसात के मौसम में गिरना, तुड़ाई से पहले फल गिरना आदि। इस लेख में, फसल कटाई पूर्व फलों के गिरने पर चर्चा की जा रही है, क्योंकि तुड़ाई पूर्व फलों का गिरना आर्थिक दृष्टिकोण से अत्यंत महत्वपूर्ण है। क्योंकि इस गिरावट में लगभग पूरी तरह से विकसित हुए फल गिर जाते हैं, जिससे उत्पादक को भारी नुकसान होता है। तुड़ाई पूर्व फल गिरने के पीछे कई जैविक और अजैविक कारक होते हैं जो निम्न हैं-

अजैविक कारक

कटाई से पहले फल गिरने के लिए कई अजैविक कारक जुड़े होते हैं जैसे पौधे की उम्र और स्वास्थ्य, अनुचित बाग प्रबंधन, जल संकट, फलने की अवधि के दौरान पोषण की कमी आदि। जब पौधा तनाव में होता है तो एथिलीन गैस का उत्पादन शुरू हो जाता है, जो फल गिरने का कारण बनता है। इसलिए पेड़ के उच्चतम स्वास्थ्य को बनाए रखना और तनावपूर्ण स्थितियों को रोकना आवश्यक है।

बगीचे की आयु और स्वास्थ्य

नींबू वर्गीय फलों के बागों की व्यावसायिक आयु लगभग 20 वर्ष होती है। पुराने पौधों में फल लगते तो हैं, लेकिन मिट्टी से पोषक तत्वों का फल तक स्थानांतरण न हो पाने के कारण फल गिर जाते हैं। फल देने वाले वृक्षों का स्वस्थ होना और कीट व बीमारियों से मुक्त होना आवश्यक है।

अनुचित बाग प्रबंधन

उचित बाग प्रबंधन तुड़ाई पूर्व फलों के गिरने की मुख्य वजह है। संतरा के पेड़ बिना उचित दूरी के उगाए जाते हैं। एक पेड़ की शाखाएं दूसरे पेड़ की शाखाओं से मिल जाती हैं, जिससे पोषक तत्वों और प्रकाश की कमी हो जाती है। पोषक तत्वों की कमी होने के कारण अधिकांश फल गिर जाते हैं।

जल प्रबंधन

पश्चिम बंगाल की पहाड़ियों में संतरा को वर्षा आधारित फसल के रूप में उगाया जाता है। सूखे की अवधि अगस्त से शुरू होकर फसल तुड़ाई तक जारी रहती है। फल बनने की अवधि के दौरान जल तनाव एब्सिसिक एसिड के संश्लेषण को बढ़ा देता है, जो फल में एक एब्सिशन परत (Abscission layer) का निर्माण करता है, जिससे फल गिर जाते हैं।

पोषक तत्वों की कमी

नींबू वर्गीय फल वृक्षों में प्रयाप्त एवं संतुलित पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। सूक्ष्म और वृहत पोषक तत्वों की उचित मात्रा देने से पर्याप्त पत्तियाँ विकसित होती हैं जो फल को विकसित करने में सहायता करती हैं। वृद्धि नियामकों एवं पोषक तत्वों के प्रयोग से फल की गुणवत्ता, वजन में सुधार और फल गिरने को कम करने में सहायता मिलती है।

जैविक कारक

अजैविक कारकों के अलावा, फलों का गिरना रोगों (रोगजन्य) और कीट-पतंगों (कीट-परागीय) के कारण भी होता है।

रोगजनित फल गिरना

नींबू वर्गीय फलों पर फूल से लेकर फल तुड़ाई की अवस्था तक कई रोगजनक आक्रमण करते हैं, जो तुड़ाई पश्चात् भी फलों को प्रभावित करते हैं। हुआंगलोंगबिंग (ग्रीनिंग) और साइट्रस कैंकर के प्रकोप से समय से पहले फल गिरने लगते हैं। तने के सिरे की सड़न (SER) के रोगजनक कवक जैसे लैसियोडिप्लोडिया थियोब्रोमे (*Lasiodiplodia theobromae*), कोलेटोट्रीकम ग्लोस्पोरियोडेस (Colletotrichum gloesporiodes) और कुछ अल्टरनेरिया स्पिसीज (*Alternaria species*) फल पकने से पहले परिपक्व फलों के गिरने का कारण बनते हैं। रोगजनित फल गिरना अगस्त से शुरू होकर तुड़ाई होने तक गिरते रहते हैं। सितंबर से अक्टूबर के महीने में गिरावट सबसे हानिकारक होती है क्योंकि फल परिपक्वता के निकट होते हैं, और पहले ही पेड़ से पोषण प्राप्त कर चुके होते हैं। ग्रीनिंग सहिष्णु पेड़ों की तुलना में ग्रीनिंग-संक्रमित पेड़ों में फल अधिक गिरते है। इस संक्रमण के कारण ऑक्सीडेटिव (Oxidative) तनाव उत्पन्न होता है, जिसके कारण कोशिका भित्ति में परिवर्तन एवं कोशिका पृथक्करण के फलस्वरूप फल गिरने की समस्या उत्पन्न होती है।

प्रबंधन

1. मृत, रोगग्रस्त शाखाओं या टहनियों को काट देना चाहिए। छटाई के लिए सबसे अच्छा समय फलों की तुड़ाई के बाद होता है, ताकि इनोकुलम (Inoculum) के प्राथमिक स्रोत को कम किया जा सके।

2. ममीकृत (Mummified) और गिरे हुए फलों को इकट्ठा करके उन्हें गड्डे में गाड़कर नष्ट कर देना चाहिए गिरे हुए फलों को बाग से हटा देना चाहिए, क्योंकि वे रोगों के श्रोत के रूप में काम करते हैं।

3. छंटाई के बाद, मार्च, जुलाई और सितंबर में पेड़ों पर बोर्डो मिश्रण (Bordeux mixture) (2:2:250) या or कॉपर ओक्सीक्लोराइड (copper oxychloride) 50 डब्लयूपी (3 ग्राम/लीटर) का छिड़काव करना उचित है।

4. जुलाई के पहले सप्ताह से एक महीने के अंतराल पर कार्बेन्डाजिम 50 डब्लयूपी (Carbendazim 50 WP) (0.1%) का छिड़काव करने पर नागपुर संतरा (अम्बिया बहार) में न्यूनतम फल गिरावट देखी गई।

कीट-प्रभावित फलों का गिरना

पश्चिम बंगाल के कलिम्पोंग और दार्जिलिंग जिलों में, फल मक्खियां विशेष कीट हैं, जो कटाई से पहले फल गिरने का कारण बनती हैं। अधिकतर गिरे हुए फल कीट प्रभावित होते हैं। प्रति फल में लार्वा की संख्या 7-15 होती है, जो काफी ज़्यादा हैं। पश्चिम बंगाल के तकदाह में एक अप्रबंधित संतरा के बागान में तुड़ाई के मौसम में कीटों के आक्रमण का प्रकोप 75.18% तक हो जाता है। फल मक्खी (*Bectrocera minax*) द्वारा संक्रमित होने वाले फलों में दार्जिलिंग संतरा, मीठी नांरगी और किन्नू मैंडरिन (Citrus Reticulata Blanco) प्रमुख रूप में शामिल हैं। रंगपुर लाइम (*Citrus limonia* Osbeck) को काटे गए और गिरे हुए फलों से फल मक्खी (*B. minax)* के साथ-साथ पेक्टिकस एसपी (डिप्टेरा : स्ट्रेटियोमीडी) का

बायें: दार्जिलिंग संतरा में फल मक्खी के संक्रमण के बाद कवकी संक्रमण के कारण फलों का गिरना। दायें किसान संक्रमित फलों को नष्ट करता हुआ व स्वस्थ फलों को जैव कीटनाशकों से उपचारित करता हुआ।

संक्रमण पाया जाता है। यदि बगीचे में गिरे हुए फलों को छोड़ दिया जाए, तो उन पर कई प्रकार के फफूंद जनित रोग पनप जाते हैं। तुड़ाई से पहले के चरण में अधिकांश फलों में फल मक्खी के संक्रमण के कारण गिरते हैं, उसके बाद फ्यूजेरिअम एसपी (*Fusarium* sp) और कोलेट्रोट्राइकम एसपी (*Colletotrichum* sp) के संक्रमण से फल गिरते है। फलों के गिरने का कारण फल मक्खी की प्रजाति चीनी फल मक्खी (*Bectrocera minax*) है। ये चीनी साइट्रस मक्खियां चीन, भूटान, भारत (सिक्किम और पश्चिम बंगाल) और नेपाल में नींबू वर्गीय फलों में लगने वाला प्रमुख कीट है। पिछले 5-6 वर्षों में संतरे में फल मक्खी के संक्रमण के कारण फल गिरना एक गंभीर समस्या हो गई है, जिससे 50-70% तक नुकसान हो जाता है। अब तक, सिक्किम राज्य में फल गिरने के लिए फल मक्खी (*Bectrocera minax)* को प्रमुख कीट के रूप नहीं देखा जाता है। प्रमाण बताते हैं कि यह प्रजाति उच्च समशीतोष्ण दक्षिणी युन्नान-गुइझो पठार में उत्पन्न हुई, और चीन की जलमार्ग प्रणाली के माध्यम से फैल गई है। अपनी लंबी दूरी तक उड़ने की क्षमता के कारण, इस कीट ने चीन से भूटान, सिक्किम, भारत होते हुए नेपाल के पूर्वी मध्य पर्वतीय क्षेत्र के संतरा बागानों तक अपनी पहुंच बनाई है। वयस्क मादा अपरिपक्व फलों पर अंडे देती है और सुई जैसी अंडनिक्षेपक की मदद से फलों की सतह पर अंडे जमा करती है। अंडे फूटने पर मैगॉट्स (Maggots) बन जाते हैं, और फलों के गूदे को खाना शुरू कर देते हैं। इसके अलावा, छेद के कारण कवकी और जीवाण्विक संक्रमण होता है, जिसके परिणामस्वरूप फल गिर जाते हैं। मैगॉट्स (Maggots) विकसित हो रहे फलों के अंदर जाकर खाते हैं जिससे फल तेजी से सड़ते हैं, जो बाद में खाने लायक नहीं रहते और अंततः समय से पहले गिर जाते हैं।

प्रबंधन

1. अच्छे बाग प्रबंधन के तरीके अपनाना, साफ-सफाई रखना, सड़े हुए फलों को हटाना आदि।
2. गिरे हुए फलों का सामुदायिक संग्रहण करना चाहिए क्योंकि ये मक्खियां व्यापक क्षेत्र में उड़ सकती हैं, और मिट्टी से फल मक्खियों के निकलने से रोकने के लिए फलों को गहरे गड्ढे (60 सेमी से अधिक गहराई) में दबाना चाहिए।
3. बाग के चारों ओर मिट्टी को खुरच कर प्यूपा को बाहर निकालना और उन्हें नष्ट करना।
4. इस कीट को नियंत्रित करने के लिए एक क्षेत्र-व्यापी नियंत्रण कार्यक्रम ही एकमात्र विकल्प है।
5. प्रोटीन और जैव कीटनाशक के साथ पूरक चयनात्मक चारा का प्रयोग प्रभावी हो सकता है।
6. कीट के प्रकोप से पहले फलों पर बैग चड़ायें।

विविधा...

बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग - परिचय एवं उपलब्धियां

ज्ञान प्रकाश मिश्रा, सुदीप्ता बासु, मोनिका जोशी, संदीप कुमार लाल, संगीता यादव, एवं अतुल कुमार

बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110 012

भारतीय कृषि अनुसन्धान संस्थान ने सर्वप्रथम कृषि के विकास में बीज के महत्व को पहचाना, जिसके फलस्वरूप संस्थान के तत्कालीन वनस्पति विज्ञान संभाग में सन् 1961 में बीज परीक्षण प्रयोगशाला की स्थापना हुई। कुछ ही वर्षों पश्चात सन् 1968 में इस बीज परीक्षण प्रयोगशाला को एक संपूर्ण संभाग "बीज प्राद्यौगिकी में परिवर्तित कर दिया गया", जिसका उद्देश्य बीज-विज्ञान के क्षेत्र में अनुसंधान, बीज गुणवत्ता मूल्यांकन, अनुरक्षा प्रजनन, बीज गुणवत्ता निर्धारण प्रक्रिया का विकास तथा मानव संसाधन का विकास रखा गया। हिमाचल प्रदेश की कुल्लू घाटी में स्थित संस्थान के क्षेत्रीय केंद्र, कटराईं में फूलगोभी और पत्तागोभी के बीजोंत्पादन तकनीक का विकास पचास के दशक में हुआ था। जनक बीजों की उपलब्धता तथा बीजोंत्पादन की तकनीक में प्रचार व प्रसार के कारण हिमाचल प्रदेश में शीतोष्ण क्षेत्र की सब्जियों के बीजोंत्पादन में अप्रत्याशित वृद्धि हुई और एक बीज-उद्योग की स्थापना हो गई। सत्तर के दशक में संस्थान ने करनाल स्थित अपने क्षेत्रीय केंद्र पर विभिन्न फसलों के जनक-बीजों के उत्पादन का कार्य भी बहुत बड़े पैमाने पर प्रारंभ किया।

1. अनुसंधान

(i) उत्तम गुणवत्ता वाले बीजों से फसलोत्पादन में तुलनात्मक लाभ: कुल कृषित भूमि के लगभग 90 प्रतिशत क्षेत्र में धान, गेहूं, दलहनी फसलें तथा मूंगफली आदि जैसी स्वपरागित फसलें ही लगाई जाती हैं। इन फसलों में साधारणतः किसान अपनी पिछले वर्ष की फसल से बचाकर रखे हुए बीजों का ही प्रयोग करते हैं। किसानों द्वारा इस प्रकार बचाकर रखे गए बीज अनुवांशिक रूप से शुद्ध नहीं होते तथा उनकी अंकुरण क्षमता भी कम होती है, साथ ही इन बीजों से प्राप्त फसलों में रोगों का प्रादुर्भाव भी अधिक होता है। एक अध्ययन के आधार पर यह पाया गया है कि उत्तम गुणवत्ता वाले बीजों या प्रमाणीकृत बीजों के उपयोग से, किसानों द्वारा बचाए गए बीजों से उत्पादित फसल की अपेक्षा 10-15 प्रतिशत की बढ़त प्राप्त की जा सकती है। साधारणतः स्वपरागित फसलों के बीजों का 3 वर्ष अथवा उसके अधिक समय के अंदर पर्याप्त गुणह्रास हो जाता है। अतः किसानों को प्रति 3-5 वर्ष में इन फसलों के प्रमाणीकृत बीजों को बदल देना चाहिए।

(ii) बीजोंत्पादन के लिए पृथक्करण दूरी: भारतीय न्यूनतम बीज प्रमाणीकरण मानक साठ के दशक में निर्धारित किए गए थे। इनमें से अधिकांश मानक अमेरिका तथा अन्य पश्चिमी देशों से लिए गए थे। अतः इन पर अनुसंधान की आवश्यकता थी कि भारत की विभिन फसलों के लिए ये मानक कितने उप्युक्त हैं। इन विषयों पर अध्ययन से पाया गया की बाजरा के प्रमाणीकृत संकर बीजोंत्पादन के लिए 200 मीटर की पृथक्करण दूरी पर्याप्त है, परंतु आधार बीजोंत्पादन में वर्तमान पृथक्करण दूरी 1000 मीटर को घटाकर 500 मीटर किया जा सकता है, यदि खेत की सीमाओं पर नर जनक की कुछ पंक्तियां लगा दी जाए। इसी प्रकार गेहूं, धान,

अरहर, मक्का और सरसों की भी पृथक्करण दूरियां निर्धारित की गई।

गेहूं में श्लथ कन्ड एक बीज-जनित रोग है, अतः बीजोंत्पादन के लिए दो खेतों के बीच की पृथक्करण दूरी 140 मीटर निर्धारित की गई। संभवतः यह नियम इस तथ्य पर आधारित है कि अमेरिका के एक वैज्ञानिक आर्ट (1940) के अनुसार श्लथ कन्ड के क्लेमाईडोस्पोर 150 मीटर की दूरी तक जा सकते है, परंतु इस संभाग में किए गए प्रयोगों के आधार पर यह सिद्ध किया जा चुका है कि भारतीय जलवायु में श्लथ कन्ड के क्लेमाईडोस्पोर केवल 95 मीटर तक ही जा सकते हैं। यह निष्कर्ष, दिल्ली, हिसार, पंतनगर, एवं पूसा (बिहार) में तीन वर्ष तक किए गए प्रयोगों पर आधारित है। अतः श्लथ कन्ड के लिए पृथक्करण दूरी को 150 मीटर, से घटा कर 100 मीटर करने की सिफारिश बीज विज्ञान एवं प्रोद्यौगिकी संभाग ने केंद्रीय बीज बोर्ड को दिया है। इतना ही नहीं, चूंकि भारत जैसे देश में जहां किसानों के खेत बहुत छोटे होते है, प्रायः 150 मीटर ही पृथक्करण दूरी मिलना भी कठिन हो जाता है।

(iii) संकर बीज उत्पादन पद्धति: संकर बीजोंत्पादन पद्धति का प्रयोग बीज-उत्पादन संगठन तथा बीज प्रमाणीकरण एजेन्सी, उत्पादकता एवं मॉनीटिरिंग में संशोधन कर रही है। प्रोटीन तथा आइसोजाईम चिन्हकों पर आधारित प्रयोगशाला-पद्धतियों का मानकीकरण हो गया है जिसकी सहायता से कपास, सूरजमुखी, धान तथा अन्य फसलों की विभिन्न किस्मों का अभिनिर्धारण किया जा सकता है। डी.एन.ए. फिंगर प्रिन्टिंग तकनीक का प्रयोग भी इस दिशा में अत्यंत उपयोगी साधन है। यद्यपि ग्रो-आउट परीक्षण की तुलना में यह पद्धति बहुत महंगी है और इसके लिए प्रशिक्षित व्यक्तियों की भी आवश्यकता होती है परंतु यह परीक्षण कम समय में किया जा सकता है। अतः जहां शीघ्र निर्णय ना अनिवार्य हो वहां यह परीक्षण उत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगा।

(a) गाइनोसियस खीरे में संकर बीज उत्पादन : पूसा गाइनोसियस खीरा हाइब्रिड-18 के बीज उत्पादन तकनीक को संरक्षित परिस्थितियों में विकसित एवं मानकीकृत किया गया है। ख़रीफ़ ऋतु में पौधों की वृद्धि, फूल और बीज उपज अधिक पाई गई और वसंत-गर्मी ऋतु में बीज की गुणवत्ता बेहतर पाई गई। संकर बीज उत्पादन के लिए 3:1 (मादा:नर) का पंक्ति अनुपात बेहतर पाया गया। पैतृक जनकों में क्रमशः दोपहर 12 बजे और सुबह 10 बजे तक उच्च पराग व्यवहार्यता और वर्तिकाग्र ग्रहणशीलता देखी गई जो संकर बीज उत्पादन के लिए उत्तम है। सुबह 10 बजे तक परपरागण अधिक फल और बीज उपज के लिए उचित है, इस समय के बाद परागण करने पर फल बनने, फल और बीज की उपज में काफी गिरावट पाई गई। गाइनोसियस लाइन के रखरखाव के लिए सिल्वर थायोसल्फेट @ 0.03M का तीन बार पौधों पर छिड़काव करें। उच्च बीज उपज और गुणवत्ता के लिए खरीफ़ और वसंत-ग्रीष्म ऋतु में प्रति बेल 3 और 4 फल तक रखे जा सकते हैं। हाइब्रिड बीज को परिवेशीय परिस्थितियों में एक वर्ष तक सुरक्षित रूप से संग्रहीत किया जा सकता है। 100मी^{2} जालघर में 1 से 1.5 कि.ग्रा. संकर बीज उत्पादन किया जा सकता है।

जालधर में संकर बीज उत्पादन एवं संकर फल

(b) फूलगोभी में संकर बीज उत्पादन: मध्य परिपक्वता समूह के सीएमएस सिस्टम पर आधारित संकर किस्म, पूसा फूलगोभी हाइब्रिड 3 के संकर बीज उत्पादन की प्रौद्योगिकी को संभाग में विकसित एवं मानकीकृत किया गया है। फूलगोभी परपरागित फसल है इसलिए मधुमक्खी परागण का बीज उत्पादन पर महत्वपूर्ण प्रभाव है। इस मानकीकृत पद्धति से 75-100 किग्रा./ है। संकर बीज उत्पादन किया जा सकता है। उच्च बीज उपज के लिए 3:1 (मादा: नर) का रोपण अनुपात बेहतर पाया गया। पूसा फूलगोभी हाइब्रिड-3 के जनकों में 8-10 दिनों का फूल आने में गैर-समकालिकता पाई गई (नर जनक में 8-10 दिनों की देरी से पुष्पन होता है)। इस अंतर को मिटाने के लिए नर पैतृक जनक

जालधर में संकर बीज उत्पादन

फूलगोभी हाइब्रिड 3

पौधों पर GA_3 @ 100 पीपीएम और IAA @ 50 पीपीएम का 7 दिनों के अंतराल पर तीन बार छिड़काव करें। सीएमएस पैतृकों में फली और बीज की उपज में भी वृद्धि पाई गई।

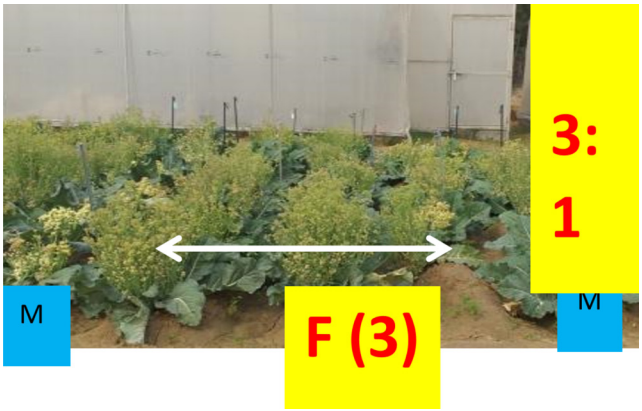

फूलगोभी में संकर बीज उत्पादन

(c) तोरई में संकर बीज उत्पादन: तोरई की संकर प्रजाति, पूसा श्रेष्ठा के संकर बीज उत्पादन तकनीक को विकसित एवं मानकीकृत किया गया है। परिणामों के अनुसार ख़रीफ़ में उच्च वनस्पति विकास, फल और बीज की उपज देखी गई और वसंत-ग्रीष्म ऋतु में बेहतर बीज गुणवत्ता प्राप्त हुई। दोनों मौसमों में अधिक फल लगने और बीज की पैदावार प्राप्त करने के लिए परागण का सबसे उपयुक्त समय सुबह 6 से 10 बजे के बीच पाया गया। बीज भंडारण अध्ययनों के अनुसार परिवेशी भंडारण स्थितियों के अंतर्गत तोरई के बीजों की 6 महीने तक अच्छी भंडारण क्षमता होती है। पादप विकास नियामकों ने वनस्पति विकास (जैसे कि बेल की लंबाई, शाखाओं की संख्या), लिंग अभिव्यक्ति (निचले नोड्स पर फूलों का समावेश, अधिक फूल, उच्च लिंग अनुपात), फल लक्षण (प्रति पौधे फलों की संख्या, फल का वजन, फल की लंबाई, फल चौड़ाई), और बीज उपज (बीजों की संख्या और वजन) और

बेल पर संकर फल

गुणवत्ता (अंकुरण और बीज ओज) ख़रीफ़ ऋतु में बेहतर पाई गई। पादप विकास नियामकों में, वानस्पतिक वृद्धि, फूलों के लिंग अनुपात, फल और बीज उत्पादन, में सुधार के लिए 150 पीपीएम की दर से GA_3 का प्रयोग सबसे अच्छा पाया गया, इसके बाद 150 पीपीएम की दर से एनएए और 200 पीपीएम की दर से एथ्रेल का उपयोग अच्छा पाया गया। 2-3 पत्ती अवस्था + 4-5 पत्ती अवस्था और 2-3 पत्ती अवस्था + 4-5 पत्ती अवस्था + 6-7 पत्ती अवस्था पर पादप विकास नियामकों का प्रयोग वानस्पतिक, पुष्पन लक्षण और बीज उपज में सुधार के लिए प्रभावी है। दिल्ली की परिस्थितियों में पूसा श्रेष्ठा के संकर बीज उत्पादन के लिए 4:1 (मादा : नर) का रोपण अनुपात बेहतर पाया गया।

(d) करेले में संकर बीज उत्पादन: करेला कद्दूवर्गीय फसलों में एक प्रमुख फसल है। उत्तर भारत में संकर बीज उत्पादन ख़रीफ़ एवं बसंत-ग्रीष्म ऋतु में संभव है। खुले खेत में बीज उत्पादन से कीड़ों के प्रभाव से फल एवं बीज उत्पादन पर प्रतिकूल असर पड़ता है। कीट प्रतिरोधी जालघर में संकर बीज उत्पादन को विकसित एवं मानकीकृत किया गया है। ख़रीफ़ मौसम में करेले के संकर बीज उत्पादन को बेहतर पाया गया। बसंत ग्रीष्म ऋतु में बीज गुणवत्ता अधिक पाई गई। रोपण अनुपात 3:1 (मादा: नर) संकर बीज उत्पादन के लिए बेहतर पाई गई। अधिक बीज उत्पादन के लिए परपरागण 7 से 10 बजे तक उपयुक्त पाया गया। 14-16 फल प्रति बेल संकर बीज उत्पादन के लिए पर्याप्त पाए गए। औसतन पूसा हाइब्रिड, 1 एवं 2 में 2.5 kg /100 sqm संकर बीज उत्पादन कीट अवरोधी जालघर से प्राप्त किया जा सकता है।

बेल पर संकर फल

(e) संकर धान के बीजोंत्पादन की प्रोद्यौगिकी: भारत में संकर धान के लोकप्रिय न होने का मुख्य कारण यह था की संकर धान बीज का उत्पादन केवल 1.5 टन प्रति हैक्टेयर था। अतः इस संभाग में संकर धान बीजोंत्पादन की प्रोद्यौगिकी में सुधार कर उसका मानकीकरण किया गया। अब यह संभव है कि प्रति

हैक्टेयर 2.5 से 3.0 टन संकर धान बीज की उपज प्राप्त की जा सकती है। जो की चीन के उत्पादन के बराबर है। मादा पौधों में 5.0 प्रतिशत बालियां आने पर 90 ग्राम जिबरेलिक एसिड-3 तथा 1.0 प्रतिशत बोरिक अम्ल प्रति लीटर के घोल का छिड़काव ही इस सफलता का मूल मन्त्र है।

(iv) संरक्षित परिस्थितियों में पार्थेनोकार्पिक गायनोसियस खीरे में बीज उत्पादन तकनीक

खीरा (कुसुमिस सैटाइवस एल.) भारत की पहाड़ियों और मैदानी इलाकों में उगाई जाने वाली एक अति-लोकप्रिय और महत्वपूर्ण सब्जी है। इनकी पार्थेनोकार्पिक गाइनोसियस किस्मों ने ग्रीनहाउस की खेती में क्रांति ला दी है। इसका मुख्य कारण है, इन प्रजातियों की उच्च उपज क्षमता और इनका संरक्षित परिस्थितियों में गैर-मौसमी खेती के लिए उपयुक्तता। परंतु इनकी बीज उत्पादन तकनीक को अनुकूलित करने की आवश्यकता थी, जिससे ज्यादा मात्रा में उत्तम बीज की उपज प्राप्त हो सके। वर्तमान अध्ययन को ग्रीनहाउस एवं कीट रोधी नेट हाउस वाली परिस्थितियों में खीरे की प्रजाति पूसा पार्थेनोकार्पिक खीरा-6 के गुणवत्तापूर्ण बीज उत्पादन के अनुकूलन के लिए वर्ष 2019 से 2022 के मध्य बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग, नई दिल्ली द्वारा किया गया। रोपण समय के मानकीकरण के लिए बुआई ख़रीफ़ और वसंत-ग्रीष्म ऋतु के दौरान की गई। परागण के समय और आवृत्ति को अनुकूलित करने के लिए फूलों को एक घंटे के अंतराल पर एक और दो बार परागित किया गया। इसके अलावा, बीज की गुणवत्ता पर फलों की संख्या के प्रभाव का अध्ययन करने के लिए प्रत्येक बुआई से पांच पौधों का चयन किया गया, जिसमें 2, 3 और 4 फल प्रति बेल छोड़े गए। गायनोसियस खीरे में गुणवत्तापूर्ण बीज उत्पादन के लिए विभिन्न मानकीकरण इस प्रकार हैं। **इष्टतम रोपण तिथियां: ख़रीफ़** (अगस्त का तीसरा सप्ताह; 16-22 अगस्त); **वसंत-ग्रीष्म** (जनवरी का अंतिम सप्ताह; 25-31 जनवरी); **परागण का समय**: **ख़रीफ़** (प्रातः 7:00-8:00 बजे); **वसंत-ग्रीष्म** (प्रातः 8:00-9:00 बजे) तथा अधिक बीज उपज हेतु एक घंटे के अंतराल पर फसल का दोहरा परागण। साथ ही बीज की उपज और गुणवत्ता बढ़ाने हेतु प्रति बेल तीन फल रखने चाहिए। इन मानकीकरण द्वारा पार्थेनोकार्पिक गायनोसियस खीरे के लगभग 1.5 किग्रा. प्रति 100 वर्ग मी० उच्च गुणवत्ता वाले बीज प्राप्त होंगे तथा किसानों को 50 से 80 हज़ार रूपये प्रति वर्ग मी० आमदनी हो सकेगी।

(v) मधुमक्खी द्वारा परागण से बीजोंत्पादन में आवर्धन: सूरजमुखी के संकर बीज उत्पादन में इतालवी मक्खी (एपिस मेलीफेरा) का विशेष योगदान है। उत्तरी भारत में एपी.एस.एच.-11, बी.एस.एच.-1, के.बी.एस.एच.-1, तथा एल.एस.एच.-1, के जनक बीजों की दिसंबर-जनवरी में बुआई कर दी जाए तो संकर बीज का उत्पादन अधिक होता है, और इसका कारण यह है कि इस समय एपिस मेलिफ़ेरा अधिक सक्रिय रहती है। इसी कारण हाथ से पूरक परागण की आवश्यकता नहीं रहती, जिससे सकल बीजोंत्पादन की लागत में कमी आ जाती है।

(vi) बीज भंडारण: अधिकांश बीजों का भंडारण, चाहे वह सार्वजानिक संस्थान हो या निजी क्षेत्र की बीज कंपनी हो या किसान के पास हो परिवेश दशाओं में ही होता है। जिसके कारण बीजों की ओज एवं जीवन-क्षमता में ह्रास तीव्रता से होता है। विभिन फसलों के बीजों की ओज एवं जीवन-क्षमता में अंतरजाति भिन्नता पाई जाती है जो कि भंडारण की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसी कारण दिल्ली की परिवेश दशाओं में विभिन्न जाति के बीजों का छः महीने से तीन साल तक भंडारण किया जा सकता

अध्ययन के दौरान खीरे के बेलों पर 2, 3 एवं 4 फल छोड़े गए थे

है। भारतवर्ष में गत-तीस वर्षों के तापक्रम एवं आपेक्षित आर्द्रता के आकड़ों का विशलेषण कर संपूर्ण देश को तीन श्रेणियों में विभक्त किया गया है। कुछ भाग भंडारण की दृष्टि से बहुत अच्छे हैं तथा कुछ भाग बहुत ही खराब है। इसके अतिरिक्त, कुछ मध्यम क्षेणी के क्षेत्र हैं। जिन स्थानों की औसत आपेक्षिक आर्दता तीन महीने से अधिक 70 प्रतिशत से अधिक नहीं रहती है तथा तापक्रम चार महीने 30° सेल्सियस से अधिक नहीं रहता है, ऐसे क्षेत्र बीज भंडारण के लिए उपयुक्त होते हैं। इन अवस्थाओं में भंडारित अधिकांश फसलों के बीजों का अंकुरण एक से चार वर्षों तक संतोषजनक रहता है। सोयाबीन तथा प्याज जैसी फसलों के बीजों के भंडारण विशेष सावधानी से किया जाना चाहिए। बीज उत्पादक संगठनों द्वारा बीज भंडारण सुविधाओं को योजनाबद्ध करके उनका निर्माण करने में इस प्रकार की संस्तुति का विशेष महत्व है।

एक विश्वसनीय मांग-पूर्वानुमान-प्रणाली के अभाव तथा बीजोंत्पादन में उतार-चढ़ाव आधिक्य एवं अभाव की स्थिति प्रायः सब्जियों के बीजों में पाई जाती है। अधिक मूल्य वाली सब्जियों के बीजों का भंडारण अधिक समय तक नहीं किया जा सकता है क्योंकि उनकी अंकुरण क्षमता प्रमाणीकरण मानक से शीघ्र ही कम हो जाती है। यदि सुखाकर इनकी नमी 6.0 प्रतिशत से कम की दी जाए और फिर 700 गेज के पॉलीथीन या पॉलीलाइंड एल्युमिनियन फॉयल जैसे नमीरोधक पैकेटों में दिल्ली की परिवेश दशाओं में भी रखा जाए तो इनका भंडारण 2-3 वर्षों तक किया जा सकता है।

यदि हम बीजों में काल-प्रभावन (एजिग) की क्रिया विधि का अध्ययन करें तो हमें ज्ञात होगा कि काल-प्रभावन के साथ-साथ जैव कोष की झिल्लियों की पारगम्यता भी बढ़ती जाती है। जिसके फलस्वरूप घुलन शर्करा एवं अन्य एलेक्ट्रोलाइट्स का रिसाव भी बढ़ जाता है। तिलहनी फसलों के बीजों के गुणवत्ताह्यास प्रक्रिया में लिपिड पराक्सीकरण की निर्णायक भूमिका है। लिपिड पराक्सीकरण प्रक्रिया चाहे वह एन्जाइम प्रेरित हो या बिना एन्जाइम के बीजों के पानी अवशोषित करने के गुण तथा मुक्त मूलक शमन प्रक्रिया द्वारा ही नियंत्रित होती है। प्राकृतिक या त्वरित कालप्रभावन से उत्पन्न आणविक परिवर्तन की प्रकृति एवं विस्तार में भिन्नता होती है। मुक्त-मूलकों के शमन द्वारा बीजों की जीवनक्षमता एवं काल को बढ़ाया जा सकता है।

(vii) बीज-प्रसुप्ति: बीज परीक्षण में बीज-प्रसुप्ति का विशेष महत्व है। बीज-प्रसुप्ति के प्रवर्तन, प्रबलता और अवधि का अध्ययन करने से यह ज्ञात होता है कि दलहनी फसलों के बीजों में विकास एवं परिपक्वन के दौरान जैसे-जैसे बीजों में नमी की मात्रा कम होती जाती है वैसे-वैसे बीजों में बीज-प्रसुप्ति का प्रवर्तन एवं प्रबलता बढ़ती जाती है। खेसारी दाल के बीजों में अंकुरण के समय 30^0 सेल्सियस का तापक्रम बीज प्रसुप्ति को प्रेरित करता है। बीज-प्रसुप्ति को विभिन्न रसायनों एवं उष्मीय उपचारों द्वारा समाप्त किया जा सकता है। भारतीय धान की विभिन्न किस्मों में एक सकारात्मक सह-संबंध पाया जाता है। यद्यपि इसका बीजों के आयुकाल पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इस्टरेज एवं पराक्सीडेज नामक एन्जाइम के अधिक सक्रिय होने से बीजों में बीज प्रसुप्ति की प्रबलता बढ़ जाती है। बीजों को बीज-प्रसुप्ति से मुक्त करने के लिए शुष्क ऊष्मा उपचार अत्यंत प्रभावशाली होता है।

(viii) बीजों की गुणवत्ता निर्धारण में एक्स-रे का उपयोग: बीजों की गुणवत्ता निर्धारण में एक्स-रे विकिरण चित्रण की बहुत अधिक संभावनाएं है, यदि उसका उपयोग पारस्परिक प्रयोगशाला परीक्षणों के साथ किया जाए। एक्स-रे विकिरण चित्रण का प्रयोग कर इस संभाग ने सर्वप्रथम बीजों के अंदर कीटों की उपस्थिति, यांत्रिक क्षति एवं रिक्त बीजों की पहचान की। इसी विधि द्वारा धान के बीजों के भ्रूणपोष मे उत्पन्न दरार (सन् चेक) का पता भी लगाया जा सकता है। इस विधि का प्रयोग धान की विभिन्न किस्मों के अभिलक्षण एवं अभिनिर्धारण में भी किया जा सकता है।

(ix) मसूर में लवणता सहनशीलता में सुधार के लिए प्राइमिंग तकनीक

मसूर एक महत्वपूर्ण दाल वाली फलीदार फसल है जो ज्यादातर कम उपजाऊ तथा लवणीय मृदा पर उगाई जाती है, जिससे इसकी उत्पादकता में कमी आती है। सामान्य, हाइड्रोप्राइम्ड (16 घंटे), ह्यूमिक एसिड प्राइम्ड (100, 200, 400, 600, 800, 1000 पीपीएम और 2, 4, 6, 8, 10, 12, 14, 16, 18 घंटे पर) और सिलिसिक एसिड प्राइम्ड (1, 2, 3, 4, 5 मिली मोलर और 2, 4, 6, 8, 10, 12, 14, 16, 18 घंटे पर) और इनके संयोजनो को मसूर के बीजों पर उनकी सर्वोत्तम अवधि और उपचार संयोजन के चयन हेतु विभिन्न प्रयोग किए गए। बीज की गुणवत्ता में सुधार के लिए ह्यूमिक एसिड और सिलिसिक एसिड (@100

पीपीएम + 1.0 मिली मोलर 16 घंटे) का संयोजन सर्वोत्तम पाया गया। सहिष्णु जीनोटाइप आईपीएल-316, ने अंकुरण प्रतिशत 96%, बीज शक्ति सूचकांक-I 3631 और बीज शक्ति सूचकांक-II 6.41 प्रदर्शित किया। सिलिसिक और ह्यूमिक एसिड प्राइमिंग के संयोजन ने सामान्य परिस्थिति की तरह ही लवणीय तनाव में भी अंकुर उद्भव, बीज गुणवत्ता और जैव रासायनिक मापदंडों को बेहतर किया। अत: मसूर के बीजों की लवणीय सहनशीलता में सुधार के लिए इन्हें ह्यूमिक एसिड और सिलिसिक एसिड (@100 पीपीएम + 1 मिली मोलर 16 घंटे) के संयोजन से उपचारित किया जाए तत्पश्चात उन्हें सामान्य नमी वाली अवस्था तक वापस सुखाया जाए, इसके बाद इन बीजों की बुआई की जाए।

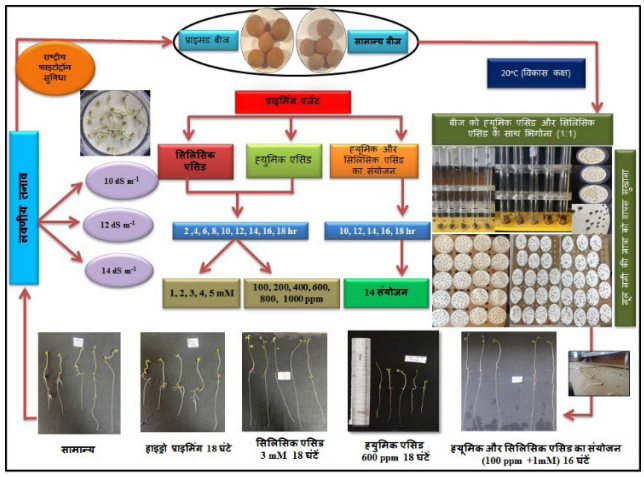

बीज प्राइमिंग की पद्धति

(x) पी.जी.पी.आर. जैव-सूत्रीकरण तकनीकी

लाभकारी पादप वृद्धि प्रवर्तक राइजोबैक्टीरिया के जैव-सूत्रीकरण जैसे, पासीपूसा-पीजीपीआर 1 (*स्यूडोमोनास प्यूटिडा*), पासीपूसा-पीजीपीआर 2 (*बैसिलस प्यूमिलस*) और पासीपूसा-पीजीपीआर 3 (*बैसिलस सबटिलिस*) का विकास संवर्धन और पौध-सुरक्षा दोनों गुणों के साथ प्रयोगशाला और प्रक्षेत्र दोनों परिस्थितियों में 3 वर्षो तक मूल्यांकन किया गया। गोभी, फूलगोभी, मिर्च, पत्तागोभी और टमाटर में जैविक खेती के लिए उपयुक्त प्रौद्योगिकी को बीज उपचार, अंकुर प्राइमिंग और मृदा अनुप्रयोग द्वारा प्रभावी ढंग से वितरित करके नर्सरी में एक समान अंकुर स्थापना, बीज-जनित रोग प्रबंधन और विपणन योग्य उपज को बढ़ाया जा सकता है।

उच्च सुप्तावस्था वाले मूंग के जीनोटाइप की पहचान: फली और बीज अंकुरण के आधार पर कटाई से पहले अंकुरण सहनशीलता के लिए 106 मूंग जीनोटाइप की जांच के पश्चात, टीएम 96-25 की पहचान की गई। टीएम 96-25 के बीजों में वर्षभर लगभग 60% कठोर बीजत्व होता है। यह बीज कठोरता मुख्यतः बीज आवरण चरण III (~26 डीएपी) तक पारगम्यता और तत्पश्चात लिग्निन जमाव के कारण पाई गई।

(xi) श्रेष्ठ भंडारण योग्य और उच्च ओज वाले गुणवत्तापूर्ण प्रोटीन मक्का (क्यूपीएम) अंत:प्रजातियों (इनब्रेड) की पहचान: गुणवत्तापूर्ण प्रोटीन मक्का (क्यूपीएम) बीज की अंतः प्रजातियों (इनब्रेड) में भंडारण क्षमता और ओज कम होती है। क्यूपीएम इनब्रेड (28) की स्क्रीनिंग के बाद, दो बेहतर भंडारण योग्य इनब्रेड, एमजीयू-क्यूपीएम-16 और एमजीयू-क्यूपीएम-20 की पहचान की गई। इनका 12 महीने के परिवेशीय (एम्बिएंट) भंडारण के बाद अंकुरण 90% से अधिक और 18 महीने के बाद 60% से अधिक पाया गया। सात दिनों की त्वरित जरण (एजिंग) के बाद 70% से अधिक सामान्य अंकुरों की पोध(सीडलिंग) के साथ, उनमें उच्च ओज भी होती है।

(xii) चांदी के नैनोकणों (सिल्वर नैनो पार्टिकल) के द्वारा बाजरा बीज प्राइमिंग से ओज को बढ़ाना: सिल्वर नैनोकणों या एजीएनपी प्राइमिंग (50 मिलीग्राम/लीटर) के उपयोग द्वारा अंकुरण और ओज गुणों में उल्लेखनीय वृद्धि देखी गई। साथ ही एजीएनपी प्राइमिंग से बीज में एंटीऑक्सिडेंट, कैटालेज और पेरोक्सीडेज गतिविधियों में वृद्धि तथा झिल्ली अखंडता (ईसी) में कमी भी दर्ज की गई। त्वरित जरण (एजिंग) के बाद अंकुरण और ओज ने हाइड्रो-प्राइमेड और अनप्राइमेड बीज की तुलना में एजीएनपी प्राइम्ड (50 मिलीग्राम/लीटर) बीज ने बेहतर प्रदर्शन दिखाया।

(xiii) गुणवत्तापूर्ण प्रोटीन मक्का (क्यूपीएम) इनब्रेड में बीज की जीवन क्षमता में **तेजी से गिरावट का रासायनिक आधार:** कम समय तक भंडार वाली गुणवत्तापूर्ण प्रोटीन मक्का इनब्रेड में बीज की जीवन क्षमता में गिरावट को मुख्यतः उच्च-लिपिड ऑक्सीकरण (एमडीए सामग्री) और प्रोटीन कार्बोनिलेशन के कारण पाया गया। इन इनब्रेड में झिल्ली अखंडता (ईसी) का नुकसान, शीघ्रवाष्पशील एल्डिहाइड का अधिक उत्पादन, एंजाईम (एमाइलेज, गैलेक्टोसिडेस, प्रोटीज) की गतिविधि में कमी, तथा प्राकृतिक प्रोटीन ग्लाइकेशन में वृद्धि, जरण (एजिंग) के दौरान देखी गई।

(xiv) धान के बीज के अंकुरण और प्रारंभिक अंकुरण अवस्था के लिए थर्मोटॉलरेंस इंडक्शन तकनीक: इस प्रौद्योगिकी में अंकुरित बीजों (1-1.5 सेमी रेडिकल) और शुरुआती अंकुरण चरणों (7 दिन) को सामान्य से थोड़ा ज्यादा तापक्रम के अधीन रखा गया, जिससे की पौधे को दो दिनों के बाद भी अत्यधिक तापमान के तनाव को सहन कर सके। अंकुरित बीज और शुरुआती अंकुरण चरणों के लिए अनुकूलन तापमान क्रमशः 38^0 सेल्सियस (75 मिनट), और 42^0 सेल्सियस (75 मिनट) पाया गया। अभ्यस्त बीजों ने 2 दिन बाद भी 48^0 सेल्सियस तक के तापमान तनाव को सहन कर लिया। इस तकनीकी को ज्ञात ताप-सहिष्णु और अतिसंवेदनशील जीनोटाइप में थर्मोटॉलरेंस प्रेरण के लिए मान्य किया गया।

(xv) अंतः शोषण पद्धति के आधार पर धान में बीज प्राइमिंग का विकास: बीज प्राइमिंग कार्यप्रणाली को अंतःशोषण चरण के आधार पर विकसित किया गया। अंतःशोषण के विभिन्न चरणों की पहचान करने के लिए अंतःशोषण के दौरान धान के नमूनों द्वारा ग्रहण किए गए पानी को तीसरे क्रम के बहुपद प्रतिगमन गुणांक का उपयोग करके फिट किया गया। प्राइमिंग एजेंट की पहचान बिना तत्व की मात्रा के आधार पर अंतःशोषण के दूसरे चरण की पहचान की गई। चरण II तक अंतःशोषण के बाद 26°C पर शुष्कता से उच्च और निम्न जल क्षमता दोनों में बढ़ा प्रारंभिक प्रभाव देखा गया।

(xvi) धान में उच्च तापमान तनाव को कम करने के लिए स्पर्मेडीन प्राइमिंग तकनीक: एमएम स्पर्मिडाइन द्वारा प्राइम्ड बीजों ने धान में उच्च तापमान तनाव के लिए अधिकतम सहिष्णुता दिखाई। स्पर्मिडाइन प्राइमिंग की पीईजी (PEG) विधि; उच्च अंकुरण, अंकुर वृद्धि और उच्च तापमान तनाव के तहत ओज मापदंडों के लिए स्पर्मिडाइन जलसेक (infusion) के अन्य तरीकों से बेहतर पाई गई।

(xvii) ई-नाम में स्वचालित भौतिक शुद्धता विश्लेषण हेतु ग्रेनेक्स प्रौद्योगिकी (इलेक्ट्रॉनिक-राष्ट्रीय कृषि बाजार)

कृषि के क्षेत्र में फसलों की गुणवत्ता और व्यवहार्यता सुनिश्चित करने के लिए बीजों की भौतिक शुद्धता का आकलन करना महत्वपूर्ण है। ग्रेनएक्स (ग्रेन-एक्सपर्ट), मशीन विज़न तकनीक के माध्यम से विकसित बीजों की ई-गुणवत्ता मूल्यांकन करने वाली एक तकनीक है। ग्रेनएक्स भौतिक शुद्धता विश्लेषण के लिए पूरी तरह से स्वचालित दृष्टिकोण का उपयोग करती है, और यह एक त्वरित और व्यवहार्य विकल्प है। यह भारतीय बाजारों में आने वाली फसलों की भौतिक शुद्धता के मूल्यांकन के लिए एक त्वरित, विश्वसनीय और निष्पक्ष साधन है। बीजों की उच्च-रिज़ॉल्यूशन छवियों को कैप्चर करने के लिए एक विशेष छवि सेंसर का उपयोग करके एक इमेजिंग सेटअप विकसित किया गया है। स्पष्ट और प्रतिनिधि चित्र प्राप्त करने के लिए विभिन्न अनाजों के लिए उचित रोशनी और स्थिति सुनिश्चित की जाती है। प्राप्त छवियों से प्रासंगिक विशेषताओं को निकालने के लिए विभाजन, रूपात्मक संचालन और रंग विश्लेषण सहित विभिन्न छवि प्रसंस्करण तकनीकों को नियोजित किया जाता है। ये विशेषताएं बाद के वर्गीकरण चरण के लिए इनपुट के रूप में काम करती हैं। स्वचालित शुद्धता विश्लेषण प्रणाली हार्डवेयर और सॉफ्टवेयर घटकों के संयोजन का उपयोग करके कार्यान्वित की जाती है। हार्डवेयर सेटअप में इमेजिंग डिवाइस, प्रकाश व्यवस्था और डेटा ट्रांसफर के लिए आवश्यक इंटरफेस शामिल हैं। सॉफ्टवेयर में इमेज प्रोसेसिंग लाइब्रेरी, मशीन लर्निंग फ्रेमवर्क और आसान संचालन के लिए एक इंटरफेस शामिल है। इसे 10 जुलाई, 2023 को इलेक्ट्रॉनिक्स और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय,

ग्रेनेक्स प्रौद्योगिकी

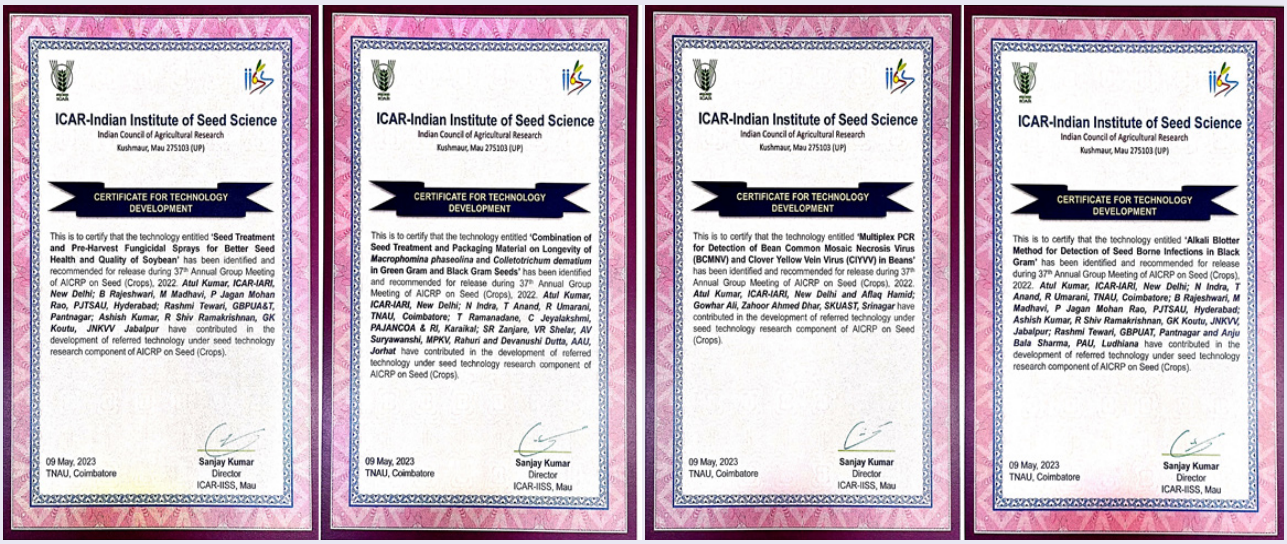

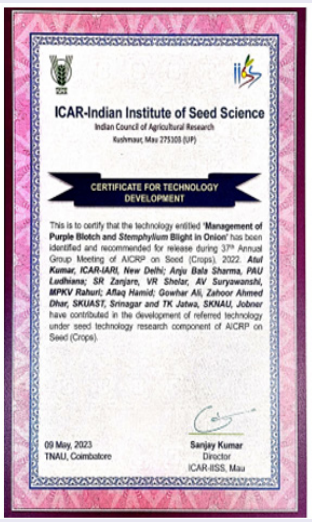

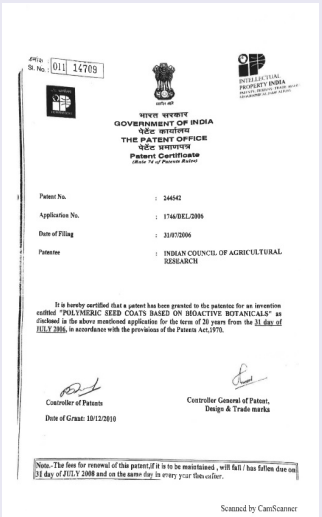

ए.आई.सी.आर.पी.-बीज द्वारा प्राप्त प्रौद्योगिकी प्रमाण-पत्र

भारत सरकार द्वारा लॉन्च किया गया। इसे एग्री एनआईसीएस कार्यक्रम के तहत सी-डैक, कोलकाता के सहयोग से बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग द्वारा विकसित किया गया है। यह प्रणाली गुणवत्ता आधारित मूल्य निर्धारण के लिए ई-एनएएम बाजारों में परिवर्तनकारी बदलाव लाएगी और 1,200 से अधिक ई-एनएएम से जुड़े बाजारों के लिए सहायक होगी ।

2. बीज-गुणवत्ता मूल्यांकन एवं संवर्धन: पद्धतियों का मानकीकरण

अनेक दलहनी एवं मिलेट-समूह की विभिन्न फसलों के मानक अंतरराष्ट्रीय बीज परीक्षण संगठन द्वारा प्रतिपादित नियमों में उपलब्ध नहीं है। जबकि भारतीय परिपेक्ष में यह फसलें अत्यंत महत्वपूर्ण है। अत: रागी और खेसारी जैसी महत्वपूर्ण फसलों के बीजों का टेट्राजोलियम द्वारा जीवन क्षमता परीक्षण का मानकीकरण सर्वप्रथम इस संभाग में हुआ। इसके अतिरिक्त मेथी, चना, खेसारी, ढेंचा, क्रोटोलोरिया तथा चारागाह में लगाई जाने वाली अनेक घास के बीजों की अंकुरण परीक्षण पद्धतियों का विकास भी इसी संभाग में हुआ है। इन पद्धतियों का प्रयोग आज भारतवर्ष की अनेक बीज परीक्षण प्रयोगशालाओं में हो रहा है।

केंद्रीय बीज परीक्षण प्रयोगशाला (सीएसटीएल) की स्थापना 1961 में रॉकफेलर फाउंडेशन की सहायता से नोडल बीज परीक्षण प्रयोगशाला के रूप में बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग, भा.कृ.अनु.प., नई दिल्ली में की गई थी। केंद्रीय बीज परीक्षण प्रयोगशाला विभिन्न राज्यों में स्थित राज्य बीज परीक्षण प्रयोगशालाओं की कार्यविधि का नियमित रूप से परिविक्षक करती है। इसके लिए राज्य बीज परीक्षण प्रयोगशालाओं में प्राप्त होने वाले बीज के नमूने का एक निश्चित प्रतिशत, केंद्रीय बीज परीक्षण प्रयोगशाला में मंगाया जाता है। उन नमूनों का परीक्षण होता और फिर केंद्रीय बीज परीक्षण प्रयोगशाला और राज्य बीज परीक्षण प्रयोगशाला से प्राप्त परिणामों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है। इसके अतिरिक्त केंद्रीय बीज परीक्षण प्रयोगशाला बीज अधिनियम प्रवर्तन के अंतर्गत भारत सरकार द्वारा दिए गए अन्य वैधानिक कार्यों का भी प्रतिपादन करती है।

केंद्रीय बीज परीक्षण प्रयोगशाला को 2007 में बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग, भा.कृ.अनु.प., नई दिल्ली से राष्ट्रीय बीज अनुसंधान और प्रशिक्षण केंद्र (NSRTC), वाराणसी (यूपी) में स्थानांतरित कर दिया गया। बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग, नई दिल्ली में बीज परीक्षण प्रयोगशाला अभी भी बीज उद्योग के लिए अपनी गतिविधियां जारी रखे हुए है। बीज परीक्षण प्रयोगशाला संस्थान के वैज्ञानिक, कर्मचारियों और स्नातकोत्तर छात्रों के अनुसंधान नमूनों के अलावा अन्य अनुसंधान संगठनों के वाणिज्यिक बीज नमूनों के विश्लेषण का कार्य कर रही है।

बीज परीक्षण प्रयोगशाला में बीज नमूनों के विश्लेषण का कार्य

बीज-गुणवत्ता संवर्धन

(i) मिर्च में बीज गुणवत्ता संवर्धन: मिर्च एक महत्वपूर्ण उच्च मूल्य सब्जी फसल है। बीज उत्पादन के लिए पौध ट्रांसप्लांटिंग के दौरान खेत का तापमान निम्न होने के कारण पौध उद्भव एवं स्थापना पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। बीज संवर्धन उपचार; सॉलिड मैट्रिक्स प्राइमिंग (वर्मीक्यूलाईट: 24 घंटे/25°C), (24 घंटे/25°C) और चुंबकीय उपचार (50 एमटी/घंटा) मिर्च की किस्मों में अंकुरण, पौध स्थापना वृद्धि, जड़ वृद्धि फल और बीज उपज मापदंडों में सुधार के लिए निम्न तापमान की परिस्थितियों में प्रभावी पाए गए। इन संवर्धन उपचारों से बीजों की भौतिक, एवं जैव रसायन प्रक्रिया में अनुकूलन प्रभाव पड़ता है।

अनउपचारित उपचारित

मिर्च में बीज संवर्धन उपचार से फल और बीज उपज में वृद्धि

(ii) मक्का में बीज गुणवत्ता संवर्धन: वसंत-गर्मी के मौसम में बुआई के दौरान निम्न तापमान (15° से. से नीचे) से स्पेशलिटी

मक्का में प्रक्षेत्र उद्भव और अंतिम पौध संख्या पर प्रभाव पड़ता है। बीज संवर्धन उपचार (हाइड्रोपॉइमिंग और थाइरम, माइक्रोबियल कंसोर्टियम; कोल्ड एडॉप्टिव पीजीपीबी के साथ हाइड्रोप्राइमिंग, डीएबी+ बायोफोस और ट्राइकोडर्मा हार्ज़ियानम से बीज अंकुरण, बीज ओज, पौध वृद्धि और बीज उपज में वृद्धि हुई। माइक्रोबियल कंसोर्टियम (Microbial consortium) का अंकुर मापदंडों पर भी महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है, जिसको जैविक उपचारों के साथ बीज प्रभंजन करने पर पादप प्रक्षेत्र स्थापन, अंकुर विकास और उपज सुधार करने में प्रभावी पाया गया है।

बीज संवर्धन उपचार से मक्का में क्षेत्र उद्भव और वानस्पतिक वृद्धि

3. किस्मों का अभिनिर्धारण तथा आनुवंशिक शुद्धता

पारंपरिक रूप से फसलों की विभिन्न जातियों का अभिनिर्धारण उसके बीज, पौध एवं पूर्ण विकसित पौधे के बाह्य आकृतिक गुणों के आधार पर किया जाता है। इस संभाग द्वारा गेहूं और मटर की भारतीय विमोचित किस्मों के बाह्य आकृतिक गुणों का विस्तृत वर्णन प्रकाशित किया जा चुका है, जो कि बीज प्रमाणीकरण के लिए बहुत उपयोगी है। इसी प्रकार-धान की विमोचित किस्मों का विस्तृत वर्णन भी तैयार किया गया है। यद्यपि इन बाह्य आकृतिक गुणों द्वारा जीन अभिव्यक्ति का अवलोकन किया जा सकता है परंतु इस प्रकार के मूल्यांकन में कभी-कभी पूरी जानकारी प्राप्त करने में कई महीने लग जाते हैं। पादप किस्मों का विस्तृत विवरण न केवल प्रजाति संरक्षण के लिए, बल्कि बीज की आनुवंशिक शुद्धता के सत्यापन के लिए भी आवश्यक है। कुछ फसलों, जैसे-कपास, टमाटर एवं रेड़ी के संकर बीजों की आनुवंशिक शुद्धता का सत्यापन भी अनिवार्य है, क्योंकि शुद्धता प्रमाण के अभाव में बीजों को प्रमाणित करके बेचा नहीं जा सकता।

बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग ने कपास, सूरजमुखी, बाजरा, ज्वार, मक्का, गेहूं, रेड़ी तथा धान की विभिन्न प्रजातियों के इलेक्ट्रोफोरोसिस द्वारा प्रभेदन की कार्यप्रणाली विकसित एवं मानकीकृत करने में प्रमुख भूमिका निभाई है। यह एलेक्ट्रोफोरेसिस (अम्लीय या क्षारीय) बीज के घुलनशील प्रोटीन अथवा इस्टरेज, पराक्सीडेज, मैलेट डीहाइड्रोजेनेज, ग्लूटेमेट डीहाइड्रोजेनेज और ग्लूटेमेट ऑक्जेलोएसीटेट ट्रांसमिनेज जैसे आइसोएन्जाईम के आधार पर किया गया। इस्टरेज आईसो एन्जाईम की द्वारा बाजरा की विभिन्न प्रजातियों का प्रभेदन अधिक शुद्धता से किया गया है। इसके अतिरिक्त इस विधि द्वारा अनेक फसलों के संकर बीजों की शुद्धता भी सुनिश्चित की जा सकती है। इलेक्ट्रोफोरेसिस एक ऐसी तकनीक है जिसके द्वारा आनुवंशिक शुद्धता एवं किस्मों का सत्यापन शीघ्रता से किया जा सकता है।

प्रतिबिंब विश्लेषण द्वारा फसलों की विभिन्न प्रजातियों का बीज के आकार के आधार पर प्रभेदन, देश में पहली बार बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग में किया गया। इस पद्धति में गेहूं, धान, रेडी और सूरजमुखी की विभिन्न प्रजातियों के बीजों का एक डेटाबेस तैयार किया गया है, जिससे विमोचित प्रजातियों का प्रभेदन हो सके। यह एक अनुपम पद्धति है जिसमें बीजों को नष्ट किए बिना ही परिणाम प्राप्त हो जाते हैं। बीजों के व्यापार में इस पद्धति की अपार संभावनाएं हैं।

4. बीज उद्योग का विकास

भारतीय बीज उद्योग के विकास में बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इस संभाग ने सब्जियों एवं अन्य फसलों की लगभग 160 प्रजातियों के उत्तम गुणवत्ता वाले प्रजनक बीजों को बीज उद्योग के लिए उपलब्ध कराया। उच्च गुणवत्ता वाले प्रजनक बीजों से आधार बीज और आधार बीजों से प्रमाणीकृत बीजों का उत्पादन किया गया।

प्रमाणीकृत बीजों से किसानों ने व्यावसायिक फसलों का उत्पादन किया। स्वपरागित फसलों में एक किसान से दूसरे किसानों में भी बीजों का आदान-प्रदान हुआ। जिसके कारण उन्नत किस्मों के अच्छे बीजों का क्षैतिज फैलाव शीघ्रता से हुआ। अस्सी के दशक में 4-5 वर्ष में ही संस्थान द्वारा विकसित गेहूं की एच.डी. 2329 और एच.डी. 2285 किस्में उत्तरी-पश्चिमी क्षेत्र के लगभग 90 लाख हैक्टेयर भूमि में लगाई जाने लगीं। नब्बे के दशक में इंदोर एवं पूसा बिहार में स्थित संस्थान के क्षेत्रीय केंद्रों पर भी प्रजनक बीज उत्पादन का कार्य तेजी से बढ़ा है जिसके फलस्वरूप देश के पूर्वी एवं मध्य क्षेत्र में भी गेहूं की रोग रोधी एवं उच्च गुणों वाली किस्मों का प्रचार व प्रसार हुआ है। अस्सी

के दशक में संभाग ने केंद्रक बीज उत्पादन तथा अनुरक्षण-प्रजनन का जो कार्य प्रारंभ किया था उसका अनुसरण आज भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद तथा राज्य कृषि विश्वविद्यालयों के सभी कार्यक्रमों में किया जा रहा है।

5. किसानों के स्तर पर उत्पादन में वृद्धि

साठ के दशक में संस्थान ने गेहूं की अधिक उपज देने वाली बौनी किस्मों के परीक्षण एवं विमोचन में विशेष योगदान दिया है। इन किस्मों के बीजों की अप्रत्याशित मांग को पूरा करने के लिए संस्थान के क्षेत्रीय केंद्र, करनाल पर बीजोंत्पादन का एक बृहद कार्यक्रम आयोजित किया गया, जिससे अधिक उपज देने वाली किस्मों का प्रसार व प्रचार हुआ तथा गेहूं के उत्पादन में आत्म-निर्भरता तथा हरित क्रांति का सूत्रपात हुआ। अधिक उपज देने वाली किस्मों को किसानों में लोकप्रिय बनाने तथा नई विमोचित किस्मों के क्षैतिज विस्तार के उद्देश्य से अस्सी के दशक में अनेक फसलों एवं सब्जियों के बीजों का किसानों में वितरण पूसा संस्थान के बीज विक्रय केंद्र तथा क्षेत्रीय केंद्रों के माध्यम से एक बड़े पैमाने पर किया गया। संस्थान ने बिहार के सोन कमांड क्षेत्र विकास एजेन्सी के साथ सहभागिता में एक कार्यक्रम प्रारंभ किया जिसके अंतर्गत बिहार के 14 जिलों की कृषि उत्पादकता एवं उत्पादन बढ़ाने का लक्ष्य था। इस कार्यक्रम के अंतर्गत संस्थान ने बिहार में दलहनी, तिलहनी एवं अन्य अनाजों की नई किस्मों का प्रचार व प्रसार किया। इससे बिहार के किसानों को संस्थान द्वारा विकसित नई किस्मों का स्थाई स्रोत मिल गया। गेहूं की प्रजाति गंगा (एच डी 2643) चने की प्रजाति पूसा 256 तथा सरसों की प्रजाति पूसा बोल्ड तथा सब्जियों की अनेक प्रजातियों का प्रवेश बिहार में हो गया जिससे बिहार की उत्पादकता में अन्ततोगत्वा वृद्धि हुई।

उत्तम बीज या प्रमाणीकृत बीजों के प्रयोग से किसानों के सकल उत्पादन में वृद्धि हुई है। यह वृद्धि स्वयं किसानों द्वारा बचाकर रखे गए बीजों से कहीं अधिक है। संस्थान में यह समस्त जानकारी एकत्रित कर भारत सरकार को उपलब्ध कराई, जिसके आधार पर विश्व बैंक ने सन् 1977 में राष्ट्रीय बीज कार्यक्रम के लिए 5,27000.00 डालर का अनुदान प्रदान किया।

6. उचित बीज भंडारण

भारत के विभिन्न स्थानों का बीज-भंडारण की दृष्टि से वर्गीकरण तथा बीज-भंडारण के लिए उपयुक्त स्थानों के अभिनिर्धारण से बीज-उद्योग को उन स्थानों पर व्यावसायिक बीज-भंडार निर्मित करने में सहायता मिली है। बीज-भंडारण की अनुकूलनतम दशाओं तथा भंडारण की संशोधित विधियों का अभिनिर्धारण किया जा चुका है। इसी आधार पर अन्य फसलों के बीजों की नमी 9 प्रतिशत और सब्जियों के बीजों की नमी 6 प्रतिशत तक कम करके, यदि उन्हें 700 गेज के पॉलीथिन के लिफाफों, या पॉलीलाइन्ड एल्युमिनियम फायल में रखा जाए तो अधिक समय तक बीजों का अंकुरण सुरक्षित रह सकता है। यह संस्तुति बीज-उद्योग तथा किसानों में अत्यधिक लोकप्रिय है क्योंकि बीजों की नमी को सूरज की रोशनी में सुखाकर बड़ी आसानी से 9.0 प्रतिशत तक कम किया जा सकता है। कभी-कभी इसके लिए साधारण बीज सुखाने वाले उपकरणों का भी प्रयोग करना पड़ता है।

7. मानव संसाधन विकास

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान द्वारा बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी में प्रशिक्षित मानव संसाधन, देश के बीज क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन उत्पन्न कर रहा है। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के तत्कालीन वनस्पति विज्ञान संभाग में स्थित बीज परीक्षण प्रयोगशाला ने सर्वप्रथम सन् 1961 में अखिल भारतीय बीज परीक्षण एवं गुणवत्ता नियंत्रण प्रशिक्षण पाठ्यक्रम प्रारंभ किया। इस प्रशिक्षण के कारण देश में बीज गुणवत्ता आश्वासन तथा बीज अधिनियम प्रवर्तन के लिए प्रशिक्षित मानव संसाधन का विकास हुआ। पिछले दशक में इस प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में बीज गुणवत्ता मूल्यांकन की नई तकनीक, संकर बीज उत्पादन तथा पौध प्रजाति संरक्षण के लिए डी.यू.एस. परीक्षण पर अधिक बल दिया गया है।

सन् 1977 में बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग में एक-वर्षीय स्नातकोत्तर डिप्लोमा प्रारंभ किया गया। सन् 1982-88 तक नियमित एम.एस.सी. (स्नातकोत्तर) उपाधि का कार्यक्रम चला जिसे 1992 में पुर्नजीवित किया गया। पीएच.डी. उपाधि के कार्यक्रम का सूत्रपात सन् 1994 में हुआ। सन् 2024 तक भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के कुल 222 छात्रों ने बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग से स्नातकोत्तर (139) तथा पीएचडी (83) की उपाधि प्राप्त की है।

8. भविष्य की संभावनाएं

भारतीय बीज कार्यक्रम का भविष्य बहुत उज्ज्वल है और उसमें क्रांतिकारी परिवर्तन की संभावनाएं हैं। देश में पादप किस्म संरक्षण अधिनियम के लागू हो जाने से निजी क्षेत्र की कंपनियों की रूचि धान, कपास, ज्वार, बाजरा, तिलहनी फसलें, सब्जियों और फूलों के संकर बीजों के विकास एवं उत्पादन में बढ़ेगी। संकर धान की लोकप्रियता तथा बी टी कपास के बीजों की उपलब्धता से किसानों में इसकी मांग बढ़ेगी। परंतु गेहूं, धान, सोयाबीन, मूंगफली, दलहनी फसलें मिलेट समूह की अन्य फसलें (ज्वार-बाजरा को छोड़कर) तथा कुछ सब्जियों के बीजों की मांग की लगभग 80 प्रतिशत आपूर्ति सार्वजनिक क्षेत्र से या वस्तु-विनिमय के आधार पर एक किसान से दूसरे किसान से ही पूरी होगी।

अतः बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी में बीज कार्यक्रम को स्टेट ऑफ आर्ट तकनीक पर विकसित करना होगा। जिससे वह कम लागत में अधिक उपयोगिता प्रदान कर सकें। इसमें संकर बीजों की शुद्धता का मूल्यांकन, पादप किस्म संरक्षण अधिनियम के अंतर्गत डी.यू.एस. परीक्षण, ट्रान्सजेनिक गुणों की उपस्थिति और मूल्यांकन, बीजों का गुणवत्ता उन्नयन सम्मिलित हैं। इसके अतिरिक्त बीजोंत्पादन में किसानों की भागीदारी, नई तकनीकों का समावेश तथा पुरानी तकनीकों का संशोधन आवश्यक है क्योंकि अधिकांश किसान स्वपरागित फसलों का ही बीज उत्पादन करते हैं। आनुवंशिक उन्नयन द्वारा बीजों की ओज, जीवन-क्षमता एवं आयु में वृद्धि, जिसके द्वारा बीज विभिन्न परिस्थितियों में भी अपनी अंकुरण क्षमता संयोजित रख सके। इस विषय पर एक दीर्घकालिक अनुसंधान कार्यक्रम की आवश्यकता है।

सारांश

बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी में मानव संसाधन में एक पुर्नभिविन्यास की आवश्यकता है जिससे वह विश्व व्यापार अनुबंध की चुनौतियों का सामना कर सके। नीति निर्धारण करने वाले बीज शोध अधिकारी, बीज उद्योग एवं बीज गुणवत्ता नियंत्रण में लगे हुए व्यक्तियों का प्रशिक्षण आवश्यक है। इसके अतिरिक्त संकर बीज उत्पादन, पादप किस्म संरक्षण, डीयूएस परीक्षण, स्वास्थ्य परीक्षण, बीज गुणवत्ता मूल्यांकन, विशेषकर ट्रांसजेनिक बीजों की गुणवत्ता तथा बीजों के आयात-निर्यात संबंधी मुद्दे मानव संसाधन के विकास के मुख्य अंग होने चाहिए। इसके अतिरिक्त पर्वतीय क्षेत्रों तथा देश के पूर्वी क्षेत्रों में बीजोंत्पादन, बीज परीक्षण तथा बीज भंडारण के लिए विशेष प्रशिक्षण पाठ्यक्रम तैयार करने की आवश्यकता है।

आभार: लेखक डॉ एस.के. चक्रवर्ती, एस.के. यादव, डी. विजय, मंजुनाथ प्रसाद सी.टी., विजय कुमार एच.पी., विश्वनाथ रोहिदास यालामल्ले, नागमणि सांद्रा, तथा बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग के सभी वैज्ञानिकों, तकनीकी तथा अन्य कर्मचारियों जिन्होंने भूतकाल में इस संभाग में काम किया है, या वर्तमान में कार्यरत हैं, के आदानों के लिए कृतज्ञ हैं।

फाइटोरेमेडिएशन प्रक्रियाओं द्वारा मिट्टी में भारी धातु संदूषण में कमी

प्रीतम चनक, मोनिका कुंडू, शिप्रा, अनंता वशिष्ठ, प्रमीला कृष्णन एवं सुभाष नटराज पिल्लै

कृषि भौतिकी संभाग

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110 012

परिचय

मिट्टी और पानी में भारी धातु संदूषण के कारण विषाक्तता तनाव फसल उत्पादकता और गुणवत्ता के लिए एक महत्वपूर्ण बाधा बन गया है। बढ़ती जनसंख्या वृद्धि और अंतर्निहित खाद्य मांग के कारण यह स्थिति और भी खराब हो गई है। पौधों पर प्रतिकूल प्रभाव के अलावा, भारी धातुएं प्रकृति में बने रहने के कारण मानव स्वास्थ्य के लिए भी खतरा पैदा करती हैं। उदाहरण के लिए, लैड सबसे जहरीली भारी धातुओं में से एक है, जिसकी मिट्टी की अवधारण अवधि 150-5,000 वर्ष है। दूषित स्थानों पर उगने वाले पौधे आम तौर पर भारी धातुओं की अधिक मात्रा जमा करते हैं, जिससे खाद्य श्रृंखला का प्रदूषण होता है। दूषित खाद्य श्रृंखला जानवरों और मानव ऊतकों में भारी धातुओं के प्रवेश के लिए प्राथमिक मार्ग के रूप में कार्य करती है, जिससे उनमें त्वचा रोग से लेकर विभिन्न प्रकार के कैंसर तक कई बीमारियों का खतरा होता है। अगर सही समय पर पर्याप्त उपाय नहीं किए गए तो यह समस्या और भी गंभीर हो सकती है। पर्यावरण में भारी धातुओं का पाया जाना, साथ ही उनकी विषाक्तता और अन्य गुण, अभी भी शोध का विषय बने हुए हैं। शौध रुचि संभवतः पर्याप्त खाद्य पदार्थों को सुनिश्चित करने की चिंताओं से संबंधित है। इसके अलावा, ऐसी प्रौद्योगिकियां विकसित हो रही हैं जो भारी धातुओं से प्रदूषित वातावरण का समाधान कर सकती हैं। वे प्रौद्योगिकियां जो इस उद्देश्य के लिए पौधों का उपयोग करती हैं, फाइटोरेमेडिएशन प्रौद्योगिकियां कहलाती हैं। पौधे कई कारकों (भौतिक, रासायनिक और जैविक) से प्रभावित होते हैं। पौधों को प्रभावित करने वाले यौगिकों के समूहों में भारी धातुएं भी शामिल हैं। एक भारी धातु उन तत्वों के एक अपरिभाषित उपसमूह का सदस्य है जो धात्विक गुण प्रदर्शित करते हैं, जिसमें मुख्य रूप से संक्रमण धातुएं, कुछ मेटलॉइड्स, लैंथेनाइड्स और एक्टिनाइड्स शामिल होते हैं।

भारी धातुओं का स्रोत

भारी धातुएं पृथ्वी की ऊपरी सतह में व्यापक रूप से वितरित हैं। भारी धातुओं को आग्नेय (ज्वालामुखी मूल की), तलछटी (अवसादन द्वारा परतों में निर्मित), या मेटामॉर्फिक (तीव्र गर्मी और दबाव द्वारा परिवर्तित) मूल की चट्टानों से प्राप्त किया जा

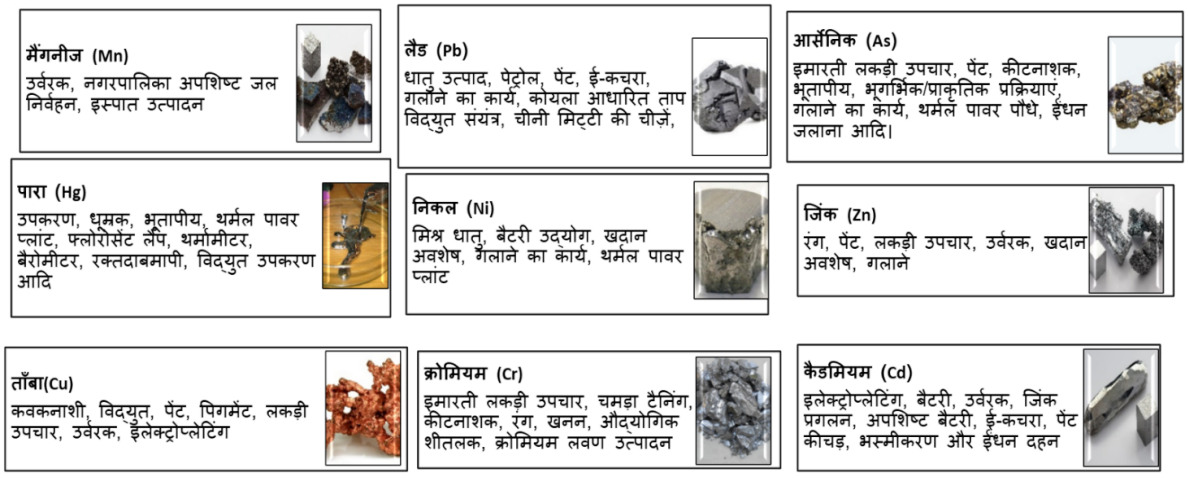

चित्र 1: विभिन्न प्रकार की भारी धातुएं एवं उनकी उपयोगिताएं

सकता है जिनमें विशिष्ट तत्व होते हैं। प्राकृतिक चट्टान संरचनाओं से अपक्षयित भारी धातुएं पर्यावरण में व्यापक रूप से फैली हुई हैं, जो मिट्टी, नदियों, झीलों, समुद्री जल और समुद्र तलछट में कण या विघटित रूपों में होती हैं। ज्वालामुखी भी वायुमंडल में भारी धातुएं छोड़ते हैं (चित्र 1)। हालांकि, कृषि और औद्योगिक गतिविधि के क्षेत्रों में, भारी धातुओं की उच्च सांद्रता (पृष्ठभूमि स्तरों की तुलना में) का पता लगाया जा सकता है। भारी धातु की खदानों के पास की मिट्टी विशेष रूप से भारी धातु से संबंधित तनाव के साथ-साथ जिकं, लैड, क्रोमियम, मैगनीज, आयरन, थालियम, आर्सेनिक द्वारा धातु प्रदूषण के संपर्क में आती है। जीवित वातावरण में उनकी संभावित गतिशीलता, जैवउपलब्धता और विषाक्तता का मूल्यांकन करने के लिए भारी धातुओं के रासायनिक रूपों की अभी भी जांच की जाती है।

जैव मंडल में विषाक्तता

मुख्य रूप से भारी धातुओं और उपधातुओं के अंश जीवन के लिए संभावित जोखिम पैदा करते हैं, खासकर जलीय वातावरण में उनकी घुलनशीलता के कारण। यद्यपि कई भारी धातुएं शैवाल और पौधों के लिए वर्णक और एंजाइमों (मुख्य रूप से तांबा, निकल, जिकं, कोबाल्ट, आयरन और मोलिब्डेनम) के आवश्यक घटक हैं। सभी धातु, विशेष रूप से कैडमियम, पारा, और तांबा उच्च सांद्रता में होने से विषाक्ता पैदा करती हैं, क्योंकि वे एंजाइम कार्यों को बाधित करते हैं, वर्णक में आवश्यक धातुओं को प्रतिस्थापित करते हैं, या प्रतिक्रियाशील ऑक्सीजन प्रजातियों का उत्पादन करते हैं।

जैव मंडल पर प्रभाव

धातु विषाक्तता के लक्षण समान हैं, और सबसे अधिक जांच की गई भारी धातु कैडमियम है। भारी धातुओं के सबसे महत्वपूर्ण प्रभाव हैं:

- ऑक्सीडेटिव तनाव, कई भारी धातुओं और मेटलॉइड्स के ऑक्सीडेटिव-रेडॉक्स गुणों के कारण विषाक्तता पैदा होती है।
- आवश्यक धातुओं से समानता के कारण प्रोटीन और अन्य बायोएक्टिव यौगिकों की संरचनाओं के साथ भारी धातुओं का बंधन
- भारी धातु आयनों की उपस्थिति के प्रति पौधों की प्रतिक्रिया में पौधे के थायोल यौगिकों का संश्लेषण

भारी धातु	मानव पर विषैला प्रभाव
आर्सेनिक(As)	त्वचा अभिव्यक्ति, कैंसर, संवहनी रोग, त्वचीय रोग, गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल समस्या, श्वसन आघात
लैड (Pb)	भ्रूण के मस्तिष्क, गुर्दे को नुकसान समस्या, तंत्रिका तंत्र को प्रभावित करती है।
कैडमियम (Cd)	अपक्षयी हड्डी रोग, गुर्दे क्षति, गुर्दे संबंधी विकार, मानव कार्सिनोजन
तांबा (Cu)	जिगर की क्षति, विल्सन रोग, अनिद्रा
क्रोमियम (Cr)	कार्सिनोजन, एलर्जी प्रतिक्रिया, चिड़चिड़ापन, जठरांत्र रक्तस्राव
पारा (Hg)	अंधापन और बहरापन, मस्तिष्क क्षति, पाचन समस्याएं, किडनी क्षति, समन्वय की कमी, मानसिक बाधा

तालिका 1: विभिन्न भारी धातुएं एवं मनुष्य जीवन पर उनका प्रभाव

भारी धातुओं के प्रति सहनशीलता

कुछ पौधे, जिन्हें मेटालोफाइट्स कहा जाता है, भारी धातुओं के प्रति सहिष्णुता या अतिसहिष्णुता प्रदर्शित करते हैं, साथ ही एक या अधिक धातुओं का अति-संचय भी करते हैं। इन पौधों में दो महत्वपूर्ण आर्थिक संभावनाएं हो सकती हैं - फाइटोमाइनिंग (भारी धातु निष्कर्षण) और फाइटोरेमेडिएशन (पौधों में मिट्टी से धातु संचय)। फाइटोरेमीडिएशन की कई प्रक्रियाएं हैं (चित्र: 2)।

फाइटोरेमेडिएशन

- **फाइटोएक्सट्रैक्शन** – फाइटोएक्सट्रैक्शन में, भारी धातुओं को पानी और पोषक तत्वों के साथ पौधों द्वारा ग्रहण किया जाता है। इसके बाद भारी धातु को पादप संचयन नामक प्रक्रिया द्वारा अवशोषित, अवक्षेपित और पौधे के हवाई भागों (यानी, अंकुर, पत्तियां, आदि) में जमा किया जाता है। *Brassica juncea* (ब्रैसिका जंसिया), *Arabidopsis thaliana*

(एराबिडोप्सिस थालियाना), *Cynodon dactylon* (सिनोडोन डैक्टिलॉन), *Bidens pilosa* (बिडेंस पिलोसा), *Helianthus annuus* (हेलियनथस एनुअस), *Calandula officinalis* (कैलेंडुला ऑफिसिनालिस) जैसे कई पौधे हैं, जो कैडमियम, जिंक, निकल, क्रोमियम, लैड और तांबा को अवशोषित कर सकते हैं।

- **राइजोफिल्ट्रेशन** – राइजोफिल्ट्रेशन में धातु सहिष्णु जलीय पौधों की जड़ों या अन्य जलमग्न अंगों पर सोखना, संचयन और वर्षा के माध्यम से अपशिष्ट जल, भूजल या सतही जल से जलीय संदूषकों को दूर करने के लिए एक संतृप्त क्षेत्र में पौधों की जड़ों का उपयोग करके विषाक्त पदार्थों को निकालना शामिल है। पौधे की जड़ की सतह के अंदर *Pseudomonas* (स्यूडोमोनास) और *Ochrobacterium* (ओक्रोबैक्टीरियम) हेक्सावलेंट क्रोमियम -VI को त्रिसंयोजक क्रोमियम -III में बदल देते हैं। नया स्वरूप क्रोमियम -III फिर पौधे की जड़ के अंदर आसानी से अवक्षेपित हो जाता है और इस प्रकार पानी साफ हो जाता है।

- **फाइटोडिग्रेडेशन** – फाइटोडिग्रेडेशन में, पौधे धातुओं को अवशोषित करने के बाद उन्हें कम विषैले रूप में बदल देते हैं। धातु आयनों का बाद में टूटना और खनिजीकरण या तो पौधे की कोशिका के अंदर या बाहरी रूप से एंजाइमों के माध्यम से होता है। उदाहरण के लिए, हेलोफाइट, *Halimione portulacoides* (हैलिमियोन पोर्टुलाकोइड्स) द्वारा क्रोमियम (VI) को क्रोमियम (III) में परिवर्तित करके क्रोमियम विषाक्तता को कम किया जाता है।

- **फाइटोस्टेबिलाइजेशन** – फाइटोस्टेबिलाइजेशन को भारी धातुओं के इन-प्लेस निष्क्रियता या स्थिरीकरण के रूप में जाना जाता है, जो भारी धातुओं की जैव उपलब्धता को कम करता है और उनके ऑफ-साइट परिवहन को रोकता है। यह तकनीक अवशोषण द्वारा धातुओं को पौधों की जड़ों पर स्थिर कर देती है। विभिन्न पौधे जैसे *Virola surinamensis* (विरोला सुरिनामेंसिस) और *Acanthus ilicifolius* (एकैन्थस इलिसिफोलियस) कैडमियम फाइटोस्टेबिलाइजेशन में सक्षम हैं।

- **फाइटोवोलाटिलाइजेशन** – फाइटोवोलैटिलाइजेशन में, पौधे धातुओं को ग्रहण करते हैं और उन्हें जाइलम के माध्यम से वाष्पित करते हैं जो आगे चलकर अस्थिर रूपों में परिवर्तित हो जाते हैं और अंततः रंध्र के माध्यम से वायुमंडल में छोड़ दिए जाते हैं। पारा, सेलेनियम, और आर्सेनिक इस प्रक्रिया द्वारा हटाए जा सकते हैं। समुद्री शैवाल *Osterococcus tauri* (ओस्टेरोकोकस टॉरी) और फ़र्न *Pteris vittata* (टेरिस विट्टाटा) में आर्सेनिक को अस्थिर करने की क्षमता होती है जबकि सेलेनियम को *Astragalus racemosus* (एस्ट्रैगलस रेसमोसस) द्वारा अस्थिर किया जा सकता है (चित्र: 3)।

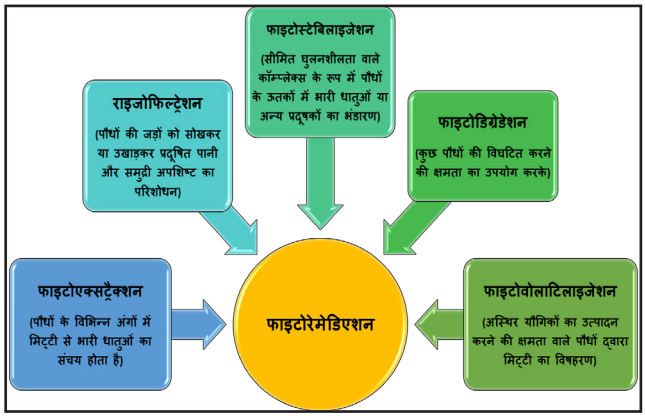

चित्र 2: फाइटोरेमेडिएशन की विभिन्न प्रक्रियाएं

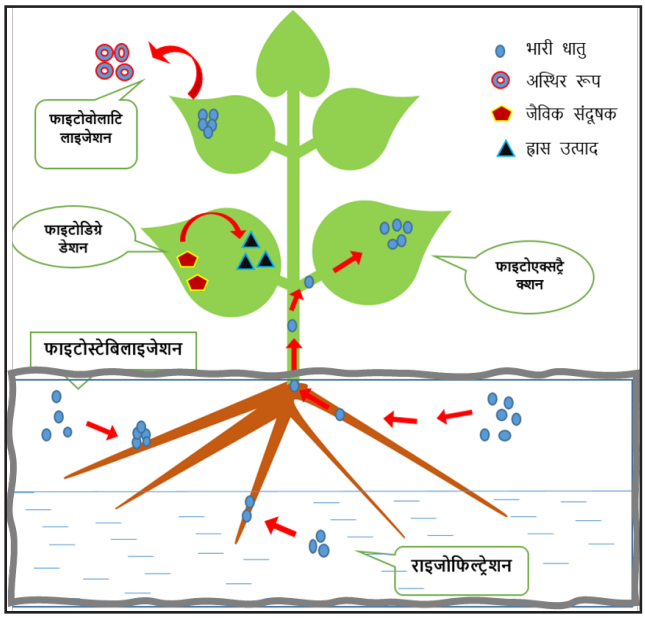

चित्र 3: फाइटोरेमेडिएशन की विभिन्न प्रक्रियाओं द्वारा पौधे के विभिन्न अंगों में अवशोषण एवं परिवर्तन

पर्यावरणीय समस्याओं के इलाज के लिए फाइटोरेमीडिएशन प्रौद्योगिकियों का उपयोग किया जा सकता है। क्योंकि

फाइटोरेमेडिएशन की लागत पारंपरिक प्रक्रियाओं की तुलना में कम है।

निष्कर्ष

भारी धातुएं पौधों पर नकारात्मक प्रभाव दिखाती हैं। पौधों के पास विषाक्त प्रभावों के खिलाफ और भारी धातु प्रदूषण को विषहरण करने के लिए अपने स्वयं के प्रतिरोध तंत्र होते हैं। मिट्टी में उनके संचय के कारण होने वाली भारी धातुओं की विषाक्तता को भारी धातु प्रदूषित मिट्टी के उपचार के लिए प्रभावी ढंग से बायोरेमेडिएशन/फाइटोरेमेडिएशन प्रक्रिया के माध्यम से हाइपर-एकुमुलेटर संयंत्र का उपयोग करके हटाया जा सकता है। पौधे भारी धातु प्रदूषित मिट्टी के उपचार में विभिन्न तंत्रों का उपयोग करते हैं। फाइटोएक्सट्रैक्शन भारी धातु प्रदूषित मिट्टी के उपचार के लिए उपयोग की जाने वाली फाइटोरेमेडिएशन की सबसे आम विधि है जो प्रदूषक को पूरी तरह से हटाने को सुनिश्चित करती है। फाइटोरेमीडिएशन में मिट्टी के गुणों पर कोई खराब प्रभाव दिखाए बिना भारी धातुओं से दूषित मिट्टी को साफ करने की काफी क्षमता है। इसके अलावा, यह एक सस्ती, पर्यावरण-अनुकूल, व्यवहार्य, टिकाऊ तकनीक है। हालांकि अन्य तकनीकों की तुलना में फाइटोरेमेडिएशन के कई फायदे हैं, लेकिन इसकी कुछ सीमाएं भी हैं। फाइटोरेमीडिएशन एक धीमी प्रक्रिया है जो जैविक चक्रों पर निर्भर करती है और मिट्टी को ठीक करने के लिए कुछ महीनों से लेकर कई वर्षों और कई फसल चक्रों की आवश्यकता होती है। कम या मध्यम दूषित स्थलों के लिए फाइटोरेमीडिएशन संभव है ताकि पौधों पर फाइटोटॉक्सिसिटी कम रहे और पौधे बढ़ सकें। पौधे की वृद्धि दर, ज़मीन के ऊपर कम बायोमास और जड़ की गहराई भी फाइटोरेमेडिएशन के लिए सीमित कारक हैं। हालांकि, पौधो की उपचार क्षमता भिन्न-भिन्न होती हैं इसलिए, प्रदूषकों के आधार पर पौधों का चयन संदूषक और साइट की स्थितियों पर आधारित होता है।

आभासी जल (वर्चुवल वाटर- Virtual Water) परिदृश्य

अंचल दास, शिवाधार मिश्रा, रणबीर सिंह एवं बिपिन कुमार

सस्यविज्ञान संभाग एवं जल प्रौद्योगिकी केंद्र
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110 012

जल जीवन के लिए एक प्रमुख आवश्यकता है और यह अर्थव्यवस्था के लिए भी अहम है। आज के दौर की सबसे गंभीर चुनौतियों में से एक जल संकट को दूर करना है। जल संसाधनों में कमी के साथ अच्छे जल की मांग भी रोजाना बढ़ रही है। जल आपूर्तिकर्ताओं पर अच्छी गुणवत्ता का जल उपलब्ध कराने का दबाव है और साथ ही हम उनके पुराने हो चुके संसाधनों से भी जूझ रहे हैं। इसके अतिरिक्त जल के उपयोग से जुड़ी एक प्रमुख चिंता का कारण इसकी बर्बादी और जल स्रोतों में बढ़ रहा प्रदूषण है, जिसके अत्यधिक जल दोहन के लिए मीटर की गड़बड़ी, रिसाव, पाइप का फूटना और औद्योगिक कचरे जैसे कारण जिम्मेदार हैं। जल एक बहुत उपयोगी पदार्थ है जल हमारे आहार का मुख्य घटक है। हमारा भोजन जल में पकाया जाता है। जल से हम अपनी प्यास बुझाते हैं। शरीर की साफ-सफाई के लिए हम जल से नहाते हैं। जल से ही अपने कपड़े धोते हैं। प्रत्येक व्यक्ति घर से लेकर, खेती या फिर औद्योगिक स्तर पर सभी जगह अनगिनत तरीकों से जल का उपयोग करते हैं। हर चीज या सेवा जिसका हम उपयोग करते हैं, उसे पैदा करने के लिए एक निश्चित मात्रा में जल की आवश्यकता होती है। जिन भी चीजों या सेवाओं का कोई व्यक्ति उपयोग करता है, उनसे उसका एक जल पदचिह्न होता है। अगर आप अपना जल पदचिह्न जानते हैं, तो आपको जिम्मेदारी से जीने के लिए बेहतर फैसले लेने में सहायता मिलेगी। प्रतिदिन हम जितना जल उपयोग करते हैं, उसका कुछ हिस्सा प्रत्यक्ष जल दिखाई देने वाला जल होता है अर्थात जो हम पीते हैं, नहाते हैं या कार, बर्तन या कपड़े धोने आदि में उपयोग करते हैं। इसके अतिरिक्त जो कुछ भी हम खाते हैं या उपयोग करते हैं, एक कप कॉफी से लेकर पूरे खाने तक, कपड़े जो हम पहनते हैं उनसे लेकर हमारे सेलफोन तक-सब कुछ बनाने में जल की आवश्यकता पड़ती है, इसी को अप्रत्यक्ष जल कहते हैं। इस अप्रत्यक्ष जल का प्रयोग हम सीधे तौर पर ना कर रहे हो, लेकिन कहीं ना कहीं इन चीजों को बनाने में जल उपयोग हुआ होता है।

हम अपने दैनिक जीवन जिन भी उत्पादों का प्रयोग करते हैं उनमें छुपा हुआ जल होता है, जिसको हम वर्चुअल वॉटर कहते हैं। कृषि और औद्योगिक उत्पाद को तैयार करने में जितने जल की खपत होती है, उसे आभासी जल कहा जाता है अर्थात् आभासी जल उत्पादों, सेवाओं और प्रक्रियाओं में छिपा हुआ जल है, जिसे लोग हर दिन खरीदते और उपयोग करते हैं। आभासी जल अक्सर किसी उत्पाद या सेवा के अंतिम उपयोगकर्ता द्वारा नहीं देखा जाता है, लेकिन उस जल का संपूर्ण मूल्य श्रृंखला में उपयोग किया जाता है, जिससे उस उत्पाद या सेवा का निर्माण संभव हो पाता है। आभासी जल की अवधारणा पहली बार 1990 के दशक में आई थी और जल संकट को देखते हुए भविष्य में इसके बढ़ने की आशा है। इसे यह समझने के उपयोग किया गया था कि जल की कमी वाले देश के लोगों की भोजन, कपड़े और आश्रय सहित जल-गहन उत्पादों जैसे आवश्यक सामान कैसे प्रदान कर सकते हैं। आईआईटी-गुवाहाटी के प्राध्यापक अनामिका बरुआ के अनुसार आभासी खाद्य और गैर-खाद्य वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन और व्यापार में सम्मिलित जल है। आभासी जल वह ''अदृश्य'' जल है जिसका उपभोग उत्पाद या सेवा के पूरे जीवनचक्र में किया गया है। प्रत्येक वस्तु के उत्पादन के पीछे आभासी जल की छाप होती है जिसे विज्ञान की भाषा में आभासी जल पदचिह्न (वर्चुवल वाटर फुट प्रिंट) कहा जाता है। प्राध्यापक एलन के अनुसार आभासी जल वह जल है, जो किसी वस्तु को उगाने में, बनाने में या उसके उत्पादन में लगता है। एक टन गेहूं उगाने में लगभग एक हजार टन जल लगता है। कभी-कभी इससे भी अधिक। इसी प्रकार एक कॉफी के लिए 140 लीटर जल खर्च हो जाता है। मांसाहारी वस्तुओं के उत्पाद में शाकाहारी से अधिक जल लगता है। एक कि.ग्रा मांस पैदा करने के पीछे लगभग 15 हजार 500 लीटर जल खर्च होता है। वहीं एक कि.ग्रा. अंडों में लगभग 3 हजार 300 लीटर जल

लगता है। औद्योगिक वस्तुओं के उत्पादन में भी आभासी जल सिद्धांत लागू किया जा सकता है। एक टन के भार वाली कार के पीछे लगभग चार लाख लीटर जल लगता है। एक अध्ययन के अनुसार एशिया में प्रत्येक मानव एक दिन में औसतन 1,400 लीटर आभासी जल का उपयोग करता है, जबकि यूरोप और अमेरिका में 4 हजार लीटर है। एक अन्य अध्ययन के अनुसार, जल और खाद्य सुरक्षा प्राप्त करने के लिए सतत् कृषि की योजना और कार्यान्यवन के लिए निरंतर जल की कमी वाले राज्य महत्वपूर्ण है। एक अध्ययन से पता चलता है कि, जल संकट वाले राज्यों में मीठे जल जलवायु रूप से उपयुक्त खाद्यान्नों का उत्पादन करने के लिए आभासी जल प्रवाह विश्लेषण का उपयोग करके उत्पादन क्षेत्रों में विविधता लाकर कम किया जा सकता है।

सबसे अधिक जल आवश्यकता वाली फसलें

प्रमुख निम्नलिखित फसलों को अपनी वृद्धि एवं विकास हेतु सबसे अधिक जल की आवश्यकता होती हैं, जैसे:-

धान की फसल

धान की फसल में काफी मात्रा में जल की आवश्यकता होती है। देखा जाए तो एक किलो धान की उपज में लगभग 3 से 4 हजार लीटर जल की आवश्यकता होती है।

कपास

कपास की फसल में भारत अनेक एशियाई देशों से कई ज्यादा आगे है, 1 कि.ग्रा. रूई उगाने में लगभग 22 हजार लीटर पानी की आवश्यकता होती है।

गन्ना

गन्ना उत्पादन में भारत दूसरे नंबर पर है और इसकी फसल में लगभग 1,500 से 2,500 मिलीमीटर जल की आवश्यकता होती है। एक कि.ग्रा. गन्ने को 1,500 से 3,000 लीटर तक जल की आवश्यकता होती है।

आभासी जल व्यापार

जल का सही उपयोग किसी उत्पाद को तैयार करने हेतु प्रयोग होता है। वर्चुअल वाटर ट्रेड उन लोगों के लिए है, जो जल की अधिक से अधिक मात्रा का प्रयोग कर बड़े पैमाने पर उपज की पैदावार कर रहे थे। उन्हें यह करने से रोकने व जल की कीमत समझाने के लिए वर्चुअल वाटर ट्रेड है। खाद्यान्न आयात करने वाले देश अप्रत्यक्ष रूप से निर्यात करने वाले देशों से जल संसाधनों की खरीद करते हैं। जिससे उनके पुनः उपयोग किए जाने वाले वैश्विक जल की बचत होती है और जब निर्यात करने वाले देश को आयात करने वाले देश से अधिक जल की कुशल होते हैं। एक रिपोर्ट के अनुसार, वर्ष 2015-2016 से 2020-21 के बीच भारत ने लगभग 3,850,431 लीटर्स ताजा जल अन्य देशों को बेचा था। जल का मुख्य रूप से तीन श्रेणी (कैटेगरी) मिनिरल, ऐरेटेड और नेचुरल इत्यादि में निर्यात हुआ है। वर्ष 2019-20 में सबसे अधिक जल भारत ने चीन को बेचा है। आश्चर्य की बात है कि भारत में वर्षा जल अन्य देशों खास तौर पर चीन से कहीं ज्यादा होता है।

जल पद चिह्न जल पद चिह्न का तात्पर्य मीठे जल की कुल मात्रा से जिसका उपयोग व्यक्ति या समुदाय द्वारा उपभोग की जाने वाली वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन की सीमा को दर्शाता है। खाद्य और अन्य उत्पादों का अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कारोबार किया जाता है, उनके जल पदचिह्न आभासी जल के रूप में उनका अनुसरण करते हैं। यह हमें उत्पादन के जल पद चिह्न को खपत के जल पद चिह्न से जोड़ने की अनुमति देता है, चाहे वे कहीं भी हों। आभासी जल प्रवाह हमें यह देखने में सहायता करता है कि कैसे एक देश में जल संसाधनों का उपयोग दूसरे देश में खपत का समर्थन करने के लिए किया जाता हैं।

प्रत्येक व्यक्ति घर से लेकर, खेती या फिर औद्योगिक स्तर पर सभी स्थान पर अनगिनत ढंग से जल का उपयोग करते हैं। प्रत्येक वस्तु या सेवा जिसका हम उपयोग करते हैं, उसे पैदा करने

के लिए एक निश्चित मात्रा में जल की आवश्यकता होती है। तो जल पद चिह्न, जल की इस खपत की ठीक-ठीक गणना करता है। जिन वस्तुओं या सेवाओं का कोई व्यक्ति उपयोग करता है, उनसे उसका एक जल पद चिह्न होता है। अगर आप अपना जल पदचिह्न जानते हैं तो आपको जिम्मेदारी से जीने के लिए बेहतर फैसले लेने में सहायता मिलेगी, विशेष कर तब जब भारत जल संकट से जूझ रहा है। भारत में 1 कि.ग्रा. गेहूं का जल पद चिह्न 1,800 लीटर है और 1 कि.ग्रा. धान का जल पद चिह्न 2,800 लीटर है।

सब्जी, फल, अनाज और मांस के जल पदचिह्न जो कुछ भी हम खाते हैं उन सब के जल पदचिह्न होते हैं। पत्ते वाले साग और अन्य सब्जियों का जल पदचिह्न सबसे कम होता है। सलाद पत्ता (130 लीटर/किलो), गोभी (200 लीटर/किलो), कद्दू (240 लीटर/किलो), खीरा (240 लीटर/किलो) और आलू (250 लीटर/किलो) इन सभी को पैदा करने में शेष सब्जियों की तुलना में बहुत कम जल की आवश्यकता होती है। फल जैसे कि संतरा (460 लीटर/किलो), सेब (700 लीटर/किलो), केला(860 लीटर/किलो) का जल पदचिह्न थोड़ा सा ज्यादा होता है। अनाज का जल पद चिह्न ज्यादा होता है, जैसे मक्का (900 लीटर/किलो), गेहूं (1300 लीटर/किलो), धान (2,800 लीटर/किलो), चीनी (1,500 लीटर/किलो) और मूंगफली (3,100 लीटर/किलो)। मांस का पदचिह्न सबसे अधिक होता है। क्योंकि मांस द्वितीय आहार हैं, इसका कारण यह है कि चिकन, सुअर और गाय स्वयं भोजन खाते हैं और उनके भोजन को उत्पन्न करने में पहले से ही अधिक मात्रा में जल का उपयोग होता है, जैसे मक्का।

जल पद चिह्न के अवयव (वाटर फुटप्रिंट के घटक)

उपयोग और स्रोतों के आधार पर, **जल पदचिह्न** (Water Footprint) को तीन प्रकारों में वर्गीकृत किया गया है:-इसके तीन घटक होते हैं, जैसे;

नीला जल (झीलों, नदियों, जलभृतों में ताजा जल)

उत्पादों का उत्पादन करने के लिए उपयोग की जाने वाली सतह और भूजल की मात्रा को संदर्भित करता है। इसमें इन स्रोतों से वाष्पित होने वाला जल भी सम्मिलित है। यह उस ताजा जल की मात्रा को संदर्भित करता है जो वैश्विक नीले जल के संसाधनों जैसे; झीलों, नदियों, तालाबों, जलाशयों और कुओं को उत्पादित करने वाले सामानों और सेवाओं या उपभोक्ताओं द्वारा उपभोग सेवाओं में वाष्पित में होता है।

हरा जल (मृदा में जमा वर्षा जल)

मृदा से वाष्पित वर्षा जल की मात्रा को संदर्भित करता है। यह उस ताजा जल की उस मात्रा को इंकित करता है जो वैश्विक हरित जल संसाधनों जैसे; नम भूमि, आर्द्रभूमि, मिट्टी, खेतों आदि से वाष्पित होता है, जो व्यक्ति या समुदाय द्वारा उपभोग किए जाने वाले सामानों और सेवाओं के उत्पादन में होता है। यह कृषि, बागवानी और वानिकी उत्पादों के लिए विशेष रूप से प्रासंगिक है।

ग्रे जल (प्रदूषित जल)

यह उस ताजा जल की मात्रा को संदर्भित करता है जो व्यक्ति या समुदाय द्वारा उपभोग किए गए सामानों और सेवाओं के उत्पादन करने के दौरान प्रदूषित होता है। उपयोग किए गए जल से प्रदूषकों को निकालने के लिए आवश्यक जल की मात्रा को संदर्भित करता है ताकि इसे गुणवत्ता में वापस लाया जा सके जो निर्धारित मानदंडों के अनुसार स्वीकार्य हो।

जल पद चिह्न (वॉटर फुटप्रिंट) को कम करने के उपाय

(क) प्रत्यक्ष जल पद चिह्न

1. जल से संबंधित कार्यों की आवृत्ति कम करके।
2. भूजल को फिर से रिचार्ज (भरने) के लिए जल संचयन को अपनाना चाहिए।
3. नल और शॉवर पर जल बचाने वाले उपकरण स्थापित करने चाहिए।

4. शॉवर की जगह बाल्टी से स्नान करना चाहिए।
5. घर की साफ सफाई के लिए प्रयोग किए हुए जल का प्रयोग करना चाहिए।
6. सीधे धान की बुआई, एस.आर.आई. जैसी कृषि प्रणाली एवं श्री अन्न की खेती को अपनाया जाना चाहिए।

(ख) अप्रत्यक्ष जल पद चिह्न

1. कम जल में पकने वाले भोजन का सेवन करना चाहिए।
2. मांस और पशु उत्पाद कम खाने चाहिए।
3. हानिकारक रासायन आधारित सफाई उत्पादों का उपयोग कम करके।
4. प्रयास करें कि उत्पादों का बार-बार प्रयोग में लाया जा सके।
5. कूडे-कचरे का प्रबंधन सही से करें ताकि यह भूजल को दूषित न करे।

सारांश

कृषि और औद्योगिक उत्पाद को तैयार करने में जितने जल की खपत होती है, उसे आभासी जल कहा जाता है। भारत, अमेरिका और चीन को गेहूं में आभासी जल के उपयोगकर्ताओं के रूप में जाना जाता है और बढ़ती खपत को ध्यान में रखते हुए आभासी जल का व्यापार देश की जल-निरंतरता में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जल पदचिह्न को स्वच्छ जल या मीठा जल की कुल मात्रा के रूप में संदर्भित किया जाता है जिसका उपयोग व्यक्ति या समुदाय द्वारा उत्पादित सामानों और सेवाओं के उत्पादन के लिए किया जाता है या व्यवसाय द्वारा उत्पादित किया जाता है। यह जल उपभोग के विनियमन का एक उपाय है जो मानव के जल उपभोग की मात्रा घन मीटर/प्रति व्यक्ति/प्रति वर्ष के संदर्भ में बताता है। 1,240 घन मीटर/व्यक्ति/वर्ष वैश्विक जल पदचिह्न है। जल पदचिह्न हमारे द्वारा उपयोग की जाने वाली प्रत्येक वस्तु और सेवा के उत्पादन में उपयोग किए गए जल की मात्रा को मापता है। इसे किसी एक प्रक्रिया के लिए मापा जा सकता है, जैसे कि धान उगाना, किसी उत्पाद के लिए, जैसे जींस की एक जोड़ी के लिए, हम अपनी कार में जो ईंधन डालते हैं, उसके लिए या पूरी बहु-राष्ट्रीय कंपनी के लिए।

स्मार्ट कृषि : आधुनिक कृषि का नया आयाम

संजय सिंह राठौर, कपिला शेखावत एवं रणबीर सिंह

सस्य विज्ञान संभाग

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110 012

संपूर्ण विश्व जीवित रहने के लिए कृषि पर निर्भर है। दुनिया की जनसंख्या में वृद्धि और लोगों को खाद्य सुरक्षा प्रदान करने की आवश्यकता को देखते हुए कृषि उत्पादन की मांग में वृद्धि हुई है। अब दुनिया के सामने सुरक्षा बनाए रखने हेतु उत्पादन को बढ़ाने और उत्पादकता में वृद्धि लाना सबसे बड़ी चुनौती है। स्मार्ट खेती बेहतर कृषि प्रौद्योगिकियों की शुरुआत के साथ एक उज्ज्वल भविष्य की संभावना को दर्शाती है, जिसका उद्देश्य खेती में कम लागत, बेहतर दक्षता और उच्च गुणवत्ता के उत्पादों का उत्पादन करना है। भारत की बढ़ती जनसंख्या को खाद्यान्न उपलब्ध कराने में स्मार्ट खेती की भूमिका धीरे-धीरे बढ़ रही है। स्मार्ट खेती अनुसंधान का उद्देश्य संपूर्ण कृषि प्रबंधन के लिए एक उत्तम पद्धति को परिभाषित करता है, जो संसाधनों के संरक्षण और सीमित लागत पर अधिकतम उपज और आय प्राप्त करने में सहायक है। स्मार्ट खेती में आईसीटी की आधुनिक तकनीकियों का समन्यवन कृषि कार्यों हेतु किया जाता है। इसमें अत्याधिक तकनीकियों का प्रयोग कर कृषि लागत को कम से कम रखते हुए सघन खेती की पद्धतियों को अपनाया जाता है। इनमें विशेष रूप से ड्रोन उपयोग, सेंसर फार्म आधारित मोबाइल परामर्श से संबंधित तकनीकियों का उल्लेख किया जा सकता है। इसके अंतर्गत न्यूनतम आदानों और सीमित भूमि का उपयोग करते हुए अधिकाधिक उपज प्राप्ति का लक्ष्य रखा जाता है। इसके लिए सही मात्रा में समस्त आवश्यक पोषक तत्वों की पूर्ति पौधो को की जाती है। इन तत्वों की मात्रा का निर्धारण मृदा परीक्षण और पौधों की नवीन किस्मों के अनुसार किया जाता है। स्मार्ट खेती की अवधारणा को तीन हिस्सों में विभाजित कर देखा जा सकता है। इनमें प्रबंधन सूचना प्रणाली, सटीक खेती और स्वचालित खेती (आटोमेशन और राबोटिक्स) सम्मिलित है। 21 वीं शताब्दी के किसानों को अब जीपीएस, मृदा स्कैनिंग, आंकड़ा प्रबंधन तथा इंटरनेट आधारित प्रौद्योगिकियां सुलभ है और इनके द्वारा कीटनाशकों एवं उर्वरकों की दक्षता बढ़ा सकते हैं। इसके अतिरिक्त अब भारतीय किसान स्मार्ट फोन, आईटी, रोबोटिक्स, ड्रोन, मशीन लर्निंग इत्यादि तकनिकियों का प्रयोग करने में रुचि दिखा रहे हैं। भारतीय कृषि परिदृश्य में स्मार्ट कृषि आज समय की आवश्यकता के साथ भविष्य में बड़े पैमाने पर उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

स्मार्ट कृषि एवं खेती का अर्थ

स्मार्ट बनने का तात्पर्य यह है कि सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से हम उपयोग में आने वाली हर वस्तु और सेवाओं का दक्षतापूर्वक प्रयोग कर सकें और उसकी निरंतरता को भी बनाए रखें।

स्मार्ट कृषि से तात्पर्य वर्तमान समय की प्रौद्योगिकी से प्रबलित व यंत्रीकृत कृषि पद्धति के अनुप्रयोग से है जो लचीला होने के साथ-साथ आत्मनिर्भरता प्राप्त करने में सहायक है। कृषि क्षेत्र को आत्मनिर्भर बनाने और इसे आगे भी कायम रखने के लिए सरकार दूरगामी सोच के साथ आगे बढ़ रही है और इस दिशा में प्राकृतिक खेती को प्रोत्साहन एक अहम कदम है।

स्मार्ट खेती एक कृषि प्रबंधन अवधारणा को संदर्भित करती है जो कृषि उत्पादों की गुणवत्ता और मात्रा बढ़ाने के उद्देश्य से आधुनिक तकनीक का उपयोग करती है। इस स्मार्ट खेती में उपग्रह आधारित विशिष्ट फसल प्रबंधन, इंटरनेट ऑफ थिंग्स, आधारित उपकरणों जैसे सेंसर, रोबोट, ड्रोन आदि के प्रयोग के आधार पर एक कृषि प्रबंधन अवधारणा सम्मिलित है। छोटे और बड़े पैमाने पर वर्षों से स्मार्ट खेती सभी किसानों के लिए उपयोगी हो गई है, इसमें किसानों को प्रौद्योगिकियों और उपकरणों तक पहुंच मिलती है, जो खेती की लागत को कम करते हुए उत्पादों की गुणवत्ता और मात्रा को अधिकतम करने में सहायक है।

स्मार्ट खेती के मुख्य सिद्धांत

समार्ट खेती में सेंसर द्वारा आंकड़ों को एकत्र किया जाता है और मौसम की जैसी स्थिति हो, मृदा की गुणवत्ता, फसल की वृद्धि की प्रगति या मवेशियों का स्वास्थ्य आदि से संबंधित आंकड़ों को एकत्र करते हैं। इन आंकड़ों का उपयोग कृषि व्यवसाय की स्थिति को सामान्य रूप से ट्रैक करने के लिए किया जाता है जिसमें किसानों का प्रदर्शन, उपकरण दक्षता आदि भी सम्मिलित होती है और यह एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

आंकड़ों पर आधारित स्मार्ट खेती से आंतरिक प्रक्रियाओं पर बेहतर नियंत्रण होता है और परिणामस्वरूप उत्पादन का जोखिम कम होता है। उत्पादन के जोखिम दूर करने की क्षमता किसान को बेहतर उत्पाद वितरण की योजना बनाने के लिए प्रेरित करती है। किसान को इस बात की जानकारी फसल की कटाई से पूर्व ही हो जाती है कि वह कितनी फसल काटने जा रहा है और वह यह भी सुनिश्चित कर सकते है कि कितने उत्पादन को बाजार भेजना है और कितना भंडार में रखना है। स्मार्ट खेती में जब उत्पादन पर नियंत्रण बढ़ता है, तो लागत प्रबंधन और अपशिष्ट में कमी आती है।

स्मार्ट खेती के तकनीकी अवयव

स्मार्ट खेती में मुख्यतः निम्नलिखित तकनीकों का अलग-अलग प्रकार से उपयोग समाहित है, जैसे;

1. सेंसर जल, प्रकाश, आर्द्रता और तापमान प्रबंधन तथा मृदा स्कैनिंग के लिए विभिन्न प्रकार के सेंसर का उपयोग किया जाता है।
2. दूरसंचार प्रौद्योगिकयां जैसे उन्नत नेटवर्किंग और जीपीएस।
3. वस्तुओं के इंटरनेट के नवाचार (आईओटी) आधारित समाधान, रोबोटिक्स और स्वचालन को सक्षम करने के लिए हार्डवेयर और सॉफ्टवेयर।
4. निर्णय लेने और कीट, रोग एवं मौसम आधारित भविष्य अनुमान हेतु आंकड़ा विश्लेषण उपकरण।
5. फसल की पैदावार, मृदा-मानचित्र, जलवायु परिवर्तन, उर्वरक अनुप्रयोगों, मौसम आंकड़े, मशीनरी और पशु स्वास्थ्य से संबंधित महत्वपूर्ण आंकड़ों का संग्रह।
6. दूरस्थ निगरानी एवं लगातार आंकड़े संग्रह करने हेतु उपग्रह और ड्रोन आधारित आईटी पद्धति।

स्मार्ट खेती हेतु उन्नत स्मार्ट तकनीकियां

स्मार्ट खेती आधुनिक खेती की पर्याय बन चुकी है, अतः इसकी परिकल्पनाओं को मूर्त रूप देना बदलते परिवेश में खेती के लिए आवश्यक है। इसके लिए निम्नलिखित तकनीकियों का ज्ञान किसानों होना आवश्यक है, जैसे;

जलवायु स्मार्ट तकनीकियां

मौसम के पूर्वानुमान की जानकारी किसानों को उनके मोबाइल फोन पर संदेश द्वारा दी जाती है। किसानों को फसल के

कीटों से सुरक्षा, बीमारी, सिंचाई इत्यादि का जानकारी देना। इस तरह की एसएमएस की सेवाएं कृषि विश्वविद्यालय, कृषि विज्ञान केंद्र, कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय के एम किसान पोर्टल से दी जा रही है। जिससे तात्कालिक फसल संबंधी विभिन्न पहलुओं पर निर्णय लेने में सहायता मिलती है।

जल स्मार्ट तकनीकियां

धान की सीधी बुआई, मक्का फसल विविधीकरण खेती, मेड़ के ऊपर बुआई, भूमि समतलीकरण, धान में वैकल्पिक जल प्रबंधन एवं जीरो टिलेज तकनीक सेंसर आधारित जल प्रबंधन तकनीक कूड़ एवं मेड़ पर बुआई प्रणाली इत्यादि की जानकरी होनी चाहिए।

पोषक तत्व स्मार्ट तकनीकियां

खेत में पोषक तत्व प्रबंधन, धान एवं गेहूं में पोषक तत्व विशेषज्ञ सॉफ्टवेयर के द्वारा उर्वरक की मात्रा का निर्धारण, ग्रीन सीकर से नाइट्रोजन मांग की गणना कर प्रयोग, दलहनों का दो धान्य फसलों के बीच समावेश इत्यादि की जानकारी दी जाती है।

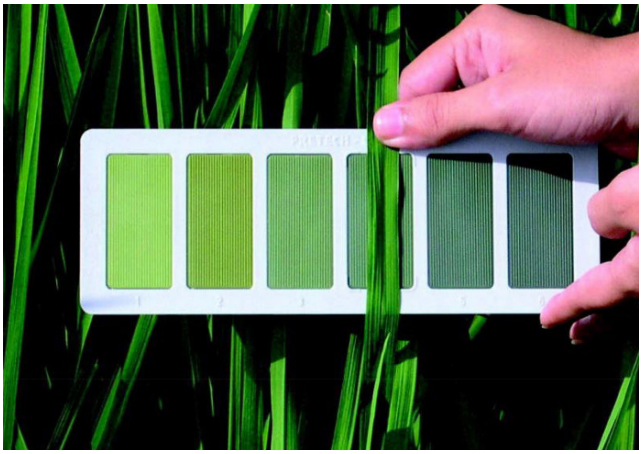

ऊर्जा स्मार्ट तकनीकियां

कम ईंधन की खपत से अधिक खेत की बुआई करना जैसे जीरो टिलेज, रोटरी डिस्क सीडड्रिल से बुआई करना, टर्बो हैप्पी सीडर से अधिक फसल अवशेषों में बुआई करना। फसल अवशेष का प्रबंधन, धान की सीधी बुआई करना इत्यादि।

ज्ञान स्मार्ट तकनीकियां

आधुनिक खेती ज्ञान आधारित होती जा रही है। अतः क्षमता विकास के द्वारा किसानों और उनके साथ काम करने वाली संस्थाओं के सदस्यों को समय-समय पर विभिन्न प्रशिक्षण द्वारा कुशल बनाने का प्रयास किया जाता है। ज्ञान स्मार्ट में सूचना एवं प्रसारण तकनीकियां, महिला सशक्तिकरण व क्षमता विकास मुख्य तकनीकियों को सम्मिलित कर ज्ञान का शीघ्र संचार आवश्यक है। इसमें इंटरनेट आधारित विभिन्न ऐप का प्रयोग आवश्यक है।

स्मार्ट खेती का उपयोग

स्मार्ट खेती एक प्रबंधन अवधारणा है जो कृषि उद्योग को उन्नत तकनीक का लाभ उठाने के लिए बुनियादी ढांचा प्रदान करने पर केंद्रित है। जिसमें बड़े आंकड़े, मौसम और इंटरनेट ऑफ थिंग्स शामिल हैं। जो संचालन पर नजर रखने, स्वचालित करने और विश्लेषण करने के लिए उपयोग होते हैं। स्मार्ट खेती में उपग्रह आधारित उपकरणों जैसे- सेंसर, रोबोट, ड्रोन आदि के प्रयोग से उत्तम खेती, उत्पादकता और आयु बढ़ाने, जलवायु के अनुकूल खेती और उच्च उत्पादन के साथ फसलों में अंतर और क्षेत्र परिवर्तनशीलता को देखने, मापने और आंकड़े के विश्लेषण के आधार पर अच्छे कृषि प्रबंधन को अपनाकर स्मार्ट खेती की जा सकती है।

स्मार्ट खेती तकनीकियों का कृषि में उपयोग

फसल जल प्रबंधन

कृषि गतिविधियों को कुशल ढंग से करने के लिए पर्याप्त जल आवश्यक है। सिंचाई के लिए उचित जल प्रबंधन सुनिश्चित करने एवं जल की बर्बादी को कम करने के लिए कृषि आईओटी को वेबमैप सर्विस और सेंसर ऑब्जर्वेशन सर्विस के साथ समेकित किया गया है।

सटीक कृषि

मौसम की जानकारी के संदर्भ में उच्च सटीकता की आवश्यकता होती है, जिससे फसल के नुकसान की संभावना कम हो जाती है। कृषि आईओटी किसानों को मौसम पूर्वानुमान, मृदा की गुणवत्ता, श्रम की लागत और कीट एवं रोगों के संदर्भ में वास्तविक समय के आंकड़ों की समय पर पहुंच सुनिश्चित करता है।

समेकित कीट प्रबंधन

कृषि आईओटी पद्धति तापमान, नमी, पौधों की वृद्धि और कीटों के स्तर की उचित जीवन आंकड़ों की निगरानी के माध्यम से किसानों को सटीक वातावरण आंकड़े प्रदान करता है ताकि उत्पादन के दौरान उचित देखभाल की जा सके।

खाद्य उत्पादन एवं सुरक्षा

कृषि आईओटी पद्धति कृषि उत्पाद भंडारण हेतु गोदाम के तापमान, शिपिंग परिवहन प्रबंधन प्रणाली जैसे विभिन्न मापदंडों की सटीक निगरानी करती है और क्लाउड आधारित रिकॉर्डिंग प्रणाली को भी समेकित करती है।

उपरोक्त तकनीकों के बीच कनेक्शन इंटरनेट ऑफ थिंग्स है- यह सेंसर और मशीनों के बीच कनेक्टिविटी के लिए एक तंत्र है, जिसके परिणामस्वरूप एक जटिल प्रणाली प्राप्त होती है जो प्राप्त आंकड़ों के आधार पर आपके खेत का प्रबंधन करती है। इस प्रणाली में किसान अपने खेतों की, ग्रीन हाउस, बाग आदि की दूर से अपने टैबलेट, फोन या अन्य मोबाइल डिवाइस के माध्यम से निगरानी कर सकते हैं और भविष्य की रणनीति संबंधित निर्णय ले सकते हैं।

स्मार्ट खेती का उपयोग करके प्रक्षेत्र पर कुछ प्रक्रियाएं

आंकड़े संग्रह

खेत में सभी महत्वपूर्ण स्थानों पर स्थापित सेंसर मृदा, हवा आदि के बारे में आंकड़े एकत्र और संचारित करते हैं।

निदान

एकत्र किए गए आंकड़ों द्वारा विश्लेषण किया जाता है और निगरानी की गई वस्तु या प्रक्रिया की स्थिति के संबंध में निष्कर्ष निकाले जाते हैं। संभावित समस्याओं की पहचान की जाती है।

निर्णय

पिछले चरणों में पहचानी गई समस्याओं के आधार पर, सॉफ़्टवेयर प्लेटफ़ॉर्म और या प्लेटफ़ॉर्म का प्रबंधन करने वाला मानव उन कार्यों पर निर्णय लेता है, जिन्हें लेने की आवश्यकता होती है।

क्रियाएं

पिछले चरण में पहचानी गई क्रियाएं निष्पादित की जाती हैं। सेंसर द्वारा मृदा, हवा, नमी आदि पर एक नया माप किया जाता है और पूरा चक्र फिर से शुरू हो जाता है।

स्मार्ट खेती से होने वाले प्रमुख लाभ

उच्च फसल उत्पादकता

स्मार्ट खेती को अपनाने से खेती में बेहतर तकनीकों का उपयोग उत्पादकता में सुधार करता है, क्योंकि इसमें आदानों को बढ़ने और अपव्यय को कम करने पर ध्यान दिया जाता है।

कीटनाशकों, उर्वरकों और जल के उपयोग में कमी

परंपरागत कृषि में किसान जल, उर्वरकों और कीटनाशकों की मात्रा निर्धारित किए बिना एवं कई बार आवश्यकता न होने पर भी उनका उपयोग करते आए हैं। हालांकि, स्मार्ट कृषि, पानी और अन्य रसायनों को जब भी और जहां भी उनकी आवश्यकता होती है और सही मात्रा में उपयोग करने की क्षमता देती है। इन रसायनों के कम उपयोग से खेती की लागत कम हो जाती है तथा खाद्य पदार्थों में भी कमी आती है।

पर्यावरण पर कम प्रभाव

आजकल, स्मार्ट खेती ने रसायनों, पानी और खेत में उपयोग होने वाले अन्य तत्वों की कम से कम मात्रा के द्वारा उत्पादकता बढ़ाने के बेहतर तरीकें पेश किए हैं, निहितार्थ यह है कि हानिकारक रसायनों के अत्यधिक आवश्यकता वाले स्थान पर संयमित उपयोग के द्वारा पर्यावरण को खराब होने से बचाया जा सकता है।

किसानों और श्रमिकों की सुरक्षा में वृद्धि

स्मार्ट खेती मशीनों और बेहतर प्रौद्योगिकियों के उपयोग का परिचय देती है, जिससे श्रमिकों की भागीदारी इस क्षेत्र में सीमित हो जाती हैं अंततः अब किसानों भी श्रमिकों की सुरक्षा के बारे में निश्चित रह सकते हैं।

भूजल और नदियों में रसायनों का कम निपटान

स्मार्ट खेती रसायनों के उपयोग और पर्यावरण के अनुकूल कृषि पद्धतियों को अपनाने के लिए प्रोत्साहित करती है। इसका तात्पर्य यह है कि नदियों में और सामान्य रूप से पर्यावरण में कोई भी हानिकारक रसायन जमा नहीं होगा।

भारत में स्मार्ट खेती की संभावनाएं

स्मार्ट खेती की अपार संभावनाएं हैं तथा यह भारत में कृषि आयाम को बदल सकती है। स्मार्ट खेती से विकासशील और विकसित दोनों देशों में बड़े और छोटे पैमाने के किसानों के बीच की खाई को कम करने की संभावना है। कृषि में प्रौद्योगिकी को अपनाने में तकनीकी प्रगति, इंटरनेट में वृद्धि और स्मार्टफोन की शुरूआत ने बेहद योगदान दिया है। विभिन्न देश इन प्रौद्योगिकियों के मूल्य को समझते हैं और अधिकांश देश सटीक कृषि तकनीकों के कार्यान्वयन को बढ़ावा देने के लिए उत्सुक हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि परंपरागत रूप से प्रचलित अधिकांश कृषि कार्यों में आजकल काफी बदलाव आया है। मशीनों, उपकरणों, सेंसर और सूचना प्रौद्योगिकी के उपयोग के रूप में स्मार्ट खेती तकनीकों और कार्यप्रणालियों को अपनाना आदि तकनीकी उन्नति के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। वर्तमान में किसान प्रतिबिम्ब, नमी और तापमान सेंसर, जीपीएस तकनीक और रोबोट जैसी अत्याधुनिक तकनीकों का उपयोग करते हैं। इस तरह की तकनीक खेती को न केवल लाभदायक उपक्रम बनाती है, बल्कि पर्यावरण के अनुकूल, सुरक्षित और कुशल भी बनाती है।

सारांश

स्मार्ट खेती एक उत्तम खेती अवधारणा है, जिसे अगर सही तरीके से लागू किया जाए तो किसानों को बेहतर उत्पादन, बेहतर गुणवत्ता और कम लागत सहित कई लाभ मिल सकते हैं। हालांकि, इस तरह के नवाचार के लिए पूंजी, ज्ञान और कौशल की आवश्यकता होती है। स्मार्ट खेती तकनीक उपज के अनुमान, स्थानीय मौसम पूर्वानुमान, बीमारियों और आपदा की संभावनाओं की जानकारी देती है। यह खेती की आवश्यकताओं के उचित विश्लेषण के साथ सही कार्य योजना प्रस्तुत करती है। लाभदायक और टिकाऊ खेती के लिए स्मार्ट खेती का उपयोग आवश्यक है। रिमोट सेंसिंग, जीपीएस टेक्नोलोजी, आर्टिफिशियल इंटेलीजेंस, मशीन लर्निंग, कनेक्टेड सेंसर और आईओटी जैसी उभरती हुई प्रौद्योगिकी का उपयोग करके कृषि को स्मार्ट बनाया जा सकता है।

जड़-गांठ सूत्रकृमि, *मैलोइडोगाइन एंटरोलोबी* : अमरूद की खेती में उभरती अत्यंत गंभीर समस्या

राशिद परवेज़ एवं पंकज

सूत्रकृमि संभाग

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान सस्थांन, नई दिल्ली 110 012

वैश्विक स्तर पर सभी पादप-परजीवी सूत्रकृमियों में जड़-गांठ सूत्रकृमि *मैलोइडोगाइन*/स्पिसीज अत्याधिक हानिकारक सूत्रकृमि माने जाते हैं। एक अनुमान के मुताबिक यह दुनिया भर में 5% फसल हानि के लिए अकेले जिम्मेदार हैं। विश्व में *मैलोइडोगाइन* जीनस की लगभग 100 से अधिक उपजातियां पाई जाती हैं, जिनमें केवल चार प्रजातियां, *एम. इन्कोग्निटा, एम. जावानिका, एम. एरेनेरिया* और *एम. हैपला* प्रमुख हैं। परंतु हाल के दिनों में, जड़-गांठ सूत्रकृमि की एक अन्य उपजाति *मैलोइडोगाइन एंटरोलोबी* भारत में ही नही बल्कि दुनिया भर के उपोष्णकटिबंधीय और उष्णकटिबंधीय जलवायु वाले देशों में कई फसलों को आर्थिक हानि पहुंचाने वाली एक बड़ी समस्या बनकर उभरी है।

अमरूद (*सीडियम गुआजवा*) भारत में आम, केला और नींबू वर्गीय फलों के बाद चौथा सबसे महत्वपूर्ण व्यावसायिक फल है। पिछले गत वर्षों में अमरूद की फसल को पादप-परजीवी सूत्रकृमियों, विशेषकर जड़-गांठ सूत्रकृमि *मैलोइडोगाइन एंटरोलोबी* की गंभीर समस्या देखी गई है, जिसने अब भयानक रूप ले लिया है। भारत में इस सूत्रकृमियों के कारण अमरूद की फसल को 28% तक हानि हो सकती है, जिसकी अनुमानित राशि रु. 2350.88 मिलियन (32.65 मिलियन अमेरिकी डालर प्रति वर्ष) है।

मैलोइडोगाइन एंटरोलोबी को मूल रूप से चीन के पकारा ईयरपॉड पेड़ (*एंटरोलोबियम कॉन्टोरटिसिलिकम*) की जड़ों से संचित किया गया था। उस समय इसकी पहचान मुख्य रूप से मादा पेरिनियल पैटर्न के आधार पर *मैलोइडोगाइन इनकॉग्निटा* के रूप में की गई थी। परंतु यांग और ईसेनबैक ने 1983 में अध्ययन से पता चला कि इसके पेरिनियल पैटर्न और *मैलोइडोगाइन इनकॉग्निटा* के पेरिनियल पैटर्न में कुछ भिन्नता होती है। पेरिनियल पैटर्न, स्टाइललेट आकृति, मादा में उत्सर्जन छिद्र की स्थिति, नर के सिर की आकृति और दूसरे अवस्था के शिशु के सिर और पूंछ की आकृति, *एम. एंटरोलोबी* को जड़-गांठ सूत्रकृमियों की अन्य वर्णित उपजातियों से अलग करने वाले प्रमुख लक्षण हैं। जड़-गांठ सूत्रकृमि की एक अन्य उपजाति, *मैलोइडोगाइन मायागुएन्सिस* को प्यूर्टो रिको से बैंगन (*सोलनम मेंलोंगेना*) की जड़ों से सचित किया गया, जो एस्टरेज़ अध्ययन के आधार पर *मैलोइडोगाइन एंटरोलोबी* से काफी मिलती जुलती थी।

एम. एंटरोलोबी का विस्तार

एम. एंटरोलोबी को भारत के तमिलनाडु राज्य से वर्ष 2016 में पहली बार रिपोर्ट किया गया था। वर्तमान में अमरूद की रोपण सामग्री के माध्यम से भारत के 11 अन्य राज्यों जैसे- आंध्र प्रदेश, हरियाणा, गुजरात, कर्नाटक, केरल, मध्य प्रदेश, राजस्थान, तेलंगाना, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड एवं पश्चिम बंगाल में इसका प्रसार हो चुका है। भारत के तमिलनाडु राज्य में अमरूद की खेती करने वाले क्षेत्रों का सर्वेक्षण किया गया एवं वहां सर्वेक्षण किए गए सभी नौ जिलों में इसकी उपस्थिति पाई गई। मध्य प्रदेश, राजस्थान और उत्तर प्रदेश में नव रोपित अमरूद के बागों और नर्सरी में *एम. एंटरोलोबी* की गंभीर समस्या देखी गई है। हाल ही में, *एम. एंटरोलोबी* को भारत में राजस्थान के लूनी नदी बेसिन और मध्य प्रदेश के रतलाम जिले में पाया गया है। *एम. एंटरोलोबी* को अमरूद के अतिरिक्त अधिकांश सब्जियों, सजावटी पौधे और खरपतवार फसल के राइजोसिफीयर में भी पाया गया है।

एम. एंटरोलोबी का विकास

अमरूद पर *एम. एंटरोलोबी* का जीवन चक्र, जड़-गांठ सूत्रकृमियों की अन्य वर्णित उपजातियों के समान ही है। जड़ों में प्रवेश करने पर, दूसरे अवस्था के शिशु संवहनी ऊतकों के पास

आहार कोशिकाओं या नर्स कोशिकाओं का निर्माण शुरू करते हैं। सूत्रकृमियों के पौधे पर संक्रमण के 5वें दिन से आहार स्थल पर सिर के आस पास संवहनी कोशिकाओं में सूजन शुरू हो जाती है। दूसरी से तीसरी अवस्था के शिशु और आगे तीसरी से चौथी अवस्था के शिशु तक के विकास में क्रमशः 13 और 19 दिन लगते हैं। मोती जैसी सफेद, नाशपाती के आकार की और कभी-कभी गोलाकार वयस्क मादाएं एक जिलेटिनस मैट्रिक्स (अंडे की थैली) में औसतन 150 अंडे जमा करती हैं। जड़ों में अंडे की थैली जड़ से बाहर निकली होती है लेकिन द्वितीयक और प्राथमिक जड़ों पर बनी मिश्रित जड़ के भीतर बंद होती है। अनुकूल परिस्थितियों में अमरूद पर *एम. एंटेरोलोबी* का जीवन-चक्र 4-5 सप्ताह में पूर्ण हो जाता है।

लक्षण

अमरूद पर *एम. एंटरोलोबी* संक्रमण के कारण जमीन के ऊपर के सामान्य लक्षणों में पत्तियों का पीला पड़ना, पत्तियों का झड़ना, पौधे का बौनापन, पत्तियों का मुड़ना व झुलसना (सूत्रकृमियों जब पानी की कमी), फलों का धीमी गति से पकना, फलों का आकार कम होना, शाखाओं का सूखना, और पैदावार में कमी आना शामिल हैं (चित्र – 1)। भूमिगत लक्षणों में जड़ों पर चकते, आंशिक रूप से जड़ों में सड़ान और कुछ मामलों में क्षतिग्रस्त जड़ों के अतिरिक्त अमरूद के पेड़ों के कॉलर और तने के निचले हिस्सों पर देखे गए निशान तथा सबसे महत्वपूर्ण पौधों में गंभीर संक्रमण के कारण जड़ों में 5 सेमी व्यास तक की भिन्न-भिन्न गॉल (गांठे) वन जाती हैं (चित्र – 2)।

अमरूद के फलों का गिरना

अमरूद के फलों में असमय गिरावट दो तरह से होती है। सबसे पहले, पौधे धीरे-धीरे सूखते हैं, और अंततः पौधे को मरने में कई महीने लग जाते हैं। ऐसे मामलों में आमतौर पर अकेले सूत्रकृमियों के संक्रमण को जिम्मेदार ठहराया जाता है। दूसरा, मुरझाने के लक्षण आक्रामक रूप से प्रकट होते हैं, और पौधे कुछ ही हफ्तों में नष्ट हो जाते हैं। ऐसे मामलों में, सूत्रकृमियों की भागीदारी के साथ या उसके बिना, कवक का द्वितीयक संक्रमण मुख्य रूप से पौधों की मृत्यु के लिए जिम्मेदार होता है। इसके अतिरिक्त कई फफूंद रोगजनक जैसे कि *फ़्यूसैरियम ऑक्सीस्पोरम* एफ. एस.पी. *पीसीडी*, *एफ. सोलानी*, *मैक्रोफोमिना फेसियोली*, *माइकोस्पोरियन पीसीडी*, *स्यूडोमोनस* स्पिसीज, *वर्टिसिलियम एल्बोएट्रम*, *राइजोक्टोनिया बटाटिकोला*, *सेफलोंस्पोरियम* स्पिसीज, *ग्लियोक्लाडियम रोजियम* और पादप परजीवी सूत्रकृमि जैसे *मैलोइडोगाइन* स्पिसीज, *हेलिकोटिलेनकस डायहिस्टेरा* और *प्राटाईलेनकस* स्पिसीज अमरूद के पौधे के मुरझाने में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से शामिल है।

प्रबंधन तकनीकियां

अमरूद की फसल के जड़-गांठ सूत्रकृमि *मैलोइडोगाइन-फ्यूसेरियम* रोग कॉम्प्लेक्स के प्रबंधन के लिए निम्नलिखित कई तरीके हैं।

खेत प्रबंधन

भारत में एकमात्र पंजीकृत सूत्रकृमिनाशक कार्बोफ्यूरान 3 जी (फुराडान 3 जी®) का उपयोग करके अमरूद की फसल को हानि पहुंचाने वाले सूत्रकृमियों का प्रबंधन कर सकते हैं। फ्लुएनसल्फोन और फ्लुओपाइरम को अमरूद की फसल को हानि पहुंचाने वाले सूत्रकृमियों के प्रति इन नए हरित रसायनों (दानेदार या तरल फॉर्मूलेशन) को सूत्रकृमिनाशक के रूप में पंजीकृत किया गया है। इनको इस्तमाल करने के लिए सबसे पहले, ड्रिपर्स के नीचे से थोड़ी मिट्टी हटाकर आवश्यक मात्रा में कण या तरल घोल गड्ढे में डालते है, फिर इसे वापस हटाई गई मिट्टी से ढक दें, और ड्रिप के माध्यम से नियमित सिंचाई फिर से शुरू करें। यदि ड्रिप सिंचाई उपलब्ध नहीं है, तो आवश्यक रासायनिक मात्रा को बेसिन क्षेत्र में डाला जा सकता है, इसके बाद सिंचाई की जा सकती है।

अमरूद की फसल को हानि पहुंचाने वाले जड़-गांठ सूत्रकृमि *एम. एंटरोलोबी* को नियंत्रित करने के लिए *पी. क्लैमाइडोस्पोरिया* को अन्य प्रबंधन विधियों के साथ एकीकृत करके सूत्रकृमियों की रोकथाम की जा सकती है।

अगर अमरूद की फसल जड़-गांठ सूत्रकृमि *एम. एंटरोलोबी* से गंभीर रूप से प्रभावित है या फसल पूरी तरह नष्ट हो चुकी है तो अमरूद के पेड़ों की जगह काजू, साइट्रस, नारियल, अंगूर, जाबुटिकाबा, आम, शहतूत, पपीता, पैशन फ्रूट, सैपोडिला, और स्ट्रॉ-बेरी की खेती उत्पादकों के लिए एक किफायती विकल्प हो सकता है।

एम. एंटरोलोबी संक्रमित अमरूद के पौधों के आधारीय भाग के समीप प्याज (*एलियम सेपा*) और लहसुन (*एलियम सैटिवम*) उगाने से सूत्रकृमि की संख्या में कमी आती है। इन दोनों फसलों

में पेरोक्सीडेज और फेनिलएलनिन अमोनिया-लिसेज़ के अलावा फिनोल की मात्रा अधिक पाई जाती है।

एम. एंटरोलोबी संक्रमित अमरूद के पौधों के आधारीय भाग की मिट्टी को निकालकर गड्ढा बनाकर उसमें पानी भरकर छोड़ दे, ततपश्चात पानी को गड्ढे से बाहर निकाल कर खेत से दूर फैक दें तथा पुन: मिट्टी को गड्ढे में भर दें। ऐसा करने से सूत्रकृमि की संख्या में कमी आती है।

पौधशाला प्रबंधन

पौधशाला में खेत की मिट्टी के बजाए मिट्टी रहित माध्यम का उपयोग करके सूत्रकृमि और अन्य मृदा जनित रोगज़नक़ों की रोकथाम की जा सकती है। इस माध्यम से पौध उत्पादन की लागत बढ़ने की संभावना है, लेकिन व्यावसायिक रूप से किए जाने पर लागत कारक ज्यादा बाधा नहीं है। हालांकि, पौधों को समय-समय पर पोषक तत्व प्रबंधन की आवश्यकता होती है।

निष्कर्ष

इससे यह निष्कर्ष निकला कि अमरूद की फसल को हानि पहुंचाने वाले जड़-गांठ सूत्रकृमि *एम. एंटरोलोबी* अपनी व्यापक मारक क्षमता और उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में वैश्विक वितरण के कारण एक 'मामूली' से बड़ी समस्या के रूप में उभर रहा है। अत: इसे वक्त रहते नियंत्रण करने की आवश्यकता है।

चित्र – 1: जड़-गांठ सूत्रकृमि *एम. एंटरोलोबी* ग्रसित अमरूद का पौधा

चित्र – 2: जड़-गांठ सूत्रकृमि *एम. एंटरोलोबी* ग्रसित अमरूद के पौधे की जड़

भारत में पोषण सुरक्षा के लिए दलहन क्रांति को बनाए रखने की रणनीतियां

मुरलीधर एस अस्की, ज्ञान प्रकाश मिश्रा, प्राची एस यादव, सोमा गुप्ता एवं हर्ष कुमार दीक्षित

आनुवंशिकी संभाग

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110 012

सारांश

दालें भारतीय कृषि के लिए महत्वपूर्ण हैं, जो पोषण, आय, मृदा स्वास्थ्य और टिकाऊ खेती प्रदान करती हैं। उनके महत्व को स्वीकार करना और उनके विकास और उपभोग को प्रोत्साहित करना, टिकाऊ खाद्य प्रणाली के लिए आवश्यक है। भारत में दलहन क्रांति को प्रौद्योगिकी और अनुसंधान, किसान समर्थन और प्रशिक्षण, सिंचाई और जल प्रबंधन, बाजार संपर्क, मूल्य संवर्धन और प्रसंस्करण, प्रचार और जागरूकता सहायक सरकारी नीतियों में निवेश के माध्यम से कायम रखा जा सकता है। दलहन उत्पादकता में सुधार के लिए, बीज चयन और उपलब्धता, मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन, जल प्रबंधन, एकीकृत कीट प्रबंधन, पोषक तत्व प्रबंधन, फसल सुरक्षा, मशीनीकरण, प्रौद्योगिकी क्षमता निर्माण, प्रशिक्षण, ऋण और बीमा तक पहुंच, बाजार लिंकेज और मूल्य स्थिरता जैसे कारकों पर ध्यान केंद्रित करना महत्वपूर्ण है। दालों के मूल्य संवर्धन में दाल प्रसंस्करण, पैकेजिंग, ब्रांडिंग, खाने के लिए तैयार और सुविधाजनक उत्पाद, न्यूट्रास्यूटिकल्स और कार्यात्मक खाद्य पदार्थ, मूल्य वर्धित दाल स्नैक्स, दाल आधारित बेकरी, कन्फेक्शनरी उत्पाद, पशु चारा उपयोग, उप-उत्पाद उपयोग, निर्यात के अवसर, प्रचार और जागरूकता शामिल है। ये रणनीतियां भारत में सतत कृषि, मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन, उत्पादकता में वृद्धि, विविध उपयोग और दलहन क्षेत्र के आर्थिक विकास में योगदान करती हैं।

परिचय

दालें, या "दाल" प्रोटीन और पोषक तत्वों से भरपूर शाकाहारी भोजन के लिए महत्वपूर्ण हैं। चना, मसूर, मटर, सेम, और अरहर नाइट्रोजन स्थिरीकरण के माध्यम से मिट्टी की उर्वरता बढ़ाते हैं, जिससे टिकाऊ कृषि को समर्थन मिलता है। पोषक तत्वों से भरपूर ये फसलें कम वसा और कोलेस्ट्रॉल सामग्री तथा प्रचुर मात्रा में प्रोटीन, विटामिन (फोलेट, बी कॉम्प्लेक्स और सी), खनिज (लौह, पोटेशियम, मैग्नीशियम) और एंटीऑक्सिडेंट के साथ विभिन्न स्वास्थ्य लाभ प्रदान करती हैं। दालों का सेवन हृदय रोग, मधुमेह और कैंसर जैसी बीमारियों के जोखिम को कम करने से जुड़ा है, क्योंकि इनका कम ग्लाइसेमिक इंडेक्स रक्त शर्करा प्रबंधन में सहायता करता है। दालें उल्लेखनीय बहुमुखी प्रतिभा का प्रदर्शन करती हैं, जो दाल, सांबर, हम्मस और फलाफेल जैसे लोकप्रिय व्यंजनों का आधार बनती हैं, और इनका उपयोग सूप, सलाद, स्नैक्स और बेक किए गए खाद्य पदार्थों में किया जाता है। उन्हें उबालने, अंकुरित करने या आटे में पीसने से उनके पाक अनुप्रयोगों का विस्तार होता है। विश्व स्तर पर, खाद्य सुरक्षा, कुपोषण और पर्यावरण संबंधी चिंताओं को दूर करने के लिए दालों को टिकाऊ और पौष्टिक भोजन के रूप में बढ़ावा देने पर ध्यान केंद्रित किया जा रहा है। भारत में, दलहन क्रांति का उद्देश्य अनुसंधान, किसान समर्थन और बाजार संबंधों के माध्यम से उत्पादन को बढ़ावा देना, आयात निर्भरता को कम करना, आजीविका में सुधार करना और टिकाऊ कृषि को बढ़ावा देना है। वर्ष 2022-23 में, भारत का कुल दाल उत्पादन 27.81 मिलियन टन होने का अनुमान है, जो पिछले वर्ष के 27.32 मिलियन टन से 0.51 लाख टन अधिक है। यह पिछले पांच वर्षों के औसत दाल उत्पादन से 3.15 मिलियन टन अधिक है, जो इस क्षेत्र में सकारात्मक विकास प्रवृत्ति को दर्शाता है। वर्ष 2050 तक 39 मिलियन टन दालों की आवश्यकता है। बढ़ती आबादी के साथ दालें एक कम कार्बन वाला भविष्य का भोजन है और लोग शाकाहार और वीगन आहार की ओर रुख कर रहे हैं। दालें स्वस्थ आहार के लिए महत्वपूर्ण हैं, जिससे मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण को लाभ होता है। इसकी खेती से भारत और दुनिया भर में खाद्य सुरक्षा, पोषण और सतत विकास को संबोधित किया जा सकता है।

भारत में दलहन क्रांति को बनाए रखने के लिए रणनीतियां

अनुसंधान और प्रौद्योगिकी

उन्नत दलहन फसल किस्मों को विकसित करने, पैदावार बढ़ाने और जलवायु परिस्थितियों के प्रति लचीलापन बढ़ाने के लिए अनुसंधान में निवेश उत्पादन को बढ़ावा देने और घाटे को कम करने के लिए सटीक कृषि और कुशल सिंचाई विधियों जैसी आधुनिक कृषि पद्धतियों को बढ़ावा।

किसान सहायता और प्रशिक्षण

किसानों को गुणवत्तापूर्ण बीज, उर्वरक और कीटनाशक किफायती दर में प्रदान करना। किसानों को दलहन की खेती, मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन, कीट नियंत्रण और जल संरक्षण में सर्वोत्तम प्रथाओं के बारे में शिक्षित करने के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन।

जल प्रबंधन

सिंचाई के बुनियादी ढांचे में सुधार विशेष रूप से वर्षा आधारित क्षेत्रों में, और ड्रिप सिंचाई और नमी बनाए रखने की प्रथाओं जैसी जल-बचत तकनीकों को प्रोत्साहन।

बाजार संपर्क और मूल्य स्थिरता

कुशल खरीद और वितरण प्रणालियों के माध्यम से बाजार कनेक्शन को मजबूत करना। सामूहिक विपणन और सौदेबाजी की शक्ति बढ़ाने के लिए किसान उत्पादक संगठन (एफपीओ) और सहकारी समितियां बनाना। दाल की कीमतों को स्थिर करने और मांग और आपूर्ति के आधार पर आयात और निर्यात को विनियमित करने के उपाय लागू करना।

मूल्य संवर्धन और प्रसंस्करण

उत्पादों में मूल्य जोड़ने और किसानों की आय बढ़ाने के लिए दाल मिलों और दाल आटा मिलों जैसी प्रसंस्करण सुविधाओं में निवेश को प्रोत्साहन।

प्रचार और जागरूकता

उपभोक्ताओं को दालों के पोषण संबंधी लाभों के बारे में शिक्षित करने के लिए जागरूकता अभियान चलाना। बाजार की मांग को बढ़ाने के लिए सार्वजनिक पोषण कार्यक्रमों और स्कूल भोजन योजनाओं में दालों को शामिल करना। दलहन की खेती के पर्यावरणीय लाभों पर प्रकाश डालना।

7. **सरकारी सहायता:** सहायक नीतियां बनाना और रियायती ऋण, फसल बीमा और न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) जैसे प्रोत्साहन प्रदान करना। दालों के लिए ऋण उपलब्धता, भंडारण अवसंरचना और बाजार आसूचना में सुधार। संस्थानों और निजी क्षेत्र की संस्थाओं के बीच अनुसंधान सहयोग को सुविधाजनक बनाना।

भारत में दलहन क्रांति की दीर्घकालिक सफलता और स्थिरता के लिए किसानों, शोधकर्ताओं, नीति निर्माताओं और उद्योग के खिलाड़ियों के बीच सहयोग को शामिल करते हुए एक समग्र दृष्टिकोण बनाने की आवश्यकता है।

भारत में दालों की उत्पादकता कैसे सुधारें?

भारत में दलहन उत्पादकता में सुधार के लिए एक बहुआयामी दृष्टिकोण की आवश्यकता है, जो खेती को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों को संबोधित करे। विचार करने के लिए यहां कुछ रणनीतियां दी गई हैं:

बीज चयन और उपलब्धता

अधिक उपज देने वाली और रोग प्रतिरोधी दलहनी फसलों की किस्मों के उपयोग को बढ़ावा। विभिन्न कृषि-जलवायु परिस्थितियों के अनुकूल उन्नत बीज किस्मों को विकसित करने के लिए अनुसंधान और विकास में निवेश। किसानों को गुणवत्तापूर्ण बीजों की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए बीज उत्पादन और वितरण नेटवर्क की स्थापना।

मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन

पोषक तत्वों की कमी और पीएच स्तर का आकलन करने के लिए मिट्टी का नियमित परीक्षण। किसानों को उचित मृदा संशोधन और दालों के लिए विशिष्ट उर्वरक प्रथाओं पर मार्गदर्शन। मिट्टी की उर्वरता, संरचना और नमी धारण क्षमता में सुधार के लिए जैविक खाद, फसल चक्र और कवर फसलों के उपयोग को प्रोत्साहन।

जल प्रबंधन

ड्रिप सिंचाई, स्प्रिंकलर और नमी सेंसर जैसी कुशल जल प्रबंधन तकनीकों को बढ़ावा। जल के वाष्पीकरण को कम करने और जल-उपयोग दक्षता में सुधार के लिए मल्चिंग और नमी

बनाए रखने के तरीकों जैसी संरक्षण प्रथाओं को अपनाने को प्रोत्साहित करना।

एकीकृत कीट प्रबंधन (आईपीएम)

कीटों और बीमारियों के प्रभावी प्रबंधन के लिए आईपीएम रणनीतियों को लागू करना। रासायनिक कीटनाशकों के उपयोग को कम करने के लिए जैव कीटनाशकों, प्राकृतिक शत्रुओं और फसल चक्र के उपयोग को बढ़ावा। किसानों को कीट पहचान, निगरानी और उचित कीट प्रबंधन तकनीकों पर प्रशिक्षण और संसाधन प्रदान करना।

पोषक तत्व प्रबंधन

किसानों को उचित उर्वरक कार्यक्रम के माध्यम से संतुलित पोषक तत्व अनुप्रयोग के बारे में शिक्षित करना। मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने और सिंथेटिक उर्वरकों पर निर्भरता कम करने के लिए जैविक और जैव उर्वरकों के उपयोग को प्रोत्साहित करना। दलहनी फसलों द्वारा कुशल पोषक तत्व ग्रहण सुनिश्चित करने के लिए सटीक पोषक तत्व प्रबंधन तकनीकों को लागू करना।

फसल सुरक्षा

किसानों को प्रभावी खरपतवार प्रबंधन प्रथाओं जैसे समय पर और उचित शाकनाशी अनुप्रयोग, अंतरफसल और मल्चिंग के बारे में शिक्षित करना। प्रारंभिक कीट और बीमारी का पता लगाने और समय पर नियंत्रण उपायों के महत्व के बारे में जागरूकता बढ़ाना। एकीकृत खरपतवार और कीट प्रबंधन प्रथाओं पर जानकारी तक पहुंच प्रदान करना।

मशीनीकरण और प्रौद्योगिकी को अपनाना

बुआई, मड़ाई और कटाई जैसे कार्यों के लिए आधुनिक कृषि मशीनरी और उपकरणों के उपयोग को बढ़ावा देना। किराये की सेवाओं या सहकारी व्यवस्थाओं के माध्यम से कृषि मशीनरी की सुविधा प्रदान करना। इष्टतम कृषि प्रबंधन के लिए सटीक कृषि प्रौद्योगिकियों, रिमोट सेंसिंग और डेटा एनालिटिक्स को प्रोत्साहित करना।

क्षमता निर्माण और प्रशिक्षण

किसानों को नवीनतम खेती तकनीकों, सर्वोत्तम प्रथाओं और दलहन उत्पादन में तकनीकी प्रगति के बारे में शिक्षित करने के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम, कार्यशालाएं और प्रदर्शन आयोजित करना। व्यापक प्रशिक्षण और ज्ञान हस्तांतरण प्रदान करने के लिए कृषि संस्थानों, विस्तार सेवाओं और निजी क्षेत्र की संस्थाओं के साथ सहयोग।

ऋण और बीमा तक पहुंच

इनपुट खरीदने और नई प्रौद्योगिकियों को अपनाने के लिए किसानों की ऋण सुविधाओं तक पहुंच में सुधार करना। प्रतिकूल मौसम की स्थिति या कीट आक्रमण के कारण फसल की विफलता सहित दाल की खेती से जुड़े जोखिमों को कम करने के लिए फसल बीमा योजनाओं को बढ़ावा।

बाजार संपर्क और मूल्य स्थिरता

कुशल खरीद प्रणाली, भंडारण सुविधाएं और विपणन हेतु बुनियादी ढांचे की स्थापना करके दालों के लिए बाजार संबंधों को मजबूत करना। सामूहिक विपणन और सौदेबाजी को सक्षम करने के लिए किसान उत्पादक संगठनों (एफपीओ) और सहकारी समितियों के गठन का समर्थन। दलहन की कीमतों को स्थिर करने और किसानों को उचित और लाभकारी रिटर्न प्रदान करने के उपाय लागू करना।

इन रणनीतियों को लागू करके और दलहन की खेती के लिए एक सहायक पारिस्थितिकी तंत्र को बढ़ावा देकर, भारत उत्पादकता बढ़ा सकता है और इस क्षेत्र में सतत विकास सुनिश्चित कर सकता है।

भारत में दालों के मूल्यवर्धन के लिए रणनीतियां

भारत में दालों का मूल्यवर्धन कच्ची दालों को उच्च मूल्य वाले उत्पादों में बदलने, उनके उपयोग में विविधता लाने और अतिरिक्त आय स्रोत बनाने की प्रक्रिया को संदर्भित करता है। दालों में मूल्यवर्धन के कुछ तरीके यहां दिए गए हैं:

दाल प्रसंस्करण

दाल मिलें, दाल आटा मिलें और दाल-आधारित उत्पाद विनिर्माण सुविधाओं जैसी दाल प्रसंस्करण इकाइयां स्थापित करें। ये सुविधाएं दालों को साफ कर सकती हैं, छांट सकती हैं, भूसी निकाल सकती हैं, विभाजित कर सकती हैं और पॉलिश कर सकती हैं, साथ ही विभाजित दालें, दाल का आटा, बेसन और दाल-आधारित स्नैक्स जैसे मूल्यवर्धित उत्पाद तैयार कर सकती हैं।

पैकेजिंग और ब्रांडिंग

उपभोक्ताओं को आकर्षित करने और बाजार में उनकी अपील बढ़ाने के लिए दाल उत्पादों की गुणवत्तापूर्ण पैकेजिंग और ब्रांडिंग में निवेश। उचित पैकेजिंग उत्पाद की सुरक्षा सुनिश्चित करती है, शेल्फ लाइफ बढ़ाती है और वितरण की सुविधा प्रदान करती है। पहचानने योग्य ब्रांड विकसित करना और विपणन अभियानों के माध्यम से उन्हें बढ़ावा देना दाल उत्पादों के लिए एक अलग पहचान बनाने में मदद कर सकता है।

खाने के लिए तैयार और सुविधाजनक उत्पाद

खाने के लिए तैयार दाल-आधारित उत्पाद जैसे डिब्बाबंद दालें, फ्रोजन दाल-आधारित भोजन और तुरंत मिश्रण का विकास। ये उत्पाद उपभोक्ताओं को सुविधा प्रदान करते हैं और व्यस्त शहरी आबादी और त्वरित और पौष्टिक भोजन विकल्प चाहने वालों को लक्षित करके दालों के बाजार का विस्तार करते हैं।

न्यूट्रास्यूटिकल्स और कार्यात्मक खाद्य पदार्थ

न्यूट्रास्यूटिकल्स और कार्यात्मक खाद्य पदार्थों के विकास में दालों की क्षमता का पता लगाना। दालें प्रोटीन, फाइबर, विटामिन और खनिजों से भरपूर होती हैं, जो उन्हें स्वास्थ्य को बढ़ावा देने वाले उत्पादों के लिए मूल्यवान सामग्री बनाती हैं। इस क्षेत्र में अनुसंधान और विकास से नवीन दाल-आधारित स्वास्थ्य उत्पादों का निर्माण हो सकता है।

मूल्यवर्धित पल्स स्नैक्स

दाल-आधारित स्नैक फूड का विकास, जैसे भुनी हुई दालें, दाल-आधारित चिप्स और प्रोटीन बार दालें पारंपरिक स्नैक खाद्य पदार्थों के लिए एक स्वस्थ विकल्प प्रदान करती हैं, क्योंकि यह कम वसा, उच्च फाइबर और पोषक तत्वों से भरपूर होती हैं। इन स्नैक्स को पौष्टिक विकल्पों के रूप में प्रचारित करना और विपणन अभियानों के माध्यम से उन्हें लोकप्रिय बनाना।

दाल-आधारित बेकरी और कन्फेक्शनरी उत्पाद

ब्रेड, बिस्कुट, केक और पेस्ट्री जैसी बेकरी वस्तुओं के उत्पादन में दाल के आटे और दाल से बने उत्पादों के उपयोग का पता लगाना। ये उत्पाद दाल-आधारित सामग्री के लिए बाजार में विविधता लाते हुए पके हुए माल की पोषण संबंधी प्रोफ़ाइल को बढ़ा सकते हैं।

पशु चारा

पशु आहार निर्माण में एक घटक के रूप में दालों का उपयोग करें, विशेष रूप से मुर्गीपालन, जलीय कृषि और पशुधन के लिए। दालें पशुओं के पोषण के लिए प्रोटीन और अन्य आवश्यक पोषक तत्वों का अच्छा स्रोत हैं। दाल-आधारित फ़ीड फॉर्मूलेशन विकसित करने से दालों के लिए एक नया बाजार तैयार हो सकता है और पशुधन और जलीय कृषि क्षेत्रों की लाभप्रदता में सुधार हो सकता है।

उप-उत्पाद उपयोग

पशु चारा, जैविक उर्वरक और जैव ईंधन उत्पादन जैसे अनुप्रयोगों के लिए भूसी, चोकर और भोजन जैसे दाल उप-उत्पादों के उपयोग का पता लगाना। यह दृष्टिकोण न्यूनतम अपशिष्ट उत्पादन सुनिश्चित करता है और दालों से निकाले गए मूल्य को अधिकतम करता है।

निर्यात के अवसर

अंतरराष्ट्रीय बाजारों में मूल्यवर्धित दलहन उत्पादों के निर्यात के अवसरों की पहचान करना। लक्षित देशों में उपभोक्ता की प्राथमिकताओं और मांगों को समझने के लिए बाजार अनुसंधान का संचालन करना। वैश्विक बाज़ारों तक पहुंचने के लिए गुणवत्ता मानकों, प्रमाण-पत्रों और लेबलिंग आवश्यकताओं का पालन करना।

प्रचार और जागरूकता

विपणन और जागरूकता अभियानों के माध्यम से उपभोक्ताओं को दाल-आधारित उत्पादों के पोषण संबंधी लाभों और बहुमुखी प्रतिभा के बारे में शिक्षित करना। दाल-आधारित व्यंजनों को विकसित करने और बढ़ावा देने, उनके स्वाद, बहुमुखी प्रतिभा और स्वास्थ्य लाभों को प्रदर्शित करने के लिए पाक विशेषज्ञों, रसोइयों और खाद्य प्रभावकों के साथ सहयोग करना।

वित्त, तकनीकी सहायता और बाजार संबंधों तक पहुंच के माध्यम से दाल मूल्य संवर्धन में शामिल उद्यमियों और छोटे पैमाने के उद्यमों को सहायता प्रदान करना आवश्यक है। इसके अतिरिक्त, किसानों के साथ जुड़कर और उन्हें मूल्य संवर्धन के लिए उपयुक्त दलहन किस्मों की खेती के लिए प्रोत्साहित करने से गुणवत्तापूर्ण कच्चे माल की निरंतर आपूर्ति सुनिश्चित की जा सकती है।

क्लाइमेट स्मार्ट कृषि की महत्वपूर्ण आधार : अर्बुस्कुलर माइकोरिज़ल कवक

सीमा सांगवान[1], राम स्वरूप बाना[2], गरिमा सक्सेना[2] एवं प्रकृति शर्मा[1]

[1]सूक्ष्म जीव विज्ञान संभाग, [2]सस्य विज्ञान संभाग
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110 012

विकासशील देशों में रहने वाले कई लोगों के लिए भोजन, आय और रोजगार का मुख्य स्रोत कृषि है। इन देशों में 75 % ग्रामीण आबादी रहती है। पिछले दशकों में, सतत कृषि विकास और खाद्य सुरक्षा के बारे में व्यापक जागरूकता आई है, लेकिन ध्यान दिए जाने के बावजूद, दुनिया में लगभग एक अरब कुपोषित लोग हैं। इसके साथ ही, वैश्विक कृषि प्रमुख पर्यावरणीय मुद्दों का सामना कर रही है जो भोजन की अधिक खपत और बर्बादी से जुड़े हैं। यदि भोजन की खपत और उसकी बर्बादी की वर्तमान प्रवृत्ति जारी रहती है तो 2050 तक खाद्य उत्पादन को लगभग 60% बढ़ाने की आवश्यकता होगी| इसलिए ग्रामीण लोगों को पौष्टिक भोजन की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए भूमि और पानी जैसे प्राकृतिक संसाधनों की बहाली और रखरखाव पर ध्यान देने की सख्त जरूरत है। इससे उन्हें बदलती जलवायु के अनुरूप ढलने में मदद मिलेगी। खाद्य उत्पादन संबंधित सुरक्षा प्रणालियों पर बदलते जलवायु से जुड़े नकारात्मक प्रभाव को अनुकूलन द्वारा काफी हद तक कम किया जाएगा। जलवायु स्मार्ट कृषि वैश्विक स्तर पर ग्रामीण लोगों के लिए खाद्य प्रणाली को सुरक्षित करने और भोजन की बर्बादी को रोकने का एक तरीका है। जलवायु स्मार्ट कृषि का उपयोग करके इन सभी परस्पर जुड़ी चुनौतियों का समग्र और प्रभावी ढंग से सामना किया जा सकता है |

क्लाइमेट स्मार्ट कृषि क्या है?

क्लाइमेट स्मार्ट कृषि लगातार बदलती जलवायु के तहत एक स्थाई और सुरक्षित खाद्य प्रणाली की ओर परिवर्तन और पुनर्संरचना द्वारा कृषि को विकसित करने का एक आसान तरीका है। जलवायु में उतार-चढ़ाव से कृषि हमेशा प्रभावित होगी क्योंकि ये दोनों बहुत अधिक परस्पर, संबंधित और सार्वभौमिक प्रक्रियाएं हैं। यह जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों का जवाब देकर कृषि उत्पादन को बनाए रखने और बढ़ाने के द्वारा स्थाई तरीकें से खाद्य सुरक्षा का समर्थन करने का एक तरीका है। सीएसए की अवधारणा को पहली बार 2010 में खाद्य और कृषि संगठन (एफएओ) द्वारा कृषि, खाद्य सुरक्षा और जलवायु परिवर्तन पर हेग सम्मेलन के दौरान परिभाषित किया गया था। इसके उद्देश्यों को राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा और विकास लक्ष्यों के केंद्रित दृष्टिकोण के तहत तीन तरीकों यानी पारिस्थितिकी, वित्तीय और सामुदायिक आधार पर सतत प्रगति पर तैयार किया गया था।

1. वे कृषि उत्पादकता और आय में वृद्धि कर रहे थे और इस प्रकार स्थाई तरीकें से खाद्य सुरक्षा में वृद्धि कर रहे थे।
2. जलवायु परिवर्तन के प्रति लचीलापन बनाना और इसके साथ अनुकूलन करना।
3. विभिन्न तकनीकों और अवसरों को विकसित करके ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को कम करना। सीएसए सतत विकास के साथ-साथ हरित अर्थव्यवस्था का लक्ष्य प्राप्त करने में मदद करता है।

अर्बुस्कुलर माइकोराइजा कवक और जलवायु स्मार्ट कृषि

मृदा माइक्रोबायोम पारिस्थितिकी तंत्र के लचीलेपन, टिकाऊ कृषि उत्पादन, मिट्टी और जल संरक्षण और जीएचजी उत्सर्जन को निर्धारित करता है। हालांकि उनकी गतिविधियां बदलती जलवायु परिस्थितियों से सीधे प्रभावित होती हैं, लेकिन वे वस्तुतः सभी पारिस्थितिकी तंत्र प्रक्रियाओं में एक आवश्यक घटक हैं। सूक्ष्मजीव अपघटन और हेटरोट्रॉफ़िक श्वसन करते हैं और पौधों की उत्पादकता में सीधे योगदान देने वाले पानी और पोषक तत्वों के अवशोषण में भी सुधार करते हैं, जो जलवायु स्मार्ट कृषि में एक महत्वपूर्ण आधार हैं। जड़ों और मिट्टी के सूक्ष्मजीवों के बीच सबसे व्यापक सहजीवी संबंध अर्बसुकुलर माइकोरिज़ल

कवक (एएमएफ) हैं। वे मिट्टी की जल धारण क्षमता में सुधार करते हैं, पोषक तत्वों की उपलब्धता और ग्रहण को नियंत्रित करते हैं और मिट्टी के ग्रीनहाउस गैस (जीएचजी) उत्सर्जन को भी कम करते हैं, इस प्रकार पारिस्थितिकी तंत्र की एक विस्तृत श्रृंखला का एक घटक हैं। अन्य विविध जीवाणुओं के साथ, एएमएफ अद्वितीय और प्रचुर मात्रा में होने के कारण पारिस्थितिकीी तंत्र के कामकाज को स्थिर करने में योगदान देता है। एएमएफ सहजीवन, बेहतर, अनुकूल और अत्यधिक प्रतिस्पर्धी होने के कारण, पौधों को उनके बेहतर अस्तित्व, बढ़ी हुई वृद्धि और विकास के लिए विभिन्न जैविक और अजैविक पर्यावरणीय तनावों में अनुकूलित करने में मदद करता है।

ग्रीनहाउस गैसों पर एएमएफ का प्रभाव

एग्रोइकोसिस्टम ओजोन क्षयकारी पदार्थों यानी जीएचजी के महत्वपूर्ण स्रोतों में से एक है, उदाहरण के लिए, कार्बन डाइऑक्साइड, नाइट्रस ऑक्साइड और मीथेन। कुल मिलाकर, एग्रोइकोसिस्टम का वार्षिक रूप से कुल विश्वव्यापी मानवजनित जीएचजी बहिर्वाह में लगभग 10-14% योगदान करने के लिए सर्वेक्षण किया गया है। इसमें मिट्टी से नाइट्रसऑक्साइड उत्सर्जन (खेती की तत्काल प्रतिबद्धता का 38%) और खाद (7%), जुगाली करने वाले जानवरों से मीथेन का आंत्रीय बहिर्वाह (32%), और बायोमास उपभोग करने वाले नाइट्रस ऑक्साइड और मीथेन (12%) शामिल हैं। भू-आवरण से जीएचजी को हटाने से कृषि आदानों का उत्पादन बदल जाता है, उदाहरण के लिए खाद और कीटनाशक; या कटाई के बाद के अभ्यास, उदाहरण के लिए, प्रबंधन, परिवहन, प्रशीतन और भोजन बोर्ड।

जड़ों और एएमएफ के बीच परस्पर क्रिया ने पानी और पोषक तत्वों की खपत में वृद्धि के कारण मिट्टी के जैव रासायनिक गुणों और ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन, मुख्य रूप से कार्बन डाइऑक्साइड और नाइट्रस ऑक्साइड में काफी बदलाव किया है | सबसे व्यापक सहजीवी संघों में से एक होने के नाते, एएमएफ पौधों से फोटोएसिमिलेटेड कार्बन यौगिक लेता है और बदले में मिट्टी के पोषक तत्वों की मात्रा बढ़ाता है। मिट्टी के कुछ भौतिक गुण, जैसे, जल धारण क्षमता, एएम सहजीवन के कारण बदल जाते हैं जो मिट्टी की जैव-भू-रासायनिक प्रक्रियाओं और जीएचजी उत्सर्जन को प्रभावित करते हैं । मिट्टी में मौजूद नमी का ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन पर बड़ा प्रभाव पड़ता है क्योंकि यह मिट्टी के सूक्ष्मजीव समुदायों को प्रभावित करती है जो बदले में विभिन्न शारीरिक और चयापचय प्रक्रियाओं को बदल देती है।

एएमएफ पौधों के जल संबंधों को संशोधित करके गैर-माइकोरिज़ल पौधों की तुलना में पौधों को अधिक प्रतिरोधी बनाता है जो संभावित रूप से मिट्टी के जैव-रासायनिक चक्र और ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन को बदल देता है। माइकोरिज़ल पौधे उच्च रंध्र संचालन को बनाए रखते हुए अधिक पानी को अवशोषित करते हैं जिसके परिणामस्वरूप जल तनाव की स्थिति में गैर-माइकोरिज़ल पौधों की तुलना में मिट्टी की नमी कम हो जाती है।

एएमएफ द्वारा नाइट्रोजन का उत्सर्जन कम होना

वर्ष 1940-2005 के बीच कृषि प्रणालियों में एन-आधारित उर्वरकों के अत्यधिक उपयोग के कारण विश्व स्तर पर नाइट्रोजन ऑक्साइड के रूप में नाइट्रोजन उत्सर्जन में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। यह खतरनाक है क्योंकि नाइट्रोजन ऑक्साइड गैस का विक्षोभ जीवनकाल बहुत लंबा होता है, यानी लगभग 121 वर्ष, जो इसे अन्य अल्पकालिक जीएचजी की तुलना में लंबे समय तक प्रभावित करता है। इस प्रकार, ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन में कमी को पूरा करने का त्वरित और मुख्य प्रयास नाइट्रस ऑक्साइड में कमी पर केंद्रित है। अर्बुस्कुलर माइकोराइजा कवक खुद को सबसे व्यापक जड़-सूक्ष्मजीवों में से एक के रूप में स्थापित करता है और पौधों की आवश्यकताओं को पूरा करने और नाइट्रोजन चक्रण को बनाए रखने के लिए मिट्टी से विशेष रूप से अकार्बनिक रूप में नाइट्रोजन ग्रहण करने में प्रमुख भूमिका निभाता है | एएमएफ एन सब्सट्रेट्स यानी अमोनियम (NH_4^+) और नाइट्रेट ((NO_3^{--})की पहुंच को प्रभावित करता है जिसके परिणामस्वरूप एन2ओ का निर्माण और आगे उत्सर्जन होता है। एन2ओ उत्सर्जन पर एएमएफ सहजीवन के प्रभाव को दिखाने के लिए किए गए कुछ अध्ययनों ने बताया है कि एएमएफ पौधों के पोषक तत्वों और पानी के अवशोषण में मदद करता है, जिससे मिट्टी की जैव रासायनिक और माइक्रोबियल प्रक्रियाओं में महत्वपूर्ण परिवर्तन होता है। एएम मिट्टी से पौधों तक इसके परिवहन को सुविधाजनक बनाकर नाइट्रेट लीचिंग के रूप में नाइट्रोजन के नुकसान को रोकता है। यह अच्छी तरह से प्रलेखित है कि एएमएफ मायसेलियम NH4+ और NO3- दोनों को अवशोषित कर सकता है। N_2O फ्लक्स में स्केलिंग को एएमएफ उपनिवेशित पौधों में भी प्राप्त

किया जा सकता है यदि यह अन्य रोगाणुओं की तुलना में अधिक एन सब्सट्रेट्स को अवशोषित करता है और इसकी उपलब्धता कम करता है। इसलिए सामूहिक जांच से यह निष्कर्ष निकला कि एएमएफ नाइट्रीकरण की दर को कम करता है जिससे N_2O उत्पादन और आगे उत्सर्जन में महत्वपूर्ण कमी आती है।

एएमएफ द्वारा मीथेन गैस के उत्सर्जन मे कमी

मीथेन कार्बन डाइऑक्साइड की तुलना में बहुत अधिक शक्तिशाली ग्रीनहाउस गैस है और इसकी सांद्रता तेजी से बढ़ रही है। दुनिया भर में, धान की खेती को 2008-2017 के दौरान 31 टीजी वर्ष-1 के साथ जलवायु मीथेन का एक महत्वपूर्ण स्रोत माना जाता है, जो पिछले वर्ष 2000-2009 से मामूली वृद्धि हुई है। धान के खेतों से मीथेन उत्सर्जन के दैनिक पैटर्न का अध्ययन किया। उन्होंने पुनः बाढ़ चरण पर नियंत्रण की तुलना में टीकाकरण वाले चावल के भूखंडों में मीथेन उत्सर्जन में 50% से अधिक की कमी देखी। एएमएफ अप्रत्यक्ष रूप से नाइट्रेट आयनों और अमोनियम धनायनों की वृद्धि के कारण मीथेन अवशोषण में योगदान कर सकता है जो मीथेन ऑक्सीकरण बैक्टीरिया के उद्भव का कारण बनता है। उनके अनुसार, अर्बुस्कुलर माइकोराइजा कवक द्वारा मीथेन अवशोषण में वृद्धि रेगिस्तानी मिट्टी में पहली रिपोर्ट है।

एएमएफ द्वारा कार्बन डाई ऑक्साइड उत्सर्जन में कमी

एएमएफ मेजबान पौधों के प्रकाश संश्लेषक अंतिम उत्पादों को उनके हाइफहे और फिर मिट्टी में स्थानांतरित करके पौधे और वायुमंडल के बीच कार्बन पृथक्करण की पेशकश कर सकता है। मक्का में जीएचजी फ्लक्स का एक सूक्ष्म जगत अध्ययन किया और एएमएफ हाइफहे की उपस्थिति में कुल कार्बन डाई ऑक्साइड फ्लक्स में वृद्धि पाई। इसलिए, यह अनुमान लगाया गया था कि ग्रीनहाउस गैसें, संभवतः मिट्टी में मौजूद एएमएफ हाइफ़े से प्रभावित थीं। कैवेग्नारो एट अल 2011बी के अनुसार, टमाटर की जड़ों में अर्बुस्कुलर माइकोराइजा की उपस्थिति ने मिट्टी में कार्बन डाई ऑक्साइड प्रवाह को बढ़ाया, लेकिन इस ग्रीनहाउस गैस की प्रभावकारिता बहुत कम थी, जो मिट्टी के जीएचजी उत्सर्जन को कम करने में एएम-रूट सहजीवन की आशावादी भूमिका का सुझाव देती है।

एएमएफ अपने कार्बोहाइड्रेट और ऊर्जा सेवन के लिए मेजबान पौधे पर निर्भर है। इसके लिए, वे मेजबान पौधे में प्रकाश संश्लेषक दर को बढ़ाने में मदद करते हैं जो बदले में कार्बन पृथक्करण को उत्तेजित करता है। अर्बुस्कुलर माइकोराइजा कवक की मिट्टी में सी परिवर्तन में उल्लेखनीय भूमिका होती है, क्योंकि वे अपेक्षाकृत 4-20% पौधों के प्रकाश संश्लेषण का उपयोग करते हैं। फलियों में मेटा-विश्लेषणात्मक अध्ययन से पता चला कि सी सिंक उत्तेजना के परिणाम के कारण एएमएफ उपचारित पौधों में प्रकाश संश्लेषक दर में 14% की वृद्धि हुई।

एएमएफ: टिकाऊ कृषि का एक अभिन्न सार

पर्याप्त मात्रा में फसल वृद्धि, उपज और गुणवत्ता प्राप्त करने के लिए, रसायनों के इनपुट को कम करना और टिकाऊ कृषि प्रणाली में जन्मजात तंत्र का दोहन करना आवश्यक है। हालांकि, सामाजिक जवाबदेही के साथ-साथ मौजूदा पारिस्थितिकी तंत्र में उनकी व्यवहार्यता बहुत महत्वपूर्ण है। एडैफिक पैरामीटर मिट्टी के रोगाणुओं के विकास को बढ़ाकर और पौधे के मिट्टी-जड़ क्षेत्र में परजीवीवाद और विरोध तंत्र को बढ़ाकर राइजोस्फीयर में रोगजनकों को नियंत्रित करके टिकाऊ कृषि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। कृषि स्थिरता सूक्ष्मजीवों के साथ पौधों की दिलचस्प बातचीत का अंतिम परिणाम है। अर्बुस्कुलर माइकोरिज़ल कवक कृषि स्थिरता के लिए आवश्यक तंत्र हैं क्योंकि वे मिट्टी और फसल राइजोप्लेन के मूल निवासी हैं। माइकोराइजा-पादप सहजीवी संबंध पौधों के लिए जीवन कायम रखने वाले संबंध के रूप में उभरता है, खासकर जब पौधों के लिए पोषक तत्वों की कमी होती है। इन स्थितियों में पोषक तत्वों को एएम एक्स्ट्रा-रेडिकल मायसेलियम द्वारा उपयोग योग्य रूप में जुटाया जाता है। यह देखा गया है और आलोचनात्मक रूप से रिपोर्ट किया गया है कि एएमएफ केवल फसल जड़ घटक के बजाए एडैफिक वातावरण का महत्वपूर्ण घटक है जैसा कि पहले सोचा गया था। कम उत्पादक मिट्टी में एएमएफ प्रभाव बहुत सकारात्मक होता है क्योंकि इसके परिणामस्वरूप आसपास के वातावरण में पोषक तत्वों की कम हानि होती है और पोषक तत्वों की आपूर्ति, पौधों की वृद्धि और उत्पादन प्रभावित होता है। इसलिए, पौधों की ताकत बढ़ाने और मिट्टी की संरचना और गुणवत्ता को मजबूत करने में एएमएफ की भूमिका ने टिकाऊ कृषि प्रणाली में इसके प्रसार की ओर ध्यान आकर्षित किया है। एएम सिम्बायोसिस कीटनाशकों, उर्वरकों आदि जैसे कम रासायनिक इनपुट के साथ उत्पादकता और उपज बढ़ाने में मदद करता है। मिट्टी के बायोमास

और पोषक तत्व चक्र में एएमएफ का महत्वपूर्ण योगदान है क्योंकि वे बड़े पैमाने पर प्रसारित होते हैं। पौधों की वृद्धि के लिए अनुकूल सूक्ष्मजीवों का उपयोग करके टिकाऊ तरीकें से फसल की उपज में सुधार करने के लिए प्राकृतिक और जैविक तंत्र पर अधिक ध्यान केंद्रित किया जाना चाहिए क्योंकि वे सूक्ष्म और स्थूल खनिज पोषक तत्वों, विशेष रूप से फॉस्फोरस, दोनों को आत्मसात करके जैविक और अजैविक तनाव को कम करने में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। और अन्य जैसे जिंक, कॉपर आदि।

निष्कर्ष

एक स्थाई कृषि प्रणाली को बनाए रखने में माइकोराइजा की संभावित भूमिका को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता क्योंकि वे पोषक तत्वों को ग्रहण करने में मदद करते हैं। मिट्टी में मौजूद एएमएफ के मूल बीजाणु पौधों की जड़ों पर हमला करके पोषक तत्व प्रबंधन, मिट्टी के गुणों में सुधार, फसल उत्पादकता और स्थिरता में मदद करते हैं। बढ़ती जनसंख्या दर, उच्च खाद्य मांग और जलवायु परिवर्तन के वर्तमान परिदृश्य में, एएमएफ के पास रोगजनकों के प्रबंधन के साथ-साथ कीटनाशकों, सिंथेटिक पोषक तत्वों, अन्य रासायनिक आदानों के हानिकारक परिणामों को कम करने की महत्वपूर्ण विशेषता है। अधिक उपज प्राप्त करने के लिए गैर-हानिकारक और आर्थिक तरीका होने के कारण, एएमएफ न्यूनतम इनपुट और व्यवहार्य फसल प्रणाली के विकास में मदद करता है। माइकोराइजा कवक को फसल की खेती में सीमाओं को दरकिनार करने के लिए एक जैविक समाधान के रूप में माना जा सकता है। अर्बुस्कुलर माइकोराइजा क्षेत्र अनुसंधान में हालिया और भविष्य की प्रगति और विकास को फसल उत्पादन को अधिकतम करने, इसकी गुणवत्ता पर विशेष जोर देने, रिटर्न लाभ के साथ लागत प्रभावी होने के साथ-साथ पर्यावरण की रक्षा और जैव विविधता के संरक्षण पर ध्यान केंद्रित किया जाना चाहिए। इस क्षेत्र से संबंधित सभी शोधकर्ताओं के अंतःविषय कनेक्शन और संघ संबंधित सीमाओं को दूर करने में मदद कर सकते हैं। विश्वसनीय खेती प्रणालियों में उत्पादकता दक्षता और फसल प्रबंधन को जलवायु, मिट्टी और मौजूदा बाजारों (मट्टू और टीसडेल) के अनुसार आवश्यक जरूरतों को पूरा करना चाहिए। आने वाले दिनों में उत्पादकता जारी रखने और उत्पादन की स्थिरता को अनुकूलित करने के लिए, अनुसंधान और प्रयोग को जलवायु स्मार्ट कृषि और स्थिरता में एएमएफ के प्रभाव की खोज पर अधिक ध्यान केंद्रित करना चाहिए। भविष्य में, एक जलवायु स्मार्ट रक्षात्मक कृषि के लिए, उन विशेषताओं की पहचान और सुधार करके बेहतर खाद्य आपूर्ति प्राप्त करने के लिए विकास और प्रगति पर विचार किया जा सकता है जो नई किस्मों में एएमएफ उपलब्धता, उपयोगिता और जलवायु ताकत से जुड़ी हैं।

विज्ञान, प्रौद्योगिकी, इंजीनियरिंग और गणित में अग्रणी महिलाओं की एक उल्लेखनीय यात्रा

बी.सुनीता, निवेदिता एवं प्राची यादव

आनुवंशिकी संभाग

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110 012

हममें से किसी के लिए भी जीवन आसान नहीं है। लेकिन उससे क्या? हमें दृढ़ता रखनी चाहिए और सबसे बढ़कर खुद पर भरोसा रखना चाहिए। हमें विश्वाश करना चाहिए कि हम किसी चीज़ के लिए प्रतिभासंपन्न हैं और यह चीज़ अवश्य हासिल की जानी चाहिए"

--------मैरी क्यूरी

महिला वैज्ञानिक आधुनिक प्रोग्रामिंग की प्रारंभिक नींव बनाने में अग्रणी थीं और उन्होंने ही डीएनए की संरचना का अनावरण किया। उनके काम ने पर्यावरणीय आंदोलनों को प्रेरित किया और नए जीन की खोज को जन्म दिया। उन्होंने विज्ञान में करियर बनाने के लिए तथा अधिक युवा महिलाओं को प्रेरित करने के रास्ते में सभी बाधाओं को तोड़ दिया। उन्होंने साबित कर दिया कि महिलाएं वैज्ञानिक कार्यों के लिए मानसिक, शारीरिक या भावनात्मक रूप से योग्य हैं।

पिछले 15 वर्षों में, वैश्विक समुदाय ने महिलाओं और लड़कियों को विज्ञान में प्रेरित करने और संलग्न करने के लिए बहुत प्रयास किए हैं। फिर भी महिलाएं विज्ञान में पूरी तरह से भाग नहीं ले रही हैं। महिलाओं के लिए विज्ञान को पूर्ण एवं समान भागीदारी हासिल करने और लैंगिक समानता के सशक्तिकरण को आगे बढ़ाने के लिए, संयुक्त राष्ट्र महासभा ने 11 फरवरी 2015 को "महिलाओं एवं लड़कियों के लिए अंतरराष्ट्रीय विज्ञान दिवस" के रूप में मनाने के लिए घोषित किया।

महिलाओं ने अपनी उत्कृष्ट उपलब्धियों के लिए अद्भुत समर्पण, इच्छा शक्ति और साहस का प्रदर्शन किया है। सफलता की कहानियां आज से नहीं बल्कि उस समय से हैं जब महिलाओं को पेशेवर के रूप में समर्थन नहीं दिया जाता था। समाज को समग्र रूप से संवेदनशील बनाने के लिए बाधाओं को तोड़ने वाली महिलाओं की सफलता को प्रदर्शित करने की आवश्यकता है और ऐसा करने के लिए हमें सामान्य लोगों के साथ संवाद करने की ज़रुरत है।

आइए उन सभी महिलाओं को सलाम करें जिन्होंने विज्ञान के प्रति अपने शोध और जुनून से हमारे जीवन को आसान और आरामदायक बनाया।

मैरी एनिंग (1799-1847) यह एक जीवाश्म विज्ञानी थीं, जिन्होंने पहले इचिथ्योसॉर कंकाल की खोज की, जिसके कारण "इचथ्योसोरिया क्रम" का निर्माण हुआ। उन्होंने अपने पूरे जीवनकाल में कई वैज्ञानिक रूप से महत्वपूर्ण जीवाश्मों की खोज की और उनके निष्कर्षों ने प्रागैतिहासिक जीवन और पृथ्वी के इतिहास के बारे में वैज्ञानिक सोच को बदल दिया।

मैरी क्यूरी (1867-1934), वारसॉ में जन्मी फ्रांसीसी भौतिक विज्ञानी और रसायनज्ञ थीं, जिन्होंने अपने पति के साथ रेडियोधर्मिता और रेडियोधर्मी तत्वों के क्षेत्र में बहुत बड़ा योगदान दिया। स्वतःस्फूर्त विकिरण के अध्ययन के लिए उन्हें 1903 में भौतिकी का नोबेल पुरस्कार बेकरल के साथ साझा रूप से दिया गया। मैरी क्यूरी को रेडियम और पोलोनियम की खोज के लिए याद किया जाता है, जिसके लिए उन्हें रसायन विज्ञान में दूसरा नोबेल पुरस्कार मिला। उनका समर्पण ऐसा था कि 66 वर्ष की आयु में उनके वैज्ञानिक अनुसंधान के दौरान विकिरण के संपर्क में आने से अप्लास्टिक एनीमिया से उनकी मृत्यु हो गई।

इरेने जोलियट क्यूरी (1897-1956) ने अपने पति फ्रेडरिक के साथ मिलकर पहले कृत्रिम रूप से निर्मित रेडियोधर्मी परमाणुओं की खोज की, जिससे कैंसर के उपचार का मार्ग प्रशस्त हुआ। इस महान योगदान के लिए इन्हें 1935 में रसायन विज्ञान में नोबेल पुरस्कार दिया गया।

गर्टी कोरी (1896-1957) का जन्म प्राग में हुआ था। उन्होंने शरीर ग्लूकोज के चयापचय का अध्ययन किया है। ये निष्कर्ष मधुमेह के उपचार के विकास में विशेष रूप से उपयोगी साबित हुए।

मारिया गोएपर्ट मेयर (1906-1972) एक जर्मन मूल की अमेरिकी सैद्धांतिक भौतिक विज्ञानी थीं, जिन्हें परमाणु नाभिक के परमाणु शेल मॉडल के लिए भौतिकी में नोबेल पुरस्कार मिला।

ग्रेस हॉपर (1906-1992), एक अमेरिकी कंप्यूटर वैज्ञानिक थीं, जो 1944 में हार्वर्ड एम के-1 कंप्यूटर के पहले प्रोग्रामर में से एक थीं और उन्होंने कंप्यूटर प्रोग्रामिंग भाषा के लिए पहले कंपाइलर का आविष्कार किया। उन्हें "बग" शब्द की उत्पत्ति का श्रेय दिया जाता है जो आज कंप्यूटर की दुनिया में व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है।

रेचेल कार्सन (1907-1964) एक अमेरिकी समुद्री जीवविज्ञानी थीं जो पर्यावरण प्रदूषण और समुद्र के प्राकृतिक इतिहास पर अपने लेखन के लिए जानी जाती थीं। उनकी पुस्तक "साइलेंट स्प्रिंग (1962)" आधुनिक पर्यावरण आंदोलन में प्रभावशाली पुस्तकों में से एक है जिसने डीडीटी सहित कीटनाशकों के नियंत्रण के लिए प्रेरणा प्रदान की।

रोज़ालिंड फ्रैंकलिन (1920-1958) एक ब्रिटिश रसायनज्ञ थी। उन्हें डीएनए की एक उच्च गुणवत्ता वाली एक्स-रे विवर्तन छवि "फोटोग्राफ 51" के लिए याद किया जाता है, जिसके कारण डीएनए डबल हेलिक्स की खोज हुई। इस खोज के लिए फ्रांसिस क्रिक, जेम्स वॉटसन और मौरिस विल्किंस को 1962 में फिजियोलॉजी एवं मेडिसिन का नोबेल पुरस्कार साझा रूप से प्रदान किया गया।

रोज़लिन येलो (1921-2011) फिजियोलॉजी में 1977 का नोबेल पुरस्कार दिया गया था, जिन्होंने डॉक्टर सोलोमन बर्सन के साथ मिलकर रेडियोइम्यूनोएसे (आरआईए) विकसित किया था, जिसका उपयोग शरीर में पदार्थों की छोटी सांद्रता को मापने के लिए किया जाता है।

जेन गुडॉल (1934) एक ब्रिटिश प्राइमेटोलॉजिस्ट और एथोलॉजिस्ट थी, जिन्होंने 60 वर्षों तक जंगली चिंपांज़ी के सामाजिक और पारिवारिक संबंधों का अध्ययन किया। इन्हें चिंपांज़ी पर दुनिया का सबसे अग्रणी विशेषज्ञ माना जाता है।

जॉक्लिन बेल बर्नेल (1943) उत्तरी आयरलैंड की खगोलभौतिकीविद् इन्होंने अपने स्नात्कोत्तर के दौरान 1963 में पहले रेडियो पल्सर की खोज की। इस खोज ने अंततः उनके डॉक्टरेट सलाहकार एंटनी हेविश को 1974 में भौतिकी में नोबेल पुरस्कार दिलाया।

बारबरा मैक्लिंटॉक (1902-1992) एक अमेरिकी वैज्ञानिक और कोशिकाआनुवंशिकी थी, जिन्हें आनुवंशिक पक्षांतरण (ट्रांसपोज़िशन) की खोज के लिए फिजियोलॉजी में 1983 नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

इटली की **रीता लेवी-मोंटालसिनी (1909-2012)** एक न्यूरोलॉजिस्ट थी, जिन्होंने तंत्रिका विकास कारक (एन जी एफ) की खोज की। कोशिकाओं और अंगों के विकास को नियंत्रित करने वाले तंत्र को समझने में मौलिक महत्व की खोजों के लिए उन्हें 1986 में नोबेल पुरस्कार मिला।

गर्ट्रूड बेले एलियन (1918-1999) एक अमेरिकी बायोकेमिस्ट और फार्माकोलॉजिस्ट थीं, जिन्होंने नई दवाओं के विकास के लिए तर्कसंगत दवा डिजाइन के नवीन तरीकों के उपयोग के लिए जॉर्ज एच. हिचिंग्स और सर जेम्स ब्लैक के साथ फिजियोलॉजी में 1988 का नोबेल पुरस्कार मिला। उन्होंने एंटी-रेट्रोवायरल दवा ए ज़ेड टी (AZT) बनाई, जो एड्स के खिलाफ व्यापक रूप से इस्तेमाल की जाने वाली पहली दवा थी। उन्होंने अंग प्रत्यारोपण में अस्वीकृति से लड़ने के लिए पहली इम्यूनोसप्रेसिव दवा, एज़ैथियोप्रिन, और हर्पीस संक्रमण के खिलाफ पहली सफल एंटीवायरल दवा, एसाइक्लोविर (ए सी वी) भी विकसित की।

क्रिस्टियन नुसलीन वोल्हार्ड (1942-) जर्मन जीवविज्ञानी को भ्रूण के विकास के आनुवंशिक नियंत्रण पर उनके शोध के लिए एरिक विस्चौस और एडवर्ड बी. लुईस के साथ, 1995 में फिजियोलॉजी में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

लिंडा बी. बक (1947-) एक अमेरिकी जीवविज्ञानी हैं जो घ्राण (सूंघनेवाली) प्रणाली पर अपने काम के लिए जानी जाती हैं। घ्राण रिसेप्टर्स पर उनके काम के लिए उन्हें रिचर्ड एक्सल के साथ फिजियोलॉजी में 2004 के नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

फ्रैन्कोइसेबैरे-सिनौसी (1947-) एक फ्रांसीसी वायरोलॉजिस्ट हैं जिनकी एचआईवी की खोज, रक्त परीक्षण द्वारा एचआईवी संक्रमण का पता लगाने तथा एड्स के विरुद्ध एंटी रेट्रोवायरल दवाईयों का निर्माण करने में सहायक हुई। इस उत्कृष्ट खोज के लिए उन्हें 2008 में फिजियोलॉजी में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया था।

एडा ई. योनाथ (1939-) एक इज़राइली रसायनज्ञ और नोबेल पुरस्कार विजेता क्रिस्टलोग्राफर हैं, जिन्हें राइबोसोम की संरचना पर उनके अग्रणी काम के लिए जाना जाता है।

टूयुयु (1930-) को मलेरिया के खिलाफ एक नवीन चिकित्सा से संबंधित खोजों के लिए फिजियोलॉजी में वर्ष 2015 में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

फ्रांसिस एच.अर्नोल्ड (1956-) एक अमेरिकी रासायनिक इंजीनियर हैं, जिन्होंने फार्मास्यूटिकल्स से लेकर नवीकरणीय ईंधन तक, नए एंजाइमों को डिजाइन करने के लिए निर्देशित विकास के उपयोग की शुरूआत की। उन्हें इन उपलब्धियों के लिए रसायन विज्ञान में 2018 का नोबेल पुरस्कार मिला।

CRISPR/Cas9 आनुवंशिक प्रणाली की खोज के लिए **इमैनुएल चार्पेंटियर और जेनिफर ए डाउंड** को रसायन विज्ञान में वर्ष 2020 में नोबेल पुरस्कार मिला। CRISPR/Cas9 आनुवंशिक प्रणाली का उपयोग पौधों के शोधकर्ताओं द्वारा कीटों और सूखे का सामना करने वाली फसलों को विकसित करने के लिए किया गया है। चिकित्सा में, यह प्रणाली कैंसर उपचारों के नैदानिक परीक्षणों में शामिल है और शोधकर्ता कुछ वंशानुगत बीमारियों को ठीक करने के लिए इसका उपयोग करने की कोशिश कर रहे हैं।

मरिओला फोटिन मिलेक्ज़ेक ने ऍम-आर एन ए (mRNA) प्रौद्योगिकी में नवाचारों ने क्योर-वाक (CureVac) को चिकित्सा उद्देश्यों के लिए ऍम -आर एन ए(mRNA)का उपयोग करने वाली दुनिया की अग्रणी कंपनी बनने में बड़ा योगदान दिया है।

कैटालिन कारिको (1965-) एक हंगेरियन-अमेरिकी बायोकेमिस्ट हैं जो आरएनए-मध्यस्थता तंत्र में विशेषज्ञ हैं। उनका शोध प्रोटीन थेरेपी के लिए इन विट्रो-ट्रांसक्राइब्ड एमआरएनए के विकास का आधार रहा है। कारिको चिकित्सीय एमआरएनए बनाने के लिए बायोएनटेक और मॉडर्न के संस्थापकों में से एक हैं जो प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया उत्पन्न नहीं करते हैं। वर्ष 2020 में, कारिको और वीसमैन तकनीक का उपयोग कोविड-19 टीकों के उत्पादन के लिए किया गया था जो फाइजर (बायोएनटेक द्वारा विकसित) और मॉडरना द्वारा उत्पादित किए गए थे।

हमारे देश में भी महिला वैज्ञानिकों द्वारा कई प्रमुख योगदान दिए गए हैं जो उन्नीसवीं शताब्दी की शुरुआत से देखे जा सकते हैं।

ई के जानकी अम्मल (1897-1984) एक प्रसिद्ध वनस्पतिशास्त्री और पादप कोशिकाविज्ञानी थीं, जिन्होंने आनुवंशिकी विकास, पादप भूगोल और नृवंशविज्ञान में महत्वपूर्ण योगदान दिया। वह पद्मश्री धारक थीं। उन्होंने गन्ने की एक मीठी किस्म विकसित की और भारत के वनस्पति सर्वेक्षण के महानिदेशक के रूप में भी कार्य किया।

आनंदीबाई जोशी (1865-1887) पहली भारतीय महिला थी, जिन्होंने 1885 में एमडी की डिग्री हासिल की और 1886 में कोल्हापुर रियासत में स्थानीय अल्बर्ट एडवर्ड अस्पताल के महिला वार्ड की चिकित्सक-प्रभारी बनीं।

इरावती कर्वे (1905-1970) एक प्रसिद्ध मानवविज्ञानी थीं, जिन्होंने विभिन्न शैक्षणिक विषयों और अन्य विषयों पर विस्तार से लिखा। उनके लेखन में अत्यधिक प्रशंसित पुस्तक 'युगांत' शामिल है जिसने साहित्य अकादमी पुरस्कार जीता।

अन्ना मणि (1918-2001) सी.वी. रमन के साथ काम करने वाली एकमात्र महिला वैज्ञानिक थीं। रमन, वायुमंडलीय भौतिकी और उपकरणीकरण में अपने काम के लिए प्रसिद्ध हैं। उन्होंने विशेष ध्वनि तकनीकों का उपयोग करके सतह और ऊपरी हवा दोनों में विकिरण, ओजोन और वायुमंडलीय बिजली के अध्ययन में योगदान दिया।

पद्म भूषण की एक अन्य प्राप्तकर्ता **कमल रणदिवे (1917-2001)** ने भारतीय कैंसर अनुसंधान केंद्र (वर्तमान में कैंसर अनुसंधान संस्थान) में भारत में पहली ऊतक संवर्ध प्रयोगशाला की स्थापना की। कुष्ठ रोग के क्षेत्र में उनके काम के लिए उन्हें वॉटुमल फाउंडेशन पुरस्कार मिला। उन्होंने भारतीय महिला वैज्ञानिक संघ (IWSA) की भी स्थापना की।

डॉ. इंदिरा हिंदुजा एक भारतीय स्त्री रोग विशेषज्ञ, प्रसूति विशेषज्ञ और बांझपन विशेषज्ञ हैं, जिन्होंने गैमेटे इंट्राफैलोपियन ट्रांसफर (GIFT) तकनीक की शुरुआत की, जिसके परिणामस्वरूप 4 जनवरी, 1988 को भारत के पहले GIFT बच्चे का जन्म हुआ। इससे पहले उन्होंने केईएम में भारत के पहले टेस्ट-ट्यूब बेबी को जन्म दिया था। उन्हें रजोनिवृत्ति और समय से पहले डिम्बग्रंथि विफलता वाले रोगियों के लिए एक अंडाणु दान तकनीक विकसित करने का श्रेय भी दिया जाता है, इस तकनीक से 24 जनवरी, 1991 को पहला बच्चा पैदा हुआ।

ये पूरी दुनिया में महिला वैज्ञानिकों द्वारा किए गए कुछ महत्वपूर्ण और क्रांतिकारी कार्य हैं जो दर्शाते हैं कि विज्ञान के साथ-साथ मानव जाति के लिए भी योगदान देने में महिलाएं किसी से कम नहीं हैं।

जैसा कि हम उपरोक्त उदाहरणों से देख सकते हैं, इतिहास उन महिलाओं से भरा है जिन्होंने विज्ञान में बहुत बड़ा योगदान दिया। दुनिया भर में विज्ञान, प्रौद्योगिकी, इंजीनियरिंग और गणित विषयों के सभी स्तरों पर वर्षों से एक महत्वपूर्ण लिंग अंतर बना हुआ है। भले ही महिलाओं ने उच्च शिक्षा में अपनी भागीदारी बढ़ाने की दिशा में जबरदस्त प्रगति की है, फिर भी इन क्षेत्रों में उनका प्रतिनिधित्व कम है। यूनेस्को के सांख्यिकी संस्थान के अनुसार, दुनिया में तीन शोधकर्ताओं में से एक से भी कम महिला है। इस कम प्रतिनिधित्व को उच्च शिक्षा की शुरूआत से देखा जा सकता है। हाई स्कूल के अंत तक चीजें संतुलित होती हैं, लेकिन उसके बाद, केवल 32% स्नातक महिलाएं होती हैं। डिप्लोमा जितना अधिक होगा, यह प्रतिशत उतना ही कम होगा। पेशेवर दुनिया में यह अंतर और भी व्यापक हो जाता है। आप शैक्षणिक सीढ़ी पर जितना ऊपर चढ़ेंगे, महिलाएं उतनी ही कम होंगी। इस प्रकार, सर्वोच्च शैक्षणिक पदों में से केवल 11% महिलाएं हैं। लेकिन सबसे आश्चर्यजनक आंकड़े वैज्ञानिक पुरस्कारों के क्षेत्र से आते हैं। नोबेल पुरस्कार विजेताओं में केवल 3% महिलाएँ हैं।

घरेलू जिम्मेदारियों में सीमित सहायता प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष सामाजिक समर्थन का अभाव, और रोल मॉडल की स्थिति तक पहुंचने वाली महिलाओं के सीमित उदाहरण, ऐसे कुछ कारण हैं जो महिलाओं को विज्ञान में आने से पीछे रोकते हैं। विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग (डीएसटी), 2023 के हालिया आंकड़ों से पता चला है कि 2018-19 में एक्स्ट्रामुरल अनुसंधान और विकास (आरएंडडी) परियोजनाओं में 28% महिलाएं शामिल थीं, जो 2000-01 में 13% थी। विज्ञान में सच्ची लैंगिक समानता हासिल करने के लिए अभी भी बहुत कुछ किया जाना बाकी है।

लेकिन हम दृढ़ संकल्पित हैं, और अपने दृष्टिकोण को वास्तविकता बनाने की दिशा में लगातार आगे बढ़ रहे हैं। एक दिन हम ऐसी दुनिया में रहेंगे जहां लड़कियों को विज्ञान का अध्ययन करने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा, जहां महिलाओं

को अनुसंधान और मातृत्व की जिम्मेदारियों को संतुलित करने के लिए पर्याप्त समर्थन मिलेगा, और जहां वैज्ञानिकों को पूरी तरह से उनकी खोजों की योग्यता और उनको क्षमता के आधार पर आंका जाएगा।

"खुद के लिए और अपने आस-पास के लोगों के लिए बोलने वाली महिलाएं दुनिया को बदलने के लिए सबसे मजबूत ताकत हैं"

मेलिंडा गेट्स

खाद्य पदार्थों के संस्करण से पोषण लाभ

बृजेश लेखक, प्राची त्यागी, आरती कुमारी, विनुता टी एवं अरुणा त्यागी

जैव रसायन संभाग

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110 012

आज की खाद्य प्रणाली संख्यात्मक रूप से दुनिया की आबादी के लिए पर्याप्त भोजन प्रदान करती है, लेकिन वैश्वीकरण के तहत पोषण का दोहरा बोझ स्पष्ट हो गया है। स्थिर कृषि उत्पादकता से पीड़ित दीर्घकालिक खाद्य-आयात करने वाले देश अभी भी कुपोषण की समस्या का सामना कर रहे हैं, जबकि मध्यम और उच्च आय वाले देशों को पश्चिमी आहारों के प्रसार के कारण कैलोरी और वसा युक्त खाद्य पदार्थों के अत्यधिक सेवन की समस्या का सामना करना पड़ रहा है। इसलिए सभी समूह के लोगों के लिए संतुलित पोषण प्राप्त करने के लिए, खाद्य संस्करण एक समाधान हो सकता है।

खाद्य संस्करण उन खाद्य पदार्थों में पोषक तत्वों को जोड़ने की प्रक्रिया है जो पहले से उनमे मौजूद नहीं होते हैं। उदाहरण के लिए, दूध के पोषण मूल्य को बढ़ने के लिए अक्सर अतिरिक्त विटामिन डी का उपयोग किया जाता है। संस्करण का उद्देश्य लोगों को उनकी पोषण संबंधी कमियों को दूर करने में मदद करना है। बढ़ती असमानता पर एक नई रिपोर्ट में कहा गया है कि 2020 में 4.6 करोड़ भारतीयों के अत्यधिक गरीबी से पीड़ित होने का अनुमान है, जो संयुक्त राष्ट्र के अनुसार वैश्विक 'नए गरीबों' का लगभग आधा हिस्सा है।

तालिका: राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण के अनुसार विभिन्न आयु वर्ग रक्ताल्पता का प्रतिशत

विभिन्न आयु वर्ग	रक्ताल्पता %
बच्चे (6-59 महीने)	58.4%
5 वर्ष से कम उम्र के बच्चे	35.7%
महिलाएं (प्रजनन आयु वर्ग)	53.1%

इसके अलावा, यह अनुमान लगाया गया है कि फोलिक एसिड के इस्तमाल से 50-70% रक्ताल्पता की रोकथाम हो सकती है। दुर्भाग्य से, जो लोग आर्थिक रूप से कमजोर हैं, उनके पास सुरक्षित और पौष्टिक भोजन की पहुंच नहीं है। अन्य लोग या तो संतुलित आहार का सेवन नहीं करते हैं या आहार में विविधता की कमी होती है जिसके कारण उन्हें पर्याप्त सूक्ष्म पोषक तत्व नहीं मिलते हैं। अक्सर, भोजन के प्रसंस्करण के दौरान पोषक तत्वों का काफी नुकसान होता है। इस प्रकार, सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी, कुपोषण का एक कारण है और इस समस्या को हल करने की रणनीतियों में से एक खाद्य पदार्थों का संस्करण है।

भारत में खाद्य संस्करण

वर्तमान में भारत सरकार निम्नलिखित पांच खाद्य पदार्थों में संस्करण को बढ़ावा दे रही है: गेहूं, चावल, नमक, खाद्य तेल और दूध।

1. **गेहूं:** गेहूं के आटे का संस्करण एक लागत प्रभावी सार्वजनिक स्वास्थ्य हस्तक्षेप है जो सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को कम कर सकता है और फोलिक एसिड की कमी के कारण तंत्रिका नलिका विकार जैसे जन्म दोषों को रोक सकता है। गेहूं के आटे को संस्करणीत करने से लौह तत्व की कमी से होने वाले रक्ताल्पता को संभावित रूप से कम किया जा सकता है। आयरन बच्चों को शारीरिक और मानसिक रूप से विकसित करने में मदद करता है और गर्भवती महिलाओं के स्वास्थ्य में सुधार करता है। संस्करणीत आटे के माध्यम से विटामिन बी12 का पर्याप्त सेवन बच्चों के मानसिक विकास में सुधार कर सकता है। इसलिए, गेहूं के आटे को लौह तत्व, फोलिक एसिड और विटामिन बी 12 के साथ संस्करण करने का स्वास्थ्य प्रभाव बहुत अधिक है। एफ.एस.एस.ए.आई. की सिफारिशों के अनुसार संस्करण गेहूं का आटा विभिन्न आवश्यक विटामिन और खनिजों के अनुशंसित आहार का एक तिहाई प्रदान करेगा। गेहूं के आटे को संस्करणीत बनाने की तकनीक सरल और लागत प्रभावी है। गेहूं के आटे की संस्करण करने की योजना बनाने वाली मिलों को भी आंतरिक और बाहरी गुणवत्ता नियंत्रण प्रणालियों का पालन सुनिश्चित करना चाहिए।

2. **चावल :** खाद्य और सार्वजनिक वितरण विभाग "सार्वजनिक वितरण प्रणाली" के माध्यम से चावल के संस्करण और इसके वितरण पर एक "केंद्र प्रायोजित पायलट योजना" चला रहा है। यह योजना 2019-20 में तीन साल के लिए शुरू की गई थी। यह योजना 2023 तक चलेगी और लाभार्थियों को 1 रुपये प्रति किलोग्राम की दर से चावल की आपूर्ति की जाएगी। कुपोषण के कारण रक्ताल्पता की गंभीर समस्या का मुकाबला करने के एक महत्वाकांक्षी प्रयास में, प्रधान मंत्री नरेंद्र मोदी ने 2024 तक सभी सामाजिक सुरक्षा योजनाओं में चावल के संस्करण को अनिवार्य करने की घोषणा की। चावल का संस्करण, लौह, फोलिक एसिड और विटामिन जैसे सूक्ष्म पोषक तत्वों को जोड़ने की एक प्रक्रिया है। चावल में बी12 संस्करण, एक छोटी अवधि के भीतर पोषण समस्या का समाधान करने के लिए एक प्रभावी, निवारक और लागत प्रभावी पूरक रणनीति है। हालांकि, स्वस्थ और विविध आहारों की पहुंच और सामर्थ्य सुनिश्चित करना एक स्थाई दीर्घकालिक रणनीति की कुंजी होगी।

3. **नमक:** भारत ने 1962 में आयोडीन युक्त नमक को अनिवार्य करके संस्करण का विचार शुरू किया था। लौह और आयोडीन की कमी से निपटने के लिए नमक के संस्करण को सबसे अधिक लागत प्रभावी तरीकों में से एक माना जाता है क्योंकि यह सभी आय समूहों और आयु वर्गों द्वारा सार्वभौमिक रूप से उपभोग किया जाता है। दोगुना संस्करणीत नमक अतिरिक्त आयरन और आयोडीन से निर्मित होता है। जब नियमित रूप से खाना पकाने में इसका सेवन किया जाता है, तो यह लौह और आयोडीन की कमी से उत्पन्न होने वाले विकारों को दूर करने में मदद कर सकता है।

4. **खाद्य तेल:** खाद्य तेल के संस्करण को भी 2018 में एफ.एस.एस.ए.आई द्वारा देश भर में अनिवार्य कर दिया गया था। भारत में 57% से अधिक बच्चे विटामिन ए की कमी से पीड़ित हैं। इसके अलावा, गर्भवती महिलाओं और उनके नवजात शिशुओं का एक उच्च अनुपात विटामिन डी की कमी से ग्रस्त है। विटामिन डी को कई पुरानी बीमारियों के जोखिम को कम करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के लिए माना जाता है, जिसमें कैंसर, ऑटोइम्यून रोग, संक्रामक रोग, मधुमेह और हृदय रोग शामिल हैं। भारत में घरेलू उपभोक्ता व्यय सर्वेक्षण, एन.एस.एस.ओ. रिपोर्ट 2011 के अनुसार, तेल की खपत काफी अधिक है, लगभग 20-30 ग्राम/व्यक्ति/दिन तेल की खपत की जाती है। चूंकि विटामिन ए और डी वसा में घुलनशील विटामिन हैं, खाद्य तेलों और वसा का विटामिन ए और डी के साथ संस्करण सूक्ष्म पोषक तत्वों से उत्पन्न होने वाले कुपोषण को दूर करने के लिए एक अच्छी रणनीति है और संस्करणीत तेल विटामिन ए और डी के लिए अनुशंसित आहार का 25% -30% प्रदान करने के लिए जाना जाता है।

5. **दूध:** दूध का संस्करण 2017 में शुरू किया गया। भारतीय राष्ट्रीय डेरी विकास बोर्ड कंपनियों को विटामिन डी संस्करण के लिए प्रेरित कर रहा है। जब दूध को संसाधित किया जाता है, तो दूध में वसा में घुलनशील विटामिन की थोड़ी कमी होती है। इसके अलावा, जनसंख्या समूह जो दूध की कम वसा वाली किस्म को पसंद करते हैं, आमतौर पर इन महत्वपूर्ण सूक्ष्म पोषक तत्वों से वंचित होते हैं। ये ऐसे क्षेत्र हैं जहां लोग शारीरिक रूप से कम सक्रिय होते हैं और सूर्य के प्रकाश के संपर्क में बहुत सीमित होते हैं। सभी जनसंख्या समूहों द्वारा दूध का सेवन किया जाता है, और इसलिए, सूक्ष्म पोषक तत्वों से उत्पन्न होने वाले कुपोषण को दूर करने के दूध का संस्करण एक अच्छी रणनीति है।

संस्करण के लाभ

1. संस्करण बहुत कम लागत पर पोषण सुनिश्चित करती है - एक लीटर तेल को संस्करण करने के लिए केवल 15 पैसे और एक लीटर दूध के लिए 2 पैसे लागत आती है।
2. संस्करण के लिए भोजन की आदतों और लोगों के रहन-सहन में किसी भी बदलाव की आवश्यकता नहीं होती है। यह लोगों को पोषक तत्व प्रदान करने का एक सामाजिक-सांस्कृतिक रूप से स्वीकार्य तरीका है।
3. हालांकि सूक्ष्म पोषक तत्वों को जोड़ा जाता है, संस्करण से भोजन के स्वाद, सुगंध, बनावट या रूप में कोई बदलाव नहीं होता है। उदाहरण के लिए, चावल की संस्करण के लिए, आवश्यक पोषक तत्वों के साथ चावल के आटे को मिलाकर संस्करणीत चावल का निर्माण किया जाता है। संस्करणीत चावल की चमक, पारदर्शिता, स्थिरता और स्वाद में कोई अंतर नहीं होता है।

4. संस्करणीत खाद्य पदार्थ पोषक तत्वों की कमी को कम करने में भी बेहतर होते हैं जो खाद्य आपूर्ति में मौसमी कमी या खराब गुणवत्ता वाले आहार के परिणामस्वरूप हो सकते हैं। यह बढ़ते बच्चों के लिए एक महत्वपूर्ण लाभ है, जिन्हें वृद्धि और विकास के लिए सूक्ष्म पोषक तत्वों की निरंतर आपूर्ति की आवश्यकता होती है, और महिलाओं के लिए जिन्हें पर्याप्त पोषक तत्वों के भंडार के साथ गर्भावस्था और स्तनपान की अवधि में प्रवेश करने की आवश्यकता होती है।

संस्करण के साथ मुद्दे

1. भारत में स्वास्थ्य विशेषज्ञों के एक समूह ने खाद्य संस्करण के माध्यम से कुपोषण से लड़ने की देश की रणनीति के बारे में चिंता व्यक्त की है। उन्होंने सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को दूर करने के लिए नए रासायनिक हस्तक्षेपों को लागू करने में "अत्यधिक सावधानी" के लिए तर्क दिया।

2. जब भारत में कुपोषण की बात आती है, तो समस्या कैलोरी अपर्याप्तता, प्रोटीन अपर्याप्तता और आहार विविधता की गंभीर कमी से जुड़ी होती है।

3. ग्रामीण क्षेत्रों में गरीब बच्चों में रक्ताल्पता अधिक है, लेकिन देश भर में शहरी और अमीरों के बीच लोहे की कमी अधिक है। रक्ताल्पता, हीमोग्लोबिन संश्लेषण अकेले लोहे की कमी के कारण नहीं होता है इसके बजाए लाल रक्त कोशिका बनने के लिए कई अन्य तत्वों की बहुत बड़ी मात्रा में आवश्यकता है, विशेष रूप से अच्छी गुणवत्ता वाले प्रोटीन, विटामिन बी और सी, फोलिक एसिड। अधिक लौह तत्व के सेवन से केवल फेरिटिन प्रोटीन (एक लोहे का भंडारण प्रोटीन) बढ़ेगा, लेकिन हीमोग्लोबिन संश्लेषण, या एनीमिया के उपचार का कारण नहीं बनेगा।

4. लोहे में ऑक्सीडेटिव गुण होते हैं और यह आंतों के म्यूकोसा के साथ प्रतिक्रिया कर सकता है, जो अन्य प्रकार के संक्रमणों से क्षतिग्रस्त हो सकता है, जो भारत में व्यापक हैं। जब तपेदिक, मलेरिया और अन्य संक्रमण के तीव्र चरण में लौह तत्व दिया जाता है तो ये संक्रमण बेकाबू हो जाते हैं। नए सबूत बताते हैं कि उच्च फेरिटिन मधुमेह से जुड़ा हुआ है, खासकर गर्भावस्था के दौरान।

5. कभी-कभी, संस्करण का विपरीत प्रभाव पड़ सकता है। प्राकृतिक खाद्य पदार्थों में पादप रसायन और बहु-असंतृप्त वसा जैसे सुरक्षात्मक पदार्थ होते हैं जो सूक्ष्म पोषक तत्वों के संस्करण की प्रक्रिया से प्रतिकूल रूप से प्रभावित होते हैं।

6. शोधकर्ता चिंतित हैं कि खाद्य संस्करण एक अंतरराष्ट्रीय बाजार संचालित समाधान है और उद्योग की मदद करने के लिए है।

7. खाद्य संस्करण बहुत महंगा है, केवल सामाजिक सुरक्षा नेटवर्क के माध्यम से वितरित चावल के संस्करण व्यय से सरकारी खजाने को सालाना लगभग 2,600 करोड़ रुपये का नुकसान होता है।

उपाय

1. खाद्य संस्करण के बजाए, आहार की गुणवत्ता में सुधार किया जाना चाहिए। पशु स्रोतों और फलों से खाद्य पदार्थों का सेवन बढ़ाना अधिक सहायक होगा। भारतीय सामान्य आबादी की आवश्यकता को पूरा करने के लिए एक विविध प्राकृतिक आहार की आवश्यकता है।

2. स्कूल भोजन कार्यक्रमों को सब्जियों और फलों के साथ अंडे, डेयरी, दालों जैसे पशु और पौधे के प्रोटीन को जोड़कर आहार विविधता को बढ़ाने की आवश्यकता है।

3. एक अध्ययन से पता चला है कि जैविक रसोई उद्यानों में उगाई जाने वाली सब्जियां हीमोग्लोबिन के स्तर को बढ़ाती हैं।

4. सार्वजनिक वितरण प्रणाली में कम संसाधित या अपरिमार्जित चावल शामिल करने की आवश्यकता है। यह सुनिश्चित करेगा कि चावल की भूसी, विभिन्न सूक्ष्म पोषक तत्वों का एक समृद्ध स्रोत लोगों तक पहुंचे।

5. स्थानीय समुदायों, किसानों और अन्य लोगों को स्थानीय पोषण कार्यक्रमों के साथ जुड़ने की आवश्यकता है। वे कच्चे माल के साथ-साथ किसी भी स्थानीय रूप से तैयार किए गए खाद्य-से-खाद्य किले जैसे सिरप, बिस्कुट, दलिया, पाउडर और स्टार्चयुक्त खाद्य पदार्थों, सब्जियों, फलों, फूलों, सूखे मेवे, तेलों और पशु उत्पादों जैसे स्थानीय अवयवों से बने विभिन्न उत्पादों की आपूर्ति कर सकते हैं। अध्ययनों से पता चलता है कि इस तरह के खाद्य संस्करण पोषण में बहुत सुधार करते हैं, जबकि स्थानीय आजीविका का समर्थन करते हैं।

सुझाव

विश्व स्तर पर कुपोषण को दूर करने की क्षमता के साथ खाद्य संस्करण एक लागत प्रभावी हस्तक्षेप है। खाद्य पदार्थों के संस्करण पर किए गए अध्ययनों ने न केवल कमजोर आबादी, विशेष रूप से महिलाओं और बच्चों के बीच सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी के नियंत्रण और रोकथाम में, बल्कि सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय आयामों के साथ भी सकारात्मक परिणाम दिखाए हैं। लेकिन खाद्य संस्करण को आगे बढ़ाने के साथ-साथ, वैकल्पिक आहार आधारित स्थाई समाधानों पर बेहतर उपयोग किया जाए और सार्वजनिक क्षेत्र में आम जनता को गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ्य देखभाल तक पहुंच सुनिश्चित की जानी चाहिए।

चित्र: खाद्य पदार्थों का सुदृढ़ीकरण

श्री अन्न (मिलेट्स) : उत्तम खाद्य (सुपरफूड)

मौहम्मद हसनैन[1], श्रीपति द्विवेदी[2], संदीप कुमार[3], राघवेंद्र सिंह[4], विनोद कुमार सिंह[5] एवं अवनीश कुमार[6]

[1]भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, पूसा, बिहार
[2]डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर बिहार
[3,1]भा.कृ.अनु.प.-राष्ट्रीय मृदा सर्वेक्षण एवं भूमि उपयोग नियोजन ब्यूरो, क्षेत्रीय केंद्र, जोरहाट, असम
[4]भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि प्रणाली अनुसंधान संस्थान, मेरठ
[5]भा.कृ.अनु.प.-केंद्रीय बारानी कृषि अनुसंधान संस्थान, हैदराबाद
[6]भा.कृ.अनु.प.-राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान, करनाल, हरियाणा

सारांश

भारतीय श्री अन्न (मिलेट्स) एक पौष्टिक समृद्ध, सूखा सहिष्णु फसल है जो भारत के शुष्क और अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में प्रमुखतः उगाई जाती है। यह मुख्यतः छोटे बीज वाली घास के तरह जो वनस्पति प्रजाति "(च्वंबमंम)" से संबंधित हैं। यह लाखों संसाधन रहित गरीब किसानों के लिए खाद्य एवं पशु-चारे का एक महत्वपूर्ण स्रोत हैं तथा भारत की पारिस्थितिकी और आर्थिक सुरक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस श्री अन्न (मिलेट्स) को मोटा अनाज या गरीबों के अनाज के रूप में भी जाना जाता है। बदलते जलवायु परिवर्तन में यह एक उचित विकल्प है, जो कम संसाधनो मे भी पैदा किया जा सकता है। भारतीय श्री अन्न (मिलेट्स) पौष्टिकता से गेहूं और चावल की तुलना में प्रोटीन, विटामिन, और खनिजों से भरपूर है, जो इसे एक स्वस्थ आहार बनाता है। यह ग्लूटेन-मुक्त होने के साथ-साथ इसमें ग्लाइसेमिक इंडेक्स भी निम्न है, जिससे इसका सेवन मधुमेह रोगियों के लिए भी सुरक्षित है। इसका उत्पादन बढ़ाना और सही नियंत्रण के साथ उपभोग को बढ़ाना आवश्यक है, ताकि खाद्य और पोषण सुरक्षा सुनिश्चित हो सके और साथ ही किसानों को भी लाभ हो सके।

परिचय

भारत सरकार ने राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन के तहत मोटे अनाजों के उत्पादन में वृद्धि के लिए पहल की है। इसके तहत, भारत में मिलेट्स के उत्पादन में वृद्धि करने का लक्ष्य है, जिससे किसानों को आर्थिक लाभ हो, खाद्य सुरक्षा में सुधार हो, और पोषण में वृद्धि हो। वर्ष 2021 में, भारत ने मिलेट्स के उत्पादन में 41% हिस्सेदारी के साथ सबसे बड़ा उत्पादक देश बना, इसके बाद नाइजर (12%) और चीन (8%) है। मिलेट्स की खपत को बढ़ाने के लिए, सही खेती तकनीकों का अनुसरण करना और उनके स्वास्थ्य लाभों को बढ़ाना महत्वपूर्ण है। संयुक्त राष्ट्र ने भी भारत के प्रस्ताव को समर्थन दिया और वर्ष 2023 को अंतरराष्ट्रीय मिलेट्स वर्ष घोषित किया। इसका उद्देश्य जागरूकता बढ़ाना और मिलेट्स के उत्पादन और खपत को बढ़ाना है। एफएओ (रोम, इटली) में इस अवसर पर अंतरराष्ट्रीय मिलेट्स वर्ष 2023 का उद्घाटन समारोह भी आयोजित किया। इस पहल द्वारा, भारत मिलेट्स के उत्पादन में वृद्धि करके किसानों को लाभ पहुंचाने के साथ-साथ पोषण, खाद्य सुरक्षा, और अधिक सारे क्षेत्रों में सुधार करने का प्रयास कर रहा है।

श्री अन्न (मिलेट्स) के लाभ

- श्री अन्न, या मिलेट्स, एक व्यापक श्रृंखला है जो सूखे के परिस्थितियों के लिए अत्यधिक अनुकूल है।
- इसके उत्पादन के लिए न्यूनतम वर्षा, सिंचाई, उर्वरक, और कीटनाशकों की आवश्यकता होती है।
- इसमें बेहतर सूक्ष्म पोषक तत्व होते हैं और यह श्रृंगारित पौष्टिकता से भरपूर है।
- इसका ग्लाइसेमिक इंडेक्स निम्न होता है और मधुमेह की रोकथाम में मदद कर सकता है। यह आयरन, जिंक, और कैल्शियम का उपयुक्त स्रोत है और ग्लूटेन-मुक्त होने के कारण सेलिएक रोगियों के लिए उपयुक्त है।

- श्री अन्न ने हाइपरलिपिडिमिया के प्रबंधन, वजन घटाने, उच्च रक्तचाप में सहायक, और कार्बन फुटप्रिंट कम करने में भी सकारात्मक प्रभाव दिखाया है।
- भारत में, श्री अन्न का सेवन फलियों के साथ किया जाता है और इसका उपयोग खाद्य, पशु-चारे, और कुशल खेती के लिए किया जाता है।

श्री अन्न (मिलेट्स) और स्वास्थ्य

मिलेट्स, जो पौष्टिक होने के साथ-साथ जलवायु-लचीला भी है, ने एक सुपरफूड के रूप में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इनमें सूक्ष्म तत्व, गौण तत्व, बायोएक्टिव यौगिक, ग्लूटेन-मुक्त प्रोटीन, और गुणकारी आंतरीय तत्व होते हैं। इनमें मौजूद ग्लाइसेमिक इंडेक्स कम होता है, जिससे मिलेट्स उच्च रक्तशर्क और मधुमेह के रोगियों के लिए भी फायदेमंद हैं। मिलेट्स में बीटा-कैरोटीन, विटामिन बी, विटामिन सी, इत्यादि तत्व प्रचुर मात्रा में होते हैं, जो आंतरिक स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण हैं। इसके बारे में बात करें, तो इनमें फाइबर, पॉलीसेकेराइड, और ग्लूटेन की न्यूनतम मात्रा होती है, जिससे यह बाजार में उपलब्ध अन्य अनाजों की तुलना में आसानी से पाचनीय हैं और उन्हें सेलिएक रोगियों के लिए भी सुरक्षित बनाता है। मिलेट्स की खास बात यह है कि इन्हें बाजार में आसानी से प्राप्त किया जा सकता है और इनका सेवन अनेक विभिन्न विधियों में किया जा सकता है, जैसे कि डोसा, इडली, ब्रेड, सलाद, और कुकीज, जिससे लोगों को विविधता का अनुभव होता है। इसके साथ ही, ये विभिन्न विधियों में इस्तेमाल होने से आधुनिक लाइफस्टाइल के साथ अनुसंधान और उपयोग में वृद्धि होती है। कृषि क्षेत्र में भी मिलेट्स की खेती एक लाभकारी विकल्प हो सकती है, क्योंकि ये फसल टिकाऊ होती है और कम पानी और संसाधनों की आवश्यकता होती है। किसानों के लिए इससे आर्थिक लाभ हो सकता है और इससे खाद्य सुरक्षा में भी सुधार हो सकता है। इस प्रकार, मिलेट्स ने आहार, स्वास्थ्य, और कृषि क्षेत्र में अपनी बेहद महत्वपूर्ण भूमिका निभाई हैं, और इनका सही तरीकें से उपयोग करने से समृद्धि और संतुलनित जीवन की दिशा में सहायता हो सकती है।

बाजरा की पोषण संबंधी जानकारी

मिलेट्स	कार्बोहाइड्रेट (ग्रा.)	प्रोटीन (ग्रा.)	वसा (ग्रा.)	रेशा (ग्रा.)	खनिज (ग्रा.)
बाजरा	67.67	10.6	4.8	1.3	2.3
रागी	72.05	7.3	1.3	3.6	2.7
काकून	63.2	12.3	4	8	3.3
चीना	70.4	12.5	3.1	2.2	1.9
कोदो	66.6	8.3	3.6	9	2.6
कुटकी	65.55	7.7	2.55	7.6	1.5
सांवा	68.8	11.2	3.6	10.1	4.4

श्री अन्न (मिलेट्स) से मूल्यवर्धित उत्पाद:

श्री अन्न (मिलेट्स) से विभिन्न प्रकार के मूल्यवर्धित उत्पाद बना सकते हैं, जैसे पारंपरिक व्यंजनों में रोटी, डोसा, हलवा, पकोड़ा, मिठाई, और समोसा। बेकरी उत्पादों में ब्रेड, केक, बिस्कुट, और खारी शामिल हैं। पास्ता उत्पादों में सेवई, नूडल्स, नमकीन, और मैकरोनी हो सकती हैं। फ्लेक्ड और पॉप्ड उत्पादों में मक्के के दाने के समान मिलेट्स के फ्लेक्ड और पॉप्ड रूप में शामिल हो सकते हैं।

चित्र: बेकरी उत्पद (ब्रेड बिस्कुट इत्यादि)

भारत सरकार द्वारा उठाऐ गए कदम

- भारत सरकार ने मिलेट्स के उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य में वृद्धि की है, जिससे किसानों को प्रोत्साहित किया जा रहा है।
- इसके साथ ही, मिलेट्स को सार्वजनिक वितरण प्रणाली में शामिल करके एक स्थिर बाजार प्रदान करने का प्रयास किया जा रहा है।
- किसानों को बीज किट और इनपुट सहायता के रूप में भी मदद की जा रही है, जिससे मिलेट्स के उत्पादन को बढ़ावा मिल रहा है।
- केंद्रीय महिला एवं बाल विकास मंत्रालय द्वारा कृषि और पोषण के एकीकृत दृष्टिकोण पर कार्य किया जा रहा है, जिससे फसल विविधता और आहार विविधता में अंतर संबद्धता पर शोध को बढ़ावा मिल रहा है। इसके साथ ही, एक अभियान के माध्यम से लोगों के दृष्टिकोण और उपभोक्ता मांग में वृद्धि के लिए कदम उठाया जा रहा है।

निष्कर्ष

जी-20 बैठकों में मिलेट्स पर भी जोर दिया गया है, और प्रतिनिधियों को बैठक के दिन नाश्ते में, किसानों के साथ बैठकों, स्टार्ट-अप और एफपीओ के साथ इंटरैक्टिव सत्रों के माध्यम से मिलेट्स को बढ़ावा मिला। (अंतरराष्ट्रीय मिलेट्स वर्ष 2023 के महोत्सव में) सरकार का समर्पण देखा गया है। हम खाद्य और पोषण सुरक्षा के साथ इन फसलों का उत्पादन बढ़ाएं और उत्पादन, वितरण और उपभोग का नियंत्रण सुनिश्चित हो। भारत सरकार की पहलों की दृष्टि से, खाद्य और किसानों की बढ़ती आय की दिशा में यह एक महत्वपूर्ण कदम है।

कमलम : भारत की एक उभरती हुई फल फसल

धुमेशकुमार चावड़ा, निमिषा शर्मा, राधा मोहन शर्मा, अनिल कुमार दुबे, मुकेश शिवरान एवं विट्ठल हटकारी

फल एवं औद्यानिकी प्रौद्योगिकी संभाग
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110 012

कमलम, जिसे "ड्रैगन फ्रूट" के नाम से भी जाना जाता है, अपने स्वादिष्ट फल और पोषक तत्वों की उपलब्धता के कारण अत्यधिक लोकप्रिय हो रहा है। आजकल यह फल किसानों के साथ-साथ पोषण प्रेमियों के बीच भी काफी लोकप्रियता हासिल कर रहा है। साथ ही कमलम की खेती से अच्छा मुनाफा मिलता है और निर्यात व्यापार में इस फल का बहुत महत्व है। कमलम का वैज्ञानिक नाम *हायलोसेरियस अंडैटस* है, जो कैक्टस पौधों के परिवार कैक्टैसी से संबंधित है। रात में खिलने वाले खूबसूरत फूलों के कारण इसे "रात में खिलने वाला सेरियस", रात की रानी, चांद का फूल और "रात की रानी" भी कहा जाता है। इस फल की उत्पत्ति दक्षिणी अमेरिका से हुई थी। यह मूल रूप से एक बेल है, जो अजैविक तनावों के प्रति सहनशील और कीटों और बीमारियों के प्रति प्रतिरोधी है। इसके कई फायदे हैं, जिनमें कम पानी और पोषक तत्वों की आवश्यकता, बगीचे की स्थापना और रखरखाव के लिए संसाधनों की अपेक्षाकृत कम आवश्यकता शामिल है; एक वर्ष में फलों की एकाधिक फसल; 20 वर्षों तक उच्च उपज बनाए रखने की क्षमता; लागत अनुपात में उच्च लाभ; और उच्च पोषक तत्व और कार्यात्मक गुण, इत्यादि। ये सभी गुण दुनिया भर के उत्पादकों को ड्रैगन फ्रूट की खेती करने और उसका विस्तार करने, वैश्विक निर्यात का अवसर प्रदान करने और बाजार की मांग को पूरा करने के लिए उच्च गुणवत्ता वाले फल उत्पादन के लिए प्रोत्साहित करते हैं।

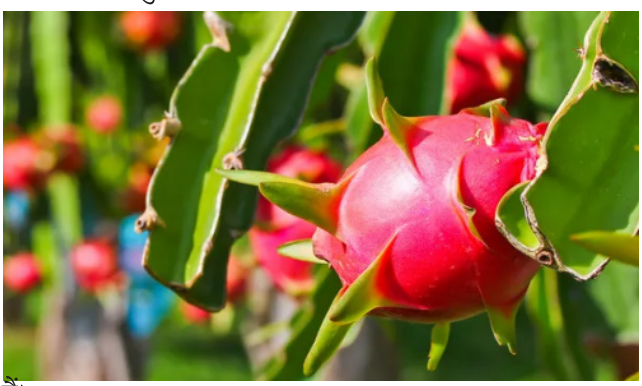

कमलम: भारत की एक बढ़ती हुई फल फसल

आजकल कमलम की खेती लगभग विश्व भर में की जा रही है। कमलम के प्रमुख उत्पादक वियतनाम, चीन, इंडोनेशिया, थाईलैंड, ताइवान, मलेशिया, फिलीपींस, कंबोडिया, अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया, दक्षिण अफ्रीका और दक्षिण अमेरिका के अन्य देश हैं। कमलम के विश्व के प्रमुख आपूर्तिकर्ता देशों को मोटे तौर पर निम्नलिखित तीन मुख्य केंद्रों में विभाजित किया जा सकता है:

1. **एशिया:** वियतनाम, चीन, थाईलैंड, ताइवान, इंडोनेशिया, मलेशिया, फिलीपींस, कंबोडिया, भारत और श्रीलंका।
2. **मध्य पूर्व और यूरोप**: इज़राइल, स्विट्जरलैंड और यूरोपीय संघ।
3. **अमेरिका:** मेक्सिको, कोलंबिया, इक्वाडोर, ग्वाटेमाला और कोस्टा रिका

वर्तमान में विश्व बाजार में चार प्रकार के ड्रैगन फलों को देखा जाता है:

(i) लाल त्वचा, सफ़ेद गूदा (*हायलोसेरियस अंडैटस*),

(ii) लाल त्वचा, लाल गूदा (*हायलोसेरियस पोलिरिज़स*)

(iii) लाल त्वचा, बैंगनी गूदा (*हायलोसेरियस कोस्टारिकेंसिस*)

(iv) पीली त्वचा, सफेद गूदा (*हायलोसेरियस (सेलेनिकेरस) मेगालैंथस*)

जिनमें से, कमलम के विश्व बाजार में *हायलोसेरियस अंडैटस* का प्रभुत्व 94% है।

भारत में कमलम की खेती की शुरुआत 1990 के दशक के अंत में हुई थी , उस समय इस फल के बारे में लोगों को

हायलोसेरियस अंडैटस

हायलोसेरियस पोलिरिज़स

हायलोसेरियस कोस्टारिकेंसिस

हायलोसेरियस मेगालैंथस

बहुत कम जानकारी थी। इसके बाद, 2005-2017 के दौरान विभिन्न राज्यों में इसकी खेती का क्षेत्रफल धीरे-धीरे 4 से 400 हैक्टेयर तक बढ़ गया। वर्ष 2018 के बाद, बढ़ती मांग, उद्यमियों के प्रयासों, प्रगतिशील उत्पादकों, राज्य कृषि विभाग के अधिकारियों और देश भर में सरकार के समर्थन के कारण ड्रैगन फ्रूट की खेती में तेजी से वृद्धि हुई है। प्रारंभ में ड्रैगन फ्रूट की खेती कर्नाटक, महाराष्ट्र, गुजरात, केरल, तमिलनाडु, ओडिशा, पश्चिम बंगाल, आंध्र प्रदेश, तेलंगाना और अंडमान और निकोबार द्वीप समूह के किसानों द्वारा शुरू की गई थी। आजकल इसकी खेती राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश और उत्तर पूर्वी राज्यों तक फैल गई है। हाल के अनुमानों के अनुसार, भारत में ड्रैगन फ्रूट की खेती लगभग 4,000 हैक्टेयर क्षेत्र में की जा रही है, तथा इसका वार्षिक उत्पादन 12,000 टन है।

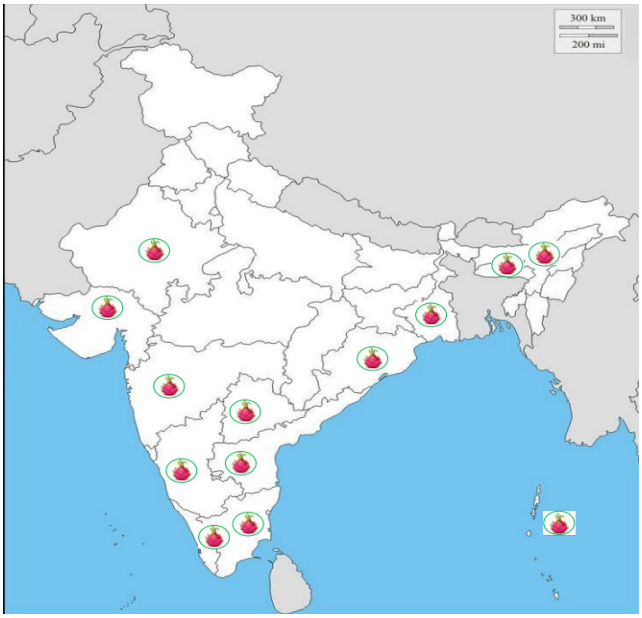

भारत के प्रमुख कमलम उत्पादक राज्य

कमलम की मानव स्वास्थ्य में उपयोगिता:

कमलम हमारे शरीर को स्वस्थ रखने में अहम भूमिका निभाता है, जो निम्नलिखत है।

- रक्त शर्करा को नियंत्रित करता है।
- कैंसर पैदा करने वाले मुक्त कणों को रोकता है, ट्यूमर कोशिकाओं के विकास को रोकता है।
- यह सूजन और जोड़ो के दर्द को काम करने के साथ ही घावों को भरने में मदद करता है।
- प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करने में मदद करता है जिससे बीमारियों से बचाव होता है।
- दृष्टि में सुधार करता है।
- वजन घटाने में सहायक, उपापचय दर को बढ़ाता है।
- यह कोलेस्ट्रॉल को कम करता है, जिससे हृदय रोग से सुरक्षा होती है।
- त्वचा की झुर्रियाँ कम करता है, त्वचा को मुलायम बनाता है।
- तंत्रिका कोशिकाओं के निर्माण, उचित रक्त प्रवाह में सहायता करता है।
- हड्डियों के द्रव्यमान में सुधार करता है और ऑस्टियोपोरोसिस को रोकता है।
- उच्च फाइबर पाचन में मदद करता है।

कमलम की लोकप्रियता के महत्वपूर्ण कारक:

- उच्च पोषक मूल्य।
- स्थानीय और अंतरराष्ट्रीय बाजार में निर्यात मांग।
- मिट्टी और जलवायु के संबंध में व्यापक अनुकूलन।
- प्रसंस्करण उद्योग में मांग।
- खेती में आसानी।
- फसल विविधीकरण में सहायता।
- दूसरे वर्ष में उत्पादन के साथ तेजी से आय बढाता है एवं तीसरे वर्ष से आर्थिक उत्पादन होता है।
- स्थानीय स्तर पर उपलब्ध जैविक खाद और कम्पोस्ट का उपयोग करके भी इसे जैविक रूप से उगाया जा सकता है।
- पारंपरिक रूप से उगाई जाने वाले फलों की तुलना में पौधे को कम लागत और देखभाल की आवश्यकता होती है।
- कम जगह की आवश्यकता होती है, तथा प्रति इकाई क्षेत्र में अधिक पौधे लगाए जा सकते हैं।
- सरकारी सब्सिडी।

इन कारणों से, कमलम फल किसान समुदाय के बीच लोकप्रियता हासिल कर रहा है, साथ ही यह फल विभिन्न मिट्टी और जलवायु परिस्थितियों के लिए बहुत अनुकूल है।

जलवायु परिवर्तन और कमलम

भारत में जलवायु परिवर्तन ने अजैविक और जैविक तनावों को प्रेरित किया, जैसे कभी-कभार और बार-बार सूखा, बाढ़, व्यापक भूमि क्षरण,लवणता/क्षारीयता, अत्यधिक तापमान, कीट और बीमारियां, विशेषकर कम उपजाऊ, बंजर भूमि और अर्ध-शुष्क सूखाग्रस्त क्षेत्रों में कृषि के लिए महत्वपूर्ण चुनौतियां दर्शाती हैं। इसलिए, कृषि क्षेत्र में जलवायु परिवर्तन के कारण होने वाली समस्याओं को दूर करने के लिए, आय बढ़ाने के साथ-साथ कृषि क्षेत्रों को बचाने के लिए फसल विविधीकरण एक नया उपकरण है। विशेष रूप से यह फसल शुष्क और अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में सबसे अच्छी साबित होती है जहां पानी की कमी की समस्या होती है, क्योंकि इस फल को उगाने के लिए कम पानी की आवश्यकता होती है।

पौधो की उपलब्धता

बागवानी के एकीकृत विकास के लिए मिशन (MIDH) इस फसल की खेती का समर्थन करता है। MIDH के तहत क्षेत्र विस्तार का लक्ष्य 5 वर्षों में 50,000 हैक्टेयर है। इस फल की खेती के लिए पौधे एवं मार्गदर्शन निम्नलिखित स्थानों से प्राप्त किए जा सकते हैं:

भा.कृ.अनु.प.-केंद्रीय द्वीप कृषि अनुसंधान संस्थान, पोर्ट-ब्लेयर, अंडमान और निकोबार द्वीप समूह,

भा.कृ.अनु.प.-बागवानी अनुसंधान संस्थान (IIHR) बेंगलुरु, कर्नाटक,

भा.कृ.अनु.प.-राष्ट्रीय अजैविक स्ट्रस प्रबंधन संस्थान, बारामती, पुणे

राज्य कृषि विश्वविद्यालय

एन एच बी मान्यता प्राप्त फल नर्सरी।

कमलम के लिए नर्सरी

कमलम की खेती एवं उत्पादन प्रौद्योगिकी

रोपण: ड्रैगन फ्रूट के पौधे आसानी से तने की कटिंग के ज़रिए बढ़ सकते हैं। आम तौर पर रोपण के लिए 20-25 सेमी लंबे तने की कटिंग का इस्तेमाल किया जाता है। कटिंग को रोपण से एक-दो दिन पहले तैयार किया जाना चाहिए और कट से निकलने वाले लेटेक्स को सूखने दिया जाना चाहिए। इन कटिंग को 12 x 30

सेमी आकार के पॉलीथीन बैग में लगाया जाता है, जिसमें मिट्टी, खेत की खाद और रेत का 1:1:1 अनुपात भरा होता है। बैग को जड़ जमाने के लिए छायादार जगह पर रखा जाता है। कटिंग को सड़ने से बचाने के लिए ज़्यादा नमी से बचना चाहिए। ये कटिंग बहुत ज़्यादा जड़ें जमाती हैं और 5-6 महीने में रोपण के लिए तैयार हो जाती हैं

ड्रैगन फ्रूट की खेती के लिए रोपण के लिए पूर्ण सूर्यप्रकाश वाला खुला क्षेत्र पसंद किया जाता है। आम तौर पर सिंगल पोस्ट सिस्टम में रोपण 3x3 मीटर की दूरी पर किया जाता है। पोल की सिंगल पोस्ट ऊर्ध्वाधर ऊंचाई 1.5 मीटर से 2 मीटर होती है। ड्रैगन फ्रूट को पोल के पास लगाया जा सकता है ताकि वे आसानी से चढ़ सकें। प्रति पोल पौधों की संख्या 2 से 4 पौधे हो सकती है। संतुलित झाड़ी बनाए रखने के लिए गोल धातु/कंक्रीट फ्रेम की व्यवस्था करना महत्वपूर्ण है। आधार संरचना के रूप में लोहे के खंभे और टायर का उपयोग करके लागत प्रभावी संरचनाओं का भी उपयोग किया जा रहा है। रोपण का मौसम आम तौर पर ग्रीष्मकाल (जून-अगस्त) होता है।

कच्छ, गुजरात की बंजर भूमि में कमलम की खेती

पौधों का प्रशिक्षण

ड्रैगन फ्रूट के पौधे तेजी से बढ़ने वाली बेल हैं और शुरूआती चरण में अधिक घनी शाखाएं पैदा करते हैं। पार्श्व कलियों और शाखाओं को स्टैंड की ओर बढ़ने के लिए काट दिया जाना चाहिए। एक बार जब बेलें स्टैंड के शीर्ष तक पहुंच जाती हैं, तो शाखाओं को बढ़ने दिया जाता है। मुख्य तने की नोक को हटाने से नई टहनियों को पार्श्व में बढ़ने और वलय पर चढ़ने की अनुमति मिलती है ताकि बेलों की छतरी जैसी संरचना बन सके जहां फूल निकलेंगे और फलों में विकसित होंगे जो पार्श्व शाखाओं को प्रेरित करेंगे। इस छंटाई को संरचनात्मक छंटाई या ट्रेलिस पर एक संरचना बनाना कहा जाता है। अच्छी तरह से विकसित बेल एक वर्ष में 30 से 50 शाखाएं और चार वर्षों में 100 से अधिक शाखाएं पैदा कर सकती है।

पौधों का प्रशिक्षण

पोषण:

ड्रैगन फ्रूट के पौधे की जड़ प्रणाली सतही होती है और पोषक तत्वों की सबसे छोटी मात्रा को भी तेजी से आत्मसात कर सकती है। आम तौर पर, ड्रैगन फ्रूट के रोपण के समय 10-15 किलोग्राम एफ वाई एम या जैविक खाद और 100 ग्राम एस एस पी/पौधा अनिवार्य है। शुरुआती दो वर्षों के लिए हर साल प्रति पौधे लगभग 300 ग्राम N, 200 ग्राम P और 200 ग्राम K आवश्यक है। परिपक्व पौधे को 3 महीने के अंतराल पर चार बराबर खुराकों में 540 ग्राम N, 720 ग्राम P और 300 ग्राम K दिया जाना चाहिए।

खरपतवार प्रबंधन

ड्रैगन फ्रूट की खेती में खरपतवार नियंत्रण एक महत्वपूर्ण कार्य है, खरपतवार मैट का उपयोग खरपतवारों की वृद्धि को

प्रभावी ढंग से कम करता है और मिट्टी की नमी को बनाए रखने में भी मदद करता है। पौधों की नियमित रूप से छंटाई करें ताकि एक खुला और प्रबंधनीय छतरी के आकार का चंदवा प्राप्त हो जो अगले फसल के मौसम के लिए नए अंकुरों को प्रेरित करेगा।

सिंचाई

नियमित सिंचाई महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह पौधे को न केवल सबसे अनुकूल समय पर फूल देने के लिए बल्कि फलों के विकास को सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त भंडार बनाने में सक्षम बनाता है। बेहतर उपज और विकास के लिए ड्रिप सिंचाई फायदेमंद पाई गई है। फ्लैड सिंचाई की सिफारिश नहीं की जाती है क्योंकि इससे पानी बर्बाद होता है और खरपतवार बढ जाती है। गर्मियों/शुष्क दिनों के दौरान प्रति पौधे को सप्ताह में दो बार लगभग 2-4 लीटर पानी देना पर्याप्त है।

पौध संरक्षण उपाय

सामान्य तौर पर ड्रैगन फ्रूट प्रमुख कीटों और बीमारियों के प्रति सहनशील होता है। कुछ महत्वपूर्ण रोग जैसे एन्थ्रेक्नोज, भूरे धब्बे और स्टेम रॉट ड्रैगन फ्रूट की फसल को प्रभावित करते हैं। भारी वर्षा और अधिक पानी या जलभराव की स्थिति फसल को इन रोगों के लिए प्रेरित करती है। एन्थ्रेक्नोज को 2 ग्राम/लीटर पर क्लोरोथालोनिल/मैन्कोजेब के साथ छिड़काव करके रोका जा सकता है और 1 ग्राम/लीटर पर कार्बेन्डाजिम के साथ छिड़काव करके ठीक किया जा सकता है। फल कभी-कभी चींटियों, चमगादड़, चूहों और पक्षियों से संक्रमित होते हैं। इसे फसल स्वच्छता, कॉपर सल्फेट का उपयोग करके रासायनिक नियंत्रण, फलों की थैली, मिट्टी में संशोधन और बंध्यीकरण जैसे कुछ नियंत्रण उपायों द्वारा आसानी से प्रबंधित किया जा सकता है।

कटाई और उपज

भारत में ड्रैगन फ्रूट की कटाई का सबसे आदर्श समय जून-अक्टूबर है। पौधे रोपण की तिथि से 12-15 महीने बाद उपज देना शुरू कर देते हैं। फूल आने के 25-35 दिन बाद ड्रैगन फ्रूट कटाई के लिए तैयार हो जाते हैं। आमतौर पर अपरिपक्व फल की बाहरी चमकीली हरी त्वचा पकने की प्रक्रिया के अंत में धीरे-धीरे लाल हो जाती है। रंग परिवर्तन के सात दिनों के बाद कटाई का उचित समय है। कटाई के लिए केवल पके हुए फलों का चयन किया जाना चाहिए ताकि सप्ताह के दौरान दो बार कटाई की जा सके। फलों को बिना नुकसान पहुंचाए छंटाई करने वाले चाकू का उपयोग करके मैनुअल रूप से काटा जाता है। फिर, काटे गए फलों को पैकेजिंग या भंडारण कक्ष में स्थानांतरित करने से पहले तुरंत छाया में स्थानांतरित कर देना चाहिए।

प्रति वर्ष प्रति पिलर (3-4 पौधे) औसत उपज लगभग 15 किलोग्राम है। फलों का वजन 300 से 500 ग्राम तक होता है। रोपण के 2 वर्ष बाद औसत आर्थिक उपज 10 टन/एकड़ है। वर्तमान में बाजार दर 100 रुपये प्रति किलोग्राम फल है, इसलिए प्रति वर्ष फलों की बिक्री से होने वाली आय 10,00,000 रुपये है। इस फल का लाभ : लागत अनुपात 2.58 है।

निष्कर्ष

कमलम, अपने अत्यधिक पोषण के साथ-साथ निर्यात मूल्य के कारण, यह एक उच्च कीमत दिलाने वाली फसल है। साथ ही यह फल किसानों और पोषण प्रेमियों द्वारा पसंद किया जाता है। यह फसल पूरे भारत में लोकप्रियता हासिल कर रही है। आने वाले वर्षों में सरकारी समर्थन और उत्साही लोगों के प्रयासों के कारण, यह फल भारत की प्रमुख फलों की फसल में से एक होगा।

मोटे अनाजों का महत्व और पोषण सुरक्षा के लिए इनसे निर्मित व्यंजन

के. उषा एवं भूपिंदर सिंह

पर्यावरण विज्ञान संभाग

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110 012

मोटे अनाजों को 'चमत्कारिक अनाज' या 'भविष्य की फसल' कहा जाता हैं क्योंकि ये न केवल विपरीत परिस्थितियों में विकसित हो सकते हैं बल्कि सूखा प्रतिरोधी फसलें हैं जिन्हें कम बाहरी निवेश की आवश्यकता होती हैं। ये द्विउद्देशिम वाली फसलें हैं, जिनकी खेती भोजन और चारे दोनों के रूप में की जाती हैं, इस प्रकार लाखों परिवारों को खाद्य सुरक्षा एवं आजीविका प्रदान करते हैं और खेती की आर्थिक दक्षता में योगदान करते हैं। ये जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को कम करने में योगदान देते हैं क्योंकि यह वायुमंडलीय कार्बन डाइऑक्साइड को कम करने में मदद करते हैं । इसके विपरीत, गेहूं तापीय रूप से संवेदनशील फसल हैं और मीथेन उत्सर्जन के माध्यम से जलवायु परिवर्तन में धान का प्रमुख योगदान हैं। इनके उत्पादन में रासायनिक उर्वरकों के कम उपयोग से सुगमता से उत्पादन किया जा सकता है। ये फसलें कीटों को भी कम आकर्षित करती हैं।

मोटे अनाज घासकुल परिवार से संबंधित अनाजों का एक समूह हैं, जिसे आमतौर पर घास परिवार के रूप में जाना जाता हैं। पूरे अफ्रीका और एशिया के विकासशील देशों में इसका व्यापक रूप से खाद्य के रूप में उपयोग किया जाता हैं। मोटे अनाजों ने पश्चिम में लोकप्रियता हासिल की हैं क्योंकि वे लस मुक्त हैं और इनमें उच्च प्रोटीन, फाइबर और एंटीऑक्सीडेंट की प्रचुरता होती हैं। यह लेख इनके बारे में जानने के लिए आवश्यक सभी चीजों की समीक्षा करता है, जिसमें उनके पोषक तत्व एवं लाभ शामिल हैं।

मोटे अनाजों के पोषण और औषधीय मूल्य

मोटे अनाज अपने पोषक मूल्यों में उल्लेखनीय हैं, चाहे वह विटामिन, खनिज, आहार फाइबर या अन्य पोषक तत्व हों। यह पोषक तत्वों की दृष्टि से गेहूं और चावल से लगभग 3 से 5 गुना बेहतर है। पॉलीफेनोल्स, एंटीऑक्सिडेंट्स और कोलेस्ट्रॉल कम करने वाले मोम का एक महत्वपूर्ण स्रोत हैं। मोटे अनाज मोटापे को रोकने में मदद करते हैं, उच्च रक्तचाप, सीवीडी, टी2डीएम, कैंसर के जोखिम को कम करते हैं और कम ग्लाइसेमिक उपलब्धता के साथ उच्च आहार फाइबर सामग्री के कारण कब्ज को रोकने में भी मदद करते हैं।

मोटे अनाज कैल्शियम, आयरन, जिंक, फॉस्फोरस, मैग्नीशियम और पोटेशियम जैसे खनिजों का समृद्ध स्रोत हैं। इनमें आहार फाइबर और विटामिन जैसे फोलिक एसिड, विटामिन बी 6, β-कैरोटीन और नियासिन की मात्रा भी अधिक होती हैं। उच्च मात्रा में लेसिथिन की उपलब्धता तंत्रिका तंत्र को मजबूत करने के लिए उपयोगी होती हैं। इसलिए बाजरे के नियमित सेवन से कुपोषण को दूर करने में मदद मिल सकती हैं। हालांकि ये टैनिन, फाइटोस्टेरॉल, पॉलीफेनोल्स और एंटीऑक्सिडेंट जैसे फाइटोकेमिकल्स से भरपूर होते हैं, लेकिन उनमें कुछ पोषण-विरोधी कारक होते हैं जिन्हें कुछ प्रसंस्करण उपचारों द्वारा कम किया जा सकता हैं।

भारत में मोटे अनाजों के प्रकार

भारत में आमतौर पर उगाए जाने वाले मोटे अनाजों में ज्वार (सोरगम), रागी (उंगली बाजरा), झंगोरा (बार्नयार्ड बाजरा), बैरी (प्रोसो या आम बाजरा), कांगनी (लोमड़ी/इतालवी बाजरा), कोदरा (कोदो बाजरा) शामिल हैं। मोटे अनाजों में अनुकूलन की व्यापक क्षमता होती हैं क्योंकि वे आंध्र प्रदेश के तटीय क्षेत्रों से लेकर उत्तर-पूर्वी राज्यों के मध्यम ऊंचाई वाले क्षेत्रों और उत्तराखंड के पहाड़ी क्षेत्रों तक उगाए जाते हैं। हमारे देश के लिए खाद्य और पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए, इन पोषक तत्वों से भरपूर फसलों को अपने दैनिक आहार में शामिल करना महत्वपूर्ण हैं। नाश्ते, दोपहर के भोजन या रात के खाने के लिए कुछ सामान्य भारतीय व्यंजन नीचे दिए गए हैं।

मोटे अनाजों से निर्मित व्यंजन

पकाने से पहले की तैयारी

मोटे अनाज के दानों को साफ पानी से एक दो बार साफ कर लें और अंत में पूरा पानी निकाल दें। दानों को पकाने से पहले 4 से 8 घंटे के लिए भिगोने से इन्हें पचाना आसान हो जाता हैं और सभी पोषक तत्व जैवउपलब्ध हो जाते हैं। भिगोने से बाजरे का दलिया मलाईदार बनावट या फूला हुआ उत्पाद देता हैं। आप पके हुए दानों को सलाद के रूप में उपयोग कर सकते हैं। इस व्यंजन को बनाने के लिए एक मोटे तले का बर्तन या पैन गरम करें। खाना पकाने के बर्तन में सूखे दाने और पानी डालें, और इसे ढक्कन के साथ आंशिक रूप से बंद कर दें। भीगे हुए मोटे अनाज के लिए, प्रत्येक 1 कप मोटे अनाज के लिए 1.5 कप पानी का उपयोग करें। बिना भीगे हुए बाजरे के लिए, दानों और पानी का अनुपात 1:2 रखें अर्थात, 1 कप मोटे अनाज में 2 कप पानी का उपयोग करें। आंच को ऊंचा बढ़ाएं और पानी को उबलने दें। इसमें लगभग 5 मिनट का समय लगेगा। अब आंच धीमी कर दें और ढक्कन को पूरी तरह से बंद कर दें। दानों को तब तक पकने दें जब तक कि सारा पानी सोख न ले। पहले से भीगे हुए दानों के लिए लगभग 6 से 8 मिनट और बिना भिगोए दानों के लिए 10-13 मिनट का समय लगेगा। जब सारा पानी सूख जाए तो मान लें कि दाने पक गए हैं। अब आंच बंद कर दें और इसे दस मिनट के लिए ठंडा होने दें। 10 मिनट के बाद, पका हुआ मोटा अनाज इस्तेमाल के लिए तैयार हैं।

रागी गेंहूं डोसा

एक हल्का और कुरकुरा डोसा भारत की पहचान है जिसे सब खाना चाहेंगे। रागी गेंहूं डोसा सिर्फ चार सामग्रियों से बनी डोसा रेसिपी हैं। इसके लिए पहले आप रागी और गेहूं के आटे को छाछ और नमक के साथ मिलाकर एक गाढ़ा बैटर बना लें और उसे नॉन-स्टिक तवे पर पकने के लिए गोलाई में फैला दें। यह घर पर मोटे दाने से तैयार होने वाला एक उत्तम स्वस्थ नाश्ता या दोपहर के भोजन का विकल्प है।

मोटे अनाजों से तैयार होने वाले मिश्रित व्यंजन

इसमें सब्जियों को स्वादिष्ट मसालों, मिर्च और ज्वार के बीज के साथ राइस ब्रान तेल में अच्छे से पकाया जाता हैं, जो खाना पकाने के लिए सबसे स्वास्थ्यप्रद तेलों में से एक है। विटामिन-ई से भरपूर, राइस ब्रान ऑयल घर पर उपयोग करने के लिए एकदम सही है। उबले हुए ज्वार के बीजों के साथ बेबी कॉर्न, तोरी जैसी सब्जियों के साथ काली मिर्च डालने से बनने वाला व्यंजन दोपहर के खाने के लिए अति उपयुक्त होता है क्योंकि इस समय हमारे शरीर को अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है।

इसके अलावा सरल भारतीय शैली के फ्राइड राइस बाजरे के साथ सिर्फ 10 मिनट में बनाए जा सकते हैं। इसे लंच या डिनर में किसी भी दाल या करी के साथ परोसा जा सकता हैं। मोटे अनाज के उबले हुए दानों और शिमला मिर्च को मसालों के साथ स्टर फ्राई कर और रंगीन शिमला मिर्च को इस्तेमाल कर बाजरे एक अत्यंत ही मनमोहक नाश्ता बनाया जा सकता है।

मोटे अनाज का दलिया

घर पर तैयार करने के लिए दलिया, एक आदर्श नाश्ता- का विकल्प हैं। यह एक आसान, जल्दी बनने वाला और हल्का व्यंजन होने के साथ- साथ एक अत्यधिक पौष्टिक नाश्ता भी है। आयरन, खनिज, प्रोटीन और फाइबर से भरपूर, बाजरे को दूध में भिगोकर काजू, केला, अंजीर, चौलाई और कमल के बीज के साथ एक स्वादिष्ट दलिया तैयार किया जाता हैं। फॉक्सटेल मोटे अनाज दलिया बनाने के लिए, प्रत्येक 1 कप मोटे अनाज के लिए 3 कप पानी का उपयोग करके मोटे अनाज को धीमी आंच पर पकाएं और उसमे अपनी पसंद का स्वीटनर, फल और मेवे डालें। अपनी पसंद के अनुसार कंसिस्टेंसी को एडजस्ट करने के लिए किसी भी दूध का उपयोग करें। आप नारियल के दूध का उपयोग मोटे अनाज को पकाने के लिए भी कर सकते हैं। अपनी पसंद के अनुसार गाढ़ापन समायोजित करने के लिए और दूध डालें और आंच बंद कर दें। अपनी पसंद का स्वीटनर डालें और मौसमी फलों और कुरकुरे मेवों के साथ गर्म मोटे अनाज का दलिया तैयार है।

फ्रूट कस्टर्ड के साथ मोटे अनाज का इस्तेमाल

इस व्यंजन में बाजरे की पौष्टिकता के साथ- साथ फलों की मिठास भी मिलती है। इस पकवान में बाजरे का आटा, गेहूं का आटा, चीनी और नमक का मिश्रण होता हैं जिसे कस्टर्ड-पाउडर मिला कर बेक किया जाता हैं और इसमें स्वादिस्ट फ़लों को काट कर मिला दिया जाता है। परोसने से पूर्व इसको स्वाद अनुसार कीवी स्लाइस और शहद से सजाए जा सकता है।

कोदो मोटे अनाज के आटे से बना बर्गर

पिसा हुआ कोदो बाजरा, तरबूज के बीज, तुलसी, अजमोद, धनिया, सरसों और जीरे को आपस में अच्छे से मिला कर, इस मिश्रण को कोदो मोटे अनाज से बने बर्गर में डालें, फिर इसमें लेटयूस के पत्तों को सजाएं और स्वाद अनुसार चटपटे चने और टमाटर की कटी हुई फांके डालें। आपका स्वादिस्ट कोदो - बर्गर तैयार है।

मिश्रित मोटे अनाज से बनी भेल पुरी

यह व्यंजन कम फैट से युक्त है और पेट के लिए हल्का भी है। इसमें रागी, मूंगफली, चौलाई और मोटे अनाज के उबले दानों के साथ-साथ आलू, टमाटर, प्याज, नींबू का रस और मिर्च का इस्तेमाल होता है। उपरोक्त वस्तुओं को मिलाने के बाद इसमें चाट मसाला, मोरिंगा पाउडर और हरी चटनी डाली जाती है जिससे इस मोटे-अनाज से बनी भेल पुरी का स्वाद और भी मनमोहक हो जाता है।

सेवइयों और मोटे अनाज से बना उपमा

इस व्यंजन में धुले और भिगोए हुए लिटिल-मोटे-अनाज का इस्तेमाल किया जाता है। एक कढ़ाई में तेल, राई और जीरा डालें और उन्हें फूटने दें। फिर इसमें हींग, हरी मिर्च, अदरक (वैकल्पिक), करी पत्ता डालें और कुछ सेकंड के लिए भूनें। फिर प्याज़ डालें और एक या दो मिनट के लिए प्याज को हल्का भूरा होने तक भूनें। बाद में इसमें बारीक कटी हुई मिली-जुली सब्जियां, नमक डालें और सब्जियों के पकने तक 2-3 मिनट तक भूनें। फिर इसमें 1 कप पानी डालकर उबाल लें। भीगी हुई सेवइयों को छान कर उबलते पानी में डाल दें। अच्छी तरह से मिलाएं। इस अवस्था में नमक को समायोजित करें। फिर ढक्कन से ढककर धीमी आंच पर करीब 8-10 मिनट तक पकाएं। जब मोटे अनाज के दाने पक जाएं तो गैस बंद कर दें और उसमें कद्दूकस किया हुआ नारियल, हरा धनिया और नींबू का रस डालें। अच्छी तरह मिलाएं और सेवइयों-मोटे अनाज बने उपमा को नारियल की चटनी या चटनी पाउडर के साथ गरम- गरम परोसें।

मोटे अनाज से बना पोंगल

पोंगल एक प्रामाणिक दक्षिण भारतीय नाश्ता व्यंजन हैं जिसमे चावल की बजाए मोटे अनाज के दाने का इस्तेमाल किया जाता है। पोंगल वास्तव में एक आरामदायक व्यंजन हैं जो बनाने में आसान हैं और स्वास्थ्य वर्धक भी है। इसे दिन के किसी भी भोजन के रूप मे खाया जा सकता हैं।

उबला हुआ मोटा अनाज और दही - एक संपूर्ण आहार

मोटे अनाज के उबले दानों और दही के साथ आप एक स्वास्थ्य-प्रद, प्रोबायोटिक युक्त और हल्का आहार बना सकते हैं। आप इस रेसिपी को सिर्फ 10 मिनट में बना सकते हैं और नाश्ते, दोपहर के भोजन या रात के खाने में इसका आनंद ले सकते हैं।

मोटे अनाज की खिचड़ी

यह एक सरल और हल्का भोजन है जिसको विभिन्न सब्जियों के साथ खाने पर आपको स्वाद के साथ-साथ स्वास्थ्य-लाभ भी होगा। इसे दिन के किसी भी भोजन के लिए उपयोग में लाया जा सकता है।

राजभाषा खंड...

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान

राजभाषा प्रगति रिपोर्ट (2023-24)

रिपोर्टाधीन अवधि के दौरान हिंदी के प्रगति के लिए संस्थान में अनके गतिविधियां चलाई गई हैं, जिनमें से कुछ निम्न प्रकार से हैं-

- संस्थान के सभी वर्गों के अधिकारियों/कर्मचारियों के लिए विभिन्न विषयों पर राजभाषा संबंधी कार्यशालाएं आयोजित की गईं जिनमें बहुत बड़ी संख्या में अधिकारी/कर्मचारी लाभांवित हुए।
- संस्थान में राजभाषा के प्रगामी प्रयोग की स्थिति की मॉनीटरिंग के गठित राजभाषा निरीक्षण समिति ने इस वर्ष भी संस्थान के संभागों एवं निदेशक कार्यालय के अनुभागों का निरीक्षण किया तथा संबंधितों को निरीक्षण रिपोर्टें भेजी गई।
- संस्थान का प्रकाशन कार्य सुचारु रूप से चल रहा है। जिसमें संस्थान की वार्षिक रिपोर्ट भी द्विभाषी रूप में नियमित रूप से प्रकाशित की जाती है। गत तीन वर्षों से संस्थान की गृह-पत्रिका पूसा सुरभि का प्रकाशन वित्तीय वर्ष में एक अंक के स्थान पर दो अंकों के रूप में किया जाना प्रारंभ किया गया है। साथ ही संस्थान द्वारा पूसा समाचार (तिमाही), प्रसार दूत (द्विमासिक) तथा सामयिकी (मासिक) जैसे नियमित प्रकाशनों के अलावा तदर्थ प्रकाशन, पैम्फलेट तथा प्रसार बुलेटिन भी जारी किए जाते हैं।
- संस्थान को मानद विश्वविद्यालय का दर्जा प्राप्त है। यहां बीएससी, एमएससी और पीएचडी की उपाधियां प्रदान की जाती है। संस्थान के सभी पीएचडी छात्रों को अपनी थीमिस का सारांश हिंदी में प्रस्तुत करना अनिवार्य है। संस्थान द्वारा आयोजित की जाने वाली पीएचडी प्रवेश परीक्षा में अभ्यर्थियों को द्विभाषी माध्यम उपलब्ध कराया जा रहा है।
- संस्थान में हिंदी में पुस्तक लेखन को बढ़ावा देने के लिए सर्वश्रेष्ठ पुस्तक लेखन के लिए 'डॉ. रामनाथ सिंह पुरस्कार' द्विवार्षिक प्रदान किया जाता है। इस पुरस्कार योजना में 10,000/-रुपए नकद प्रदान किए जाते हैं। इसी प्रकार विभिन्न पत्र-पत्रिकाएं में हिंदी में वैज्ञानिक लेख लिखने संबंधी एक पुरस्कार योजना चल रही है। जिसमें 7000/-, 5000/- तथा 3000/- रुपए नकद पुरस्कार स्वरुप दिए जाते हैं। इसी क्रम में हिंदी व्याख्यान देने के लिए इस संस्थान के प्रवक्ताओं द्वारा हिंदी में सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिक/तकनीकी व्याख्यान देने के लिए पूसा विशिष्ट हिंदी प्रवक्ता पुरस्कार के नाम से एक नकद पुरस्कार योजना चलाई जा रही है। इस योजना में प्रत्येक वर्ष पुरस्कार विजेता को 10,000/-रुपये का नकद पुरस्कार प्रदान किया जाता है। इसके साथ ही हिंदी में प्रशासनिक कार्य को बढ़ावा देने के लिए राजभाषा विभाग की वार्षिक प्रोत्साहन नकद पुरस्कार योजना के तहत कुल कर्मचारियों को पुरस्कार प्रदान किए जाने का प्रावधान है जिसमें 5000/- रु. के दो प्रथम, 3000/-रु. के तीन द्वितीय तथा 2000/- रु. के पांच तृतीय पुरस्कार दिए जाते हैं।
- संस्थान के जिन अधिकारियों और कर्मचारियों को हिंदी भाषा में प्रवीणता प्राप्त है उन्हें निदेशक महोदय द्वारा राजभाषा नियम 8(4) के तहत अपना शतप्रतिशत प्रशासनिक काम हिंदी में करने के लिए आदेश जारी किए गए हैं। इसके अलावा निदेशक कार्यालय के सभी अनुभागों को अपना शतप्रतिशत सरकारी काम हिंदी में करने के लिए विनिर्दिष्ट किया गया है। जिसके परिणास्वरुप वर्ष में संस्थान के राजभाषा कार्यान्वयन में उल्लेखनीय प्रगति हुई है।
- संस्थान में हिंदी पुस्तकों की खरीद के लिए एक समिति बनाई गई है जो हिंदी पुस्तकालय के लिए पुस्तकें खरीदने की सिफारिश करती है। पुस्तकालय में प्रत्येक वर्ष राजभाषा विभाग द्वारा निर्धारित लक्ष्य के अनुसार पुस्तकें खरीदने का प्रयास किया जा रहा है। संस्थान के पुस्तकालय में उपलब्ध सभी हिंदी प्रकाशनों की सूची संस्थान की वेबसाइट पर उपलब्ध कराई गई है।
- संस्थान को प्राप्त होने वाले सभी हिंदी पत्रों के उत्तर अनिवार्यत: हिंदी में दिए जा रहे हैं, 'क' और 'ख' क्षेत्रों में स्थित सरकारी कार्यालयों के साथ अब अधिकाधिक पत्र व्यवहार हिंदी में किया जा रहा है। इन दोनों क्षेत्रों में स्थित कार्यालयों से प्राप्त अधिकांश अंग्रेजी पत्रों के उत्तर भी हिंदी में दिए जा रहे हैं। साथ

ही मूल पत्राचार अधिकाधिक हिंदी में करने का बढ़ावा देने के लिए संस्थान के सभी संभागों/अनुभागों व केंद्रों के बीच हिंदी व्यवहार प्रतियोगिता चलाई जा रही है। जिसमें वर्षभर सबसे अधिक पत्राचार हिंदी में करने वाले संभाग/केंद्र को पुरस्कार स्वरुप शील्ड प्रदान की जाती है।

- संस्थान में फाइलों पर हिंदी में टिप्पणियां लिखने में भी बहुत प्रगति हुई, सेवा-पुस्तिकाओं व सेवा संबंधी अन्य अभिलेखों में अब लगभग सभी प्रविष्टियां हिंदी में की जा रही हैं और राजभाषा अधिनियम की धारा 3(3) का अनुपालन किया जा रहा है। संस्थान में हिंदी को दैनिक प्रशासनिक कार्यों में बढ़ावा देने के उद्देश्य से फाइल कवर पर ही हिंदी-अंग्रेजी की प्रासंगिक टिप्पणियां प्रकाशित की गई हैं।
- संस्थान के अधिकारियों/कर्मचारियों के हिंदी शब्द ज्ञान को बढ़ाने के उद्देश्य से निदेशक कार्यालय व एनेक्सी भवन के प्रवेश द्वारों पर डिजिटल बोर्ड स्थापित किए गए हैं। जिसमें प्रतिदिन हिंदी का एक शब्द उसके अंग्रेजी समानार्थ व एक सुविचार के साथ प्रदर्शित होता है। इसके अतिरिक्त संस्थान के सभी संभागों/केंद्रों/इकाइयों के प्रवेश द्वारों पर लगे सूचना पट्टों पर 'आज का शब्द' शीर्षक के अंतर्गत भी हिंदी का एक शब्द उसके अंग्रेजी समानार्थ के साथ लिखा जाता है, ताकि आते-जाते कर्मचारियों की नज़र इन पट्टों पर पड़े और उनके शब्द ज्ञान में वृद्धि हो सके। साथ ही निदेशालय व एनेक्सी भवन में महापुरुषों के कथन व राजभाषा विभाग के नियम व अधिनियम संबंधी बोर्ड भी स्थापित किए गए हैं।
- राजभाषा विभाग के आदेशानुसार संस्थान के सभी कम्पूटरों में हिंदी में यूनिकोड में काम करने की सुविधा उपलब्ध है।
- संस्थान के समस्त संभागों/अनुभागों/क्षेत्रीय केंद्रों में राजभाषा कार्यान्वयन उपसमिति गठित है जिनकी नियमित रूप से प्रत्येक तिमाही में बैठकें आयोजित की जा रही हैं।
- संस्थान, राजभाषा विभाग द्वारा गठित की गई नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (उत्तरी दिल्ली) का भी सदस्य है। उक्त समिति की बैठकों में नगर में स्थित केंद्रीय सरकार के सदस्य कार्यान्वयन/उपक्रमों आदि में राजभाषा हिंदी में निष्पादित कामकाज/गतिविधियों की समीक्षा की जाती है। राजभाषा विभाग के आदेशानुसार इस समिति की बैठकों में संस्थान की ओर से निदेशक और संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) द्वारा सक्रिय रूप से भाग लिया जाता है।
- संस्थान के समस्त संभागों/अनुभागों/क्षेत्रीय केंद्रों में हिंदी की प्रगति को वांछित गति प्रदान करने, राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक में लिए गए निर्णयों को क्रियान्वित करने तथा संभाग एवं हिंदी अनुभाग के बीच संपर्क-सूत्र के रूप में कार्य करने के उद्देश्य से प्रत्येक संभाग/केंद्र में राजभाषा नोडल अधिकारी नामित किए गए हैं। नोडल अधिकारियों के लिए सर्वश्रेष्ठ राजभाषा नोडल अधिकारी पुरस्कार योजना भी आरंभ की गई है जिसके अंतर्गत 5000-/ रुपये की नकद राशि पुरस्कार एवं प्रतियोगिता में भाग लेने वाले प्रतिभागियों को प्रशस्ति-पत्र वितरित किए जाते हैं।
- संस्थान में राजभाषा कार्यान्वयन को वांछित गति प्रदान करने और अधिकारियों/कर्मचारियों में हिंदी में कार्य करने के प्रति जागरुकता का सृजन करने के लिए प्रतिवर्ष सितंबर माह को हिंदी चेतना मास के रूप में आयोजित किया जाता है। इस वर्ष भी दिनांक 01-30 सितंबर, 2023 को हिंदी चेतना मास का सफलतापूर्वक आयोजन किया गया। जिसमें आठ प्रतियोगिताएं आयोजित की गई: काव्य पाठ, वाद-विवाद, आशुभाषण, चित्र पर आधारित कहानी अथवा काव्य लेखन, टिप्पण एवं मसौदा लेखन, हिंदी टंकण, सामान्य ज्ञान (एमटीएस कर्मचारियों के लिए) तथा पॉवर प्वाइंट प्रतियोगिता (तकनीकी/वैज्ञानिक वर्ग के अधिकारियों एवं कर्मचारियों के लिए) उक्त प्रतियोगिताओं में सभी वर्गों के अधिकारियों/कर्मचारियों ने बढ़-चढ़कर भाग लिया।

उपर्युक्त सभी कार्य भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की देखरेख में किए जाते हैं जो प्रत्येक तीन माह में बैठक आयोजित करके संस्थान के राजभाषा कार्यान्वयन में हुई प्रगति की समीक्षा करते है व हिंदी की उत्तरोतर प्रगति के लिए निर्णय लेती है। इन बैठकों में प्रत्येक संभाग/अनुभाग/इकाई व क्षेत्रीय केंद्रों द्वारा हिंदी प्रगति के संबंध में किए गए कार्यों की रिपोर्ट प्रस्तुत की जाती है।

हिंदी कार्यशालाएं

कार्यशाला (अक्टूबर से दिसंबर)

संस्थान के समस्त संभागों/अनुभागों/इकाइयों में कार्यरत वैज्ञानिक/तकनीकी/प्रशासनिक वर्ग के अधिकारियों/कर्मचारियों के लिए दिनांक 17 अक्टूबर, 2023 को ज़ूम ऐप के माध्यम से

(ऑनलाइन) ''आधुनिक तकनीक और राजभाषा'' विषय पर एक दिवसीय हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया। इस ऑनलाइन हिंदी कार्यशाला में व्याख्यान देने हेतु निदेशक, स्थानीय भाषाएं एवं सुगम्यता, माइक्रोसॉफ्ट भारत में कार्यरत श्री बालेन्दु शर्मा दाधीच को आमंत्रित किया गया। कार्यशाला के दौरान उन्होंने प्रतिभागियों को आधुनिक तकनीक के माध्यम से राजभाषा/अन्य भाषाओं को कैसे बढ़ावा दिया जा सकता है इससे संबंधित तकनीकी टूल्स व अन्य विस्तृत जानकारी से अवगत करवाया। उन्होंने कहा कि हिंदी हमारी राजभाषा है और हमें इसके प्रचार-प्रसार के लिए हरसंभव प्रयास करना चाहिए साथ ही उन्होंने कहा कि तकनीकी स्तर पर हिदी भाषा में कार्य करना अब और आसान हो गया है। जिसका उदाहरण उन्होंने प्रतिभागियों को कंप्यूटर पर स्पीच टाइपिग टूल्स का उपयोग करते हुए बताया तथा इस तरह से एक अन्य टूल्स का भी प्रयोग करते हुए बिना कीबोर्ड की सहायता से आप अपने दैनिक कार्यों को कैसे पूर्ण कर सकते हैं इन सभी जानकारियों से अवगत करवाया। उक्त कार्यशाला में लगभग 120 अधिकारियों/कर्मचारियों ने भाग लिया।

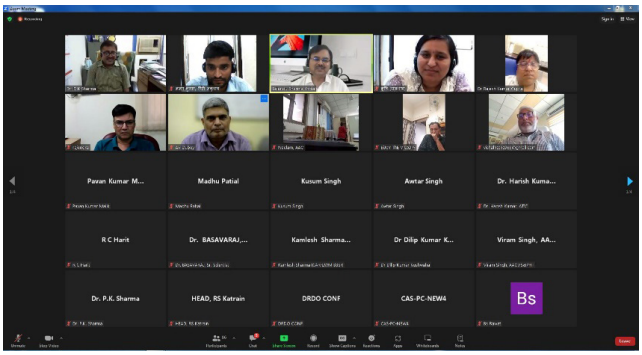

कार्यशाला (जनवरी से मार्च, 2024)

संस्थान के जल प्रौद्योगिकी केंद्र में दिनांक 22 मार्च, 2024 को विश्व जल दिवस समारोह को एक कार्यक्रम आयोजित किया गया। जिसका विषय – 'शांति के लिए जल' रखा गया। कार्यक्रम के आकर्षण और मुख्य अतिथि के रूप में डॉ. हिमांशु पाठक, सचिव, डेयर एवं महानिदेशक, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद मौजूद रहे। साथ ही डॉ. एस. के. अम्बस्ट, चेयरमैन, केंद्रीय भूमिजल बोर्ड (सीजीडब्ल्यूबी), डॉ. पी. के. सिंह, कृषि आयुक्त, डॉ. अशोक कुमार सिंह, निदेशक, भा.कृ. अनु.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली विशिष्ट अतिथियों सहित लगभग 180 विभिन्न प्रतिष्ठित महानुभावों ने 'शांति के लिए जल' की चर्चा में भाग लिया। व्यावहारिक चर्चा स्थाई जल प्रणालियों को बढ़ावा देने, जल प्रदूषण का मुकाबला करने और भूजल की कमी को संबोधित करने पर केंद्रित थी । इस अवसर पर जल पर जन जागरण फ़ैलाने और नए तकनीकियों की जानकारी को सभी तक पहुंचाने के लिए "जल सुरक्षा" नामक एक त्रैमासिक पत्रिका का विमोचन भी मुख्य अतिथि के कर कमलों द्वारा किया गया। जल प्रौद्योगिकी केंद्र के परियोजना निदेशक डॉ. पी. एस. ब्रह्मानंद ने उत्कृष्ट विचार-विमर्श और मंथन के लिए सबका आभार प्रकट किया और जल संकट से निपटने के लिए बेहतर शोध कार्य का आश्वासन भी दिया ।

हिंदी कार्यशाला की झलक

राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठकों का आयोजन

रिपोर्टाधीन अवधि (छमाही) के दौरान संस्थान के निदेशक की अध्यक्षता में गठित संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति की 02 बैठकें क्रमश: दिनांक 28 दिसंबर, 2023 एवं 23 फरवरी, 2024 को आयोजित की गई।

मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विज्ञान संभाग

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा नई दिल्ली

संभाग में दिनांक 21 सितंबर से 5 अक्टूबर, 2023 तक हिंदी पखवाड़ा आयोजित किया गया। इसके अंतर्गत संभाग में सभी वर्ग के कर्मचारियों हेतु विभिन्न प्रतियोगिताएं आयोजित की गईं। हिंदी पखवाड़ा के कार्यक्रमों की शुरुआत दिनांक 21 सितंबर, 2023 (वीरवार) को संभाग के व्याख्यान कक्ष में की गई जिसके मुख्यातिथि डॉ. करुणा दीक्षित रहीं तथा उन्होंने कार्यक्रम के दौरान आयोजित आशुभाषण प्रतियोगिता के लिए निर्णायक सदस्य की भूमिका भी निभाई। इसके अलावा संभाग में श्रुतलेख और प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता का भी आयोजन किया गया जिसमें संभाग के सभी वर्गों के अधिकारियों/कर्मचारियों ने बढ़-चढ़ कर भाग लिया। इस आयोजन के अंतिम दिन सभी पुरस्कार विजेताओं को संभागाध्यक्ष महोदय द्वारा सम्मानित किया गया।

हिंदी पखवाड़ा की झलकियाँ

विश्व मृदा दिवस

संभाग में दिनांक 5 दिसंबर, 2023 को मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विज्ञान संभाग, भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली ने इंडियन सोसाइटी ऑफ़ सॉयल साइंस के दिल्ली चैप्टर के सहयोग से विश्व मृदा दिवस 2023 को पूरे उत्साह के साथ आयोजित किया। इस वर्ष एफएओ द्वारा विश्व मृदा दिवस की थीम 'मृदा और जल, जीवन का स्रोत' दी गई है। थीम के आधार पर संभाग में दिल्ली के विभिन्न स्कूलों से आए छात्रों और संभागीय छात्रों के लिए विभिन्न कार्यक्रम आयोजित किए गए। विश्व मृदा दिवस पर कार्यक्रम की शुरूआत डॉ. टी जे पुरकायस्थ, प्रोफेसर मृदा विज्ञान संभाग, की प्रस्तुति से हुई जिन्होंने मिट्टी के महत्व और समाज के विकास में मिट्टी की भूमिका और महत्व पर प्रकाश डाला। उन्होंने छात्रों को कृषि के साथ-साथ पृथ्वी पर जीवन की स्थिरता के लिए प्राकृतिक संसाधनों विशेषकर मिट्टी और पानी के रखरखाव के बारे में भी जानकारी दी। थीम के आधार पर, छात्रों को मिट्टी और पानी के महत्व और इन संसाधनों को बचाने के तरीकों को समझाने के लिए वीडियो की स्क्रीनिंग भी की गई। इसके बाद उन्हें मिट्टी की उत्पत्ति और विकास दिखाने के लिए संभाग के मृदा संग्रहालय का दौरा भी करवाया गया। छात्रों को प्राकृतिक संसाधनों के महत्व से परिचित कराने और उनके ज्ञान का आकलन करने के लिए छात्रों के लिए विश्व मृदा दिवस थीम पर एक प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता का भी आयोजन किया गया। कार्यक्रमों के सफल आयोजन के बाद, मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विज्ञान संभाग में समापन समारोह का आयोजन किया गया। जिसमें मुख्य अतिथि के रूप में भा.कृ. अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) डॉ. विश्वनाथन चिन्नुसामी उपस्थित रहे। मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विज्ञान संभाग के अध्यक्ष डॉ. देबाशीष मंडल ने मुख्य अतिथि का स्वागत किया और विश्व मृदा दिवस 2023 के उपलक्ष्य में आयोजित की गई संभाग की विभिन्न गतिविधियों के बारे में जानकारी दी जिसका उद्देश्य सतत् और लचीली कृषि खाद्य प्रणालियों को प्राप्त करने में मिट्टी और पानी के बीच महत्व और संबंध के बारे में जागरूकता बढ़ाना था। इसके बाद मुख्य अतिथि डॉ. विश्वनाथन चिन्नुसामी द्वारा विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजेताओं को पुरस्कार वितरित किए गए। अपने संबोधन में मुख्य अतिथि ने कहा कि जलवायु परिवर्तन और मानव गतिविधि को ध्यान में रखते हुए लगातार

घटते प्राकृतिक संसाधनों के सही उपयोग और सतत प्रबंधन पर ध्यान देने की आवश्यकता है। उन्होंने युवाओं से जलवायु परिवर्तन के मद्देनजर बढ़ती आबादी की खाद्य मांग को पूरा करने के लिए आत्मनिर्भरता बनाए रखने के साथ-साथ सतत कृषि उत्पादन और उत्पादकता के प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन के लिए नवीन तकनीकों का विकास करने और उनका उपयोग बढ़ाने के लिए आगे आने का आह्वान किया।

संभाग में विश्व मृदा दिवस 2023 के उपलक्ष्य में आयोजित विभिन्न गतिविधियों की झलकियां

विश्व मृदा दिवस के उपलक्ष्य में मृदा विज्ञान और कृषि रसायन विभाग, भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली ने इंडियन सोसाइटी ऑफ सॉयल साइंस (आईएसएसएस) के दिल्ली चैप्टर और चालीस गांव विकास परिषद, सोनीपत के साथ संयुक्त रूप से 10 दिसंबर 2023 को तुर्कपुर गांव, सोनीपत में वैज्ञानिकों, शिक्षाविदों, राज्य सरकार के अधिकारियों की उपस्थिति में किसानों के लिए जागरूकता कार्यक्रम का भी आयोजन किया। कार्यक्रम में मुख्य अतिथि के रूप में भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के संयुक्त निदेशक (प्रसार) डॉ. रविन्द्र पडारिया उपस्थित रहे। सभा को संबोधित करते हुए भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली से मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विभाग के अध्यक्ष डॉ. देबाशीष मंडल ने अपने स्वागत उद्बोधन में विश्व मृदा दिवस और इसके महत्त्व के बारे में बताया। इसके बाद किसानों को संबोधित करते हुए पादप रोग विज्ञान संभाग के अध्यक्ष डॉ. एम. एस. सहारण ने फसलों के रोग प्रबंधन पर बात की। डॉ. लिवलीन शुक्ला, प्रधान वैज्ञानिक, सूक्ष्मजीव विज्ञान संभाग ने धान की पराली प्रबंधन के लिए विभिन्न सुझाव दिए। डॉ. एम. हासन, प्रधान वैज्ञानिक, सीपीसीटी ने सब्जियों की ऊर्ध्वाधर खेती के बारे में बात की और डॉ. एसएल मीणा, प्रधान वैज्ञानिक, प्राकृतिक और जैविक खेती के बारे में बात की। सूत्रकृमि संभाग के वरिष्ठ वैज्ञानिक डॉ. विकास बामेल सूत्रकृमि नियंत्रण के विभिन्न प्रबंधन प्रणालियों को विस्तृत रूप से बताया। आनुवंशिकी संभाग से वरिष्ठ वैज्ञानिक डॉ. किरण बी. गायकवाड़ ने फसल सुधार के हाल के विकास के बारे में बात की। कीट विज्ञान की वैज्ञानिक डॉ. नित्या चंद्रन ने रबी की फसलों और सब्जी में कीट प्रबंधन के लिए विभिन्न सुझाव दिए। जल प्रौद्योगिकी केंद्र की वैज्ञानिक डॉ. मोनालिसा प्रमाणिक ने कुशल जल प्रबंधन और फर्टिगेशन का संक्षिप्त विवरण दिया। इस आयोजन में लगभग 200 किसानों ने हिस्सा लिया।

विश्व मृदा दिवस 2023 के उपलक्ष्य में 10 दिसंबर 2023 को तुर्कपुर गांव, सोनीपत में आयोजित किसान गोष्ठी की झलकियां

इसी श्रृंखला में मृदा की घटती उर्वरकता और इसे बचाने हेतु संभावित प्रयासों के लिए लोगों में जागरूकता फ़ैलाने के लिए मृदा विज्ञान और कृषि रसायन विभाग, भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (भा.कृ.अनु.प.), नई दिल्ली ने 16 दिसंबर 2023 को राजपुरा गांव, अलीगढ़, उत्तर प्रदेश में इंडियन सोसाइटी ऑफ सॉयल साइंस (आईएसएसएस) के दिल्ली चैप्टर और भारतीय स्टेट बैंक के साथ संयुक्त रूप से एक रैली और प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन किया। रैली में संस्थान के वैज्ञानिकों और छात्रों ने मिलकर विभिन्न नारों के माध्यम से किसान भाइयों और बहनों को जागरूक किया। इसके बाद राज्य सरकार के अधिकारियों की उपस्थिति में अनुसूचित वर्गीय किसानों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम का भी आयोजन किया गया जिसमें उन्हें मृदा एवं जल के महत्त्व, उसके संचयन, सही उपयोग और सुधार के लिए उठाए जाने वाले कदमों की जानकारी दी गई ताकि किसान अपनी उपज को और उससे होने वाले लाभ को बनाए रख सकें। इस कार्यक्रम में लगभग 300 किसानों ने भाग लिया और संस्थान द्वारा उठाए गए प्रयासों की सराहना की।

विश्व मृदा दिवस 2023 के उपलक्ष्य में 16 दिसंबर 2023 को राजपुरा गांव में आयोजित किसान प्रशिक्षण कार्यक्रम एवं रैली की झलकियां

"राजभाषा" हमारी नज़र में

बिजय सिंह[1], मी मास्टर नेहाल प्रसाद चौरसिया[2] एवं सोनाम जन्मु डुक्प[3]

[1]भा.कृ.अनु.प-भा.कृ.अनु.सं., क्षेत्रीय केंद्र, कालिम्पोंग
[2]कुमुदिनी विद्याश्रम, कालिम्पोंग
[3]प्रणाबालिका विद्या मंदिर, कालिम्पोंग

"हिंदी राष्ट्रभाषा है, इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को,
प्रत्येक भारतवासी को इसे सीखना चाहिए" – रविशंकर शुक्ल

हम सब भारतवासी अपने देश "भारत" को 'मां' समझते है इस हिसाब से तो जितने भी भारतवासी है उन सबके लिए 'राजभाषा' हिंदी भी 'मातृ-भाषा' की तरह होनी चाहिए थी और जिस तरह हम सबको अपनी-अपनी 'मातृ-भाषा' से प्यार और लगाव है उसी तरह "राजभाषा" हिंदी के साथ भी लगाव होना चाहिए था मगर आज आधुनिक कहलाने के चक्कर में हम लोग अपनी ही राष्ट्रभाषा को हीन समझने लगे हैं। लोग आजकाल अपनी राष्ट्रभाषा 'हिंदी' बोलने में शर्माते है और दूसरों की भाषा 'अंग्रेजी' बोलने में अपने आपको सभ्य और बुद्धिमान समझने लगे हैं। अपने बच्चों को भले ही हिंदी का 'ह' भी ना आए मगर बच्चा अंग्रेजी फर्राटे से बोले तो उसमे गर्व महसूस करते है। आज आवश्यकता है अपनी राष्ट्रभाषा 'हिंदी' के गौरव को पुन: स्थापित करने की और इसके लिए सभी को जागरूक होना पड़ेगा।

राजभाषा हिंदी को बढ़ावा, प्रेरणा एवं प्रोत्साहन देने हेतु 14.09.1949 से पूरा भारत में "हिंदी दिवस" मनाया जाता है। किसी कार्यालय/विद्यालय में सिर्फ 14 सितंबर को ही हिंदी दिवस मनाया जाता है तो कहीं-कहीं एक सप्ताह, किसी में अर्द्ध मास तो किसी में पूरा मास हिंदी का कार्यक्रम किया जाता है जिसमें सरकार राजभाषा के प्रचार प्रसार हेतु बहुत पैसा खर्च करती है मगर फिर भी 'हिंदी' भाषा "राजभाषा" होते हुए भी धरातल पर अभी भी पिछड़ी हुई है। राजभाषा के प्रचार-प्रसार के लिए सिर्फ सरकार के ऊपर भरोसा ना कर के सभी गैर-सरकारी संस्थान, समाज, और व्यक्ति विशेष को समग्र रूप में प्रयास करना नितांत आवश्यक है।

इसी संदर्भ में भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, ऋषि रोड, 8.5 माइल, कालिम्पोंग, भी राजभाषा हिंदी के प्रचार-प्रसार हेतु प्रति वर्ष सितंबर माह में विविध कार्यक्रम (ऑफलाइन/ऑनलाइन माध्यम से) आयोजित करता आ रहा है जिसमें ना केवल अधिकारियों/कर्मचारियों के लिए प्रतियोगिताएं होती है अपितु विद्यार्थियों के बीच भी प्रतियोगिताओं का आयोजन किया जाता है। ऐसे ही पिछले वर्ष हमनें विद्यालयों में जाकर विद्यार्थियों के बीच "दैनिक जीवन में हिंदी भाषा का महत्व" पर निबंध प्रतियोगिता आयोजित कराई गई थी ताकि विद्यार्थियों को भी राजभाषा हिंदी के प्रति प्रोत्साहित किया जा सके। उक्त प्रतियोगिता के लिए हमने कुमुदिनी विद्याश्रम, कालिम्पोंग और प्रणामी बालिका विद्या मंदिर, कालिम्पोंग को चुना था। कुमुदिनी विद्याश्रम से कक्षा IX का छात्र नेहाल प्रसाद चौरसिया प्रथम आया था जिसका निबंध मैं उसी के शब्द में यहां रख रहा हूं –

हर एक देश की पहचान उस देश की भाषा और संस्कृति से होती है। किसी भी देश की एकता में उस देश की राष्ट्रभाषा अहम भूमिका निभाती है। हमारे देश की राष्ट्रभाषा हिंदी है। हिंदी का जन्म लगभग एक हजार वर्ष पहले हुआ था। हिंदी का महत्व इसके सरल उच्चारण के कारण है, क्योंकि यह भाषा उच्चारण के अनुसार ही लिखी जाती है। हिंदी भाषा में 11 स्वर और 33 व्यंजन होते है। हिंदी भाषा की लिपि 'देवनागरी' है। भारत ही एक ऐसा देश है जिसकी राष्ट्रभाषा और राजभाषा एक ही है जो यह साबित करता है कि भारत देश में हिंदी का कितना महत्व है। हिंदी दुनिया में सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा है। भारत की बड़ी आबादी के कारण हिंदी दुनिया में सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषाओं में से एक है। इस में उर्दू, फारसी, अंग्रेजी आदि भाषाओं के शब्द भी आपस में घुल-मिल गए है। जैसे इतेफ़ाक, तोहफा, एहसास, स्लेट, पेंसिल, स्कूल, खून, रास्ता, टमाटर, डॉक्टर आदि। ये सभी विदेशी शब्द हिंदी भाषा में ऐसे घुल-मिल गए है जैसे वो हिंदी के अपने हो। विदेशी शब्दों के साथ घुल-मिल जाने की यह खूबी ही विश्व में अन्य भाषाओं के मुकाबले हिंदी को महान बनाती है।

भारतेंदु हरिश्चंद्र ने कहा था –

"निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल
बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय के सूल"।।

उनके कहने का तात्पर्य यह था की बिना राष्ट्रभाषा के मनुष्य कि उन्नति नहीं हो सकती है और इस भाषा के बिना व्यक्ति किसी और भाषा का ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता।

भारत के संविधान में देवनागरी लिपि में हिंदी को 14 सितंबर, 1949 को राजभाषा घोषित किया गया है। भारतीय संविधान में यह व्यवस्था है कि केंद्र सरकार के पत्राचार की भाषा हिंदी और अंग्रेजी होगी। हिंदी की लोकप्रियता और बढ़ते अंतरराष्ट्रीय महत्व के साथ, हिंदी भाषा के क्षेत्र में रोजगार के अवसरों में भी उत्तरोतर प्रगति हुई है। अत: हम यह कह सकते हैं हिंदी केवल एक भाषा ही नहीं बल्कि भारतीय संस्कृति की आत्मा है। इसलिए हिंदी के महत्व को खुद समझें और दूसरों को भी समझाएं।

प्रणामी बालिका विद्या मंदिर विद्यालय से कक्षा VIII के छात्रा सुश्री सोनाम जन्मु डुक्पा (जो की एक अहिंदी भाषी थी) निबंध प्रतियोगिता में प्रथम आई थी। उसका निबंध मैं उसी के शब्द में यहां प्रस्तुत कर रहा हूं –

हर एक देश की पहचान उसके राष्ट्रभाषा से होती है और हमारी देश की राष्ट्रभाषा हिंदी है। हिंदी से हमें राष्ट्र, अंतरराष्ट्र में हमारी संस्कृति और संस्कार की पहचान मिलती है। हिंदी एक भावनात्मक भाषा है जो लोगों की मन को आसानी से छू लेती है। हिंदी के सरल उच्चारण के वजह से हिंदी विश्व में सबसे अधिक बोली जाने वाले भाषाओं में हिंदी दूसरी स्थान में आती है, विश्वभर में हिंदी की बढ़ती संख्या की कारण यह हमारे लिए गर्व की बात है। हिंदी सबसे बड़ी बोली जाने वाली भाषा में से एक है इस कारण हिंदी को 14 सितंबर, 1949 के दिन राष्ट्रीय भाषा घोषित किया गया था। पश्चिम बंगाल में हिंदी का प्रयोग दैनिक जीवन में कम किया जाता है, पर हमें दैनिक जीवन में हिंदी भाषा का प्रयोग ज्यादा करना चाहिए क्योंकि हिंदी भाषा हमारी राष्ट्रभाषा है, हिंदी में 11 स्वर और 33 व्यंजन होते है, हिंदी लिपि का नाम "देवनागरी" है। भारत में आजकल पश्चिमी भाषा का प्रयोग ज्यादा किया जा रहा है, यह हमारे लिए शर्मनाक बात है, हम अपनी राष्ट्रीय भाषा बोलकर औरों की भाषा (अंग्रेजी) बोलने में ज्यादा पसंद करते हैं, विश्वभर में भारत की संस्कृति की पहचान करवाने का सर्वप्रथम श्रेय हिंदी भाषा को ही जाता है। अंग्रेजी भाषा भी हमें बोलनी चाहिए मगर प्रथम हमें हमारी राष्ट्रभाषा बोलना अनिवार्य है। हमारे दैनिक जीवन में हिंदी का प्रयोग करने से हमारी हिंदी में शुद्धता आती है और इससे हम दूसरों को भी प्रभावित कर पाएंगे। यदि हमें हिंदी आती है तो हम एक राज्य से दूसरे राज्य में जाते हुए हमारा काम सहजता से कर सकते हैं। अगर हम हिंदी नहीं बोल पाते हैं तो फिर हमें एक शहर से दूसरे शहर में जाते हुए भी बहुत कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। हिंदी भाषा से हमें राष्ट्र/अंतरराष्ट्र में सम्मान मिलता है। हमें हमारी राष्ट्रभाषा हिंदी को बोलते हुए फक्र और गर्व महसूस होता है। हिंदी हमें एकता की सूत्र में बांधती है। हम हमारे दैनिक जीवन में हिंदी भाषा का प्रयोग कम करके अंग्रेजी भाषा ज्यादा बोलते हैं जिसके कारण बच्चों पर ये असर होता है कि वे भी हिंदी भाषा से ज्यादा अंग्रेजी भाषा बोलना पसंद करने लग जाते हैं। यह हमारे लिए शर्म की बात है और सारे विद्यार्थियों का यह सपना होता है कि वह अच्छे से पढ़कर विदेश में जाकर काम करें और दूसरी तरफ विदेशी लोग भारत आने और यहां की संस्कृतियों को अपनाने के लिए सपने देखते हैं।

हमें हमारे दैनिक जीवन में हिंदी का प्रयोग करना चाहिए और अपनी राष्ट्रभाषा से प्रेम करना चाहिए।

"सौधीं है सुगंध, मीठी सी भाषा, गर्व से कहो हिंदी है मेरी भाषा"

हिंदी निबंध प्रतियोगिता

तकनीक की प्रगति और हिंदी का प्रयोक्ता

बालेन्दु शर्मा दाधीच

निदेशक, स्थानीय भाषाएं और सुगमयता, माइक्रोसॉफ्ट भारत

जिन कार्यक्रमों में मैं प्रौद्योगिकी के नवीनतम घटनाक्रमों को लोगों के साथ साझा करता हूं उनमें से अधिकांश में मैंने लोगों को नई तकनीकों की नुक्ताचीनी करते हुए देखा है। उनकी आलोचना इस बात पर है कि मशीन अनुवाद तो बिलकुल बकवास परिणाम देता है। पहले वे यही बात वाक् से पाठ (स्पीच टु टेक्स्ट) के बारे में कहा करते थे लेकिन वह आलोचना अब बहुत कम हो गई है। बहरहाल, मशीन अनुवाद की खिल्ली उड़ाना आज भी जारी है। लोग तमाम तरह के जटिल और असामान्य किस्म के वाक्य बनाकर मशीन अनुवाद को आजमाते हैं ताकि यह साबित कर सकें कि अनुवाद करना कंप्यूटर के बस की बात नहीं और वे इस बात से परेशान हैं कि शुद्ध अनुवाद की दिशा में प्रगति क्यों नहीं हो रही।

अब दूसरे दृश्य की ओर चलिए। हाल ही में ओपनएआई ने 'चैटजीपीटी', माइक्रोसॉफ़्ट ने 'कोपायलट' और 'गूगल' ने जेमिनी नामक संवादात्मक आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस को पेश किया है। यह कृत्रिम बुद्धिमत्ता का अगला संस्करण है जो असामान्य और आश्चर्यजनक रूप से बेहद शक्तिशाली है। इतना शक्तिशाली कि अधिकांश मामलों में वह एक औसत इंसान की प्रतिभा, तर्कशक्ति और ज्ञान से आगे निकल जाता है। और हम एक बार फिर से चिंतित हो रहे हैं। इस बात पर कि यह कृत्रिम बुद्धिमत्ता इतनी सटीक कैसे है? इसके परिणाम इतने अधिक शुद्ध क्यों हैं?

उपरोक्त दोनों ही अनुप्रयोग कृत्रिम बुद्धिमत्ता के अनुप्रयोग हैं- मशीन अनुवाद भी, चैट जीपीटी भी। और हम दोनों ही मामलों को लेकर चिंतित हैं। मशीन अनुवाद की तथाकथित कमजोरी हमें परेशान कर रही है तो चैट जीपीटी की मजबूती हमें व्यथित किए दे रही है। भला यह कैसा दृष्टिकोण है? एक ही प्रौद्योगिकी, उसके दो रूप और हमारी दो विरोधाभासी प्रतिक्रियाएं। मुझे तो लगता है कि कल को मशीन अनुवाद 95 या 98 प्रतिशत तक शुद्ध हो जाएगा तो हम सब उसकी शुद्धता से परेशान हो जाएंगे, वही लोग जो आज उसकी सीमाओं का मजाक उड़ाते हैं। भाई या तो तकनीक की शक्ति से चिंतित हो जाओ या फिर तकनीक की नाकामी से। लेकिन किसी एक बात पर तो टिको।

मैं प्रौद्योगिकी का एक विद्यार्थी और शोधार्थी होने के नाते इन बदलावों को लंबे समय से देखता आया हूं और जिस अंदाज में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का विकास हुआ है उसे देखते हुए मुझे शुरू से विश्वास रहा है कि यह प्रौद्योगिकी हमारी दुनिया को बदलने की ताकत रखती है। वह लगातार बेहतर होती चली जाएगी और शायद एक दिन इंसान की क्षमताओं के बहुत करीब पहुंच जाए। वह कितना अच्छा या बुरा है, वह हम शोधकर्ताओं पर छोड़ देते हैं लेकिन हम लोगों या प्रयोक्ताओं की बात कर रहे थे और मेरी दृष्टि में हम लोगों का प्रौद्योगिकी प्रति नजरिया बहुत अस्पष्ट और अस्थिर और भ्रमपूर्ण है। हम चाहते तो हैं कि प्रौद्योगिकी में तरक्की हो लेकिन इतनी नहीं कि वह पूरी तरह से सफल हो जाए। प्रौद्योगिकी के प्रति हमारे दृष्टिकोण के अंतरविरोध किसी हद तक हमारे अपने असुरक्षा बोध की ओर संकेत करते हैं क्योंकि मशीन अनुवाद तथा चैट जीपीटी दोनों के ही संदर्भ में यदि कोई एक बात कॉमन है, उभयपक्षी है, तो वह है एक किस्म का असुरक्षा बोध। जिन्हें हम प्रौद्योगिकी की कमजोरी समझ रहे हैं कहीं वे हमारी कमजोरियां तो नहीं हैं? शायद हमारी अनभिज्ञता, कौशल न होना और नए घटनाक्रम को आत्मसात करने में आने वाली मुश्किल।

लेकिन बदलाव तो स्थाई है और प्रौद्योगिकी निरंतर अपने आपको अपग्रेड करने में जुटी है। हम भी तकनीकी दृष्टि से स्वयं को अपग्रेड करते रहें यह बहुत आवश्यक है। अन्यथा ऐसा न हो कि हमारे गैराज में आधुनिकतम, शक्तिशाली और तीव्रतम कारें खड़ी हों लेकिन हम उन्हें चलाने की स्थिति में ही न हों।

सन् 2000 में विंडोज में यूनिकोड का समर्थन आया था। वह भाषायी दृष्टि से नवीनतम और सर्वाधिक शक्तिशाली एनकोडिंग थी। हममें से अधिकांश लोगों ने आज भी उसे पूरी तरह नहीं अपनाया। 1986 में भारतीय भाषाओं का इनस्क्रिप्ट कीबोर्ड लेआउट आ गया था जिसे सर्वाधिक विज्ञानसम्मत माना जाता है। आज 37 साल बाद भी हममें से अधिकांश लोग या तो इसके बारे में जानते ही नहीं या फिर उसकी उपेक्षा करते हैं।

हिंदी सहित हमारी भाषाओं में फॉन्टों की कमी नहीं है, वर्तनी की जांच जैसी सुविधाएं भी मौजूद हैं, पूरी की पूरी विंडोज और ऑफिस को चंद मिनटों में पूरी तरह से हिंदी के इंटरफेस में बदला जा सकता है, हिंदी में खोज आसान है, स्पीच टु टेक्स्ट भी है तो टेक्स्ट टु स्पीच भी। जहां तक मशीन अनुवाद का प्रश्न है, माइक्रोसॉफ़्ट 20 भारतीय भाषाओं से दुनिया भर की भाषाओं के बीच दोतरफा अनुवाद की सुविधा देने लगा है। हिंदी में एनालिटिक्स संभव है, हिंदी में डेटाबेस की कोई समस्या नहीं है, तकनीक को हिंदी में बोलकर निर्देश देना संभव है, हिंदी में बोली हुई बातों का अंग्रेजी में बोली हुई बातों में ध्वन्यांतर होने लगा है। ट्रांसलीटरेशन, लिपि परिवर्तन और फॉन्ट परिवर्तन तो मौजूद हैं ही। मुद्रित पाठ का चित्र लेकर उसे टाइप किए गए पाठ में बदलना अब आसान है। टाइपिंग का कोई मसला शेष है ही नहीं। इस बीच हमने माइक्रोसॉफ्ट के फॉन्टों को सटीक बनाने के लिए नई कोशिश शुरू की है। मंगल और दूसरे फॉन्टों की जो समस्याएं आपको परेशान करती रही हैं, उन्हें आप बहुत जल्दी दूर होते हुए देखेंगे, जैसे कि शृंगार में शृ का सही ढंग से न लिखा जाना। इस बीच चैटजीपीटी और जेनरेटिव एआई के दूसरे अनुप्रयोग आ गए हैं और वे भी हिंदी का समर्थन करते हैं।

तो भाई अब तकनीकी दृष्टि से हमारे सामने कमी क्या है? हमारा रास्ता कौन रोक रहा है? लेकिन आज भी मैं यही देखता हूँ कि लोग छिटपुट मुद्दों को ढूंढने की कोशिश करते हैं और कहते हैं कि नहीं, हिंदी में ऐसा नहीं है या वैसा नहीं है। हकीकत में हर समस्या का समाधान मौजूद है, बशर्ते हम उस समाधान को तलाशने की थोड़ी सी जहमत उठाएँ।

अनगढ़ संयुक्ताक्षरों की समस्या का भी समाधान मौजूद है तो प्रकाशन में यूनिकोड फॉन्टों के प्रयोग में भी कोई बाधा नहीं है। टाइपिंग के अनेक तरीके मौजूद हैं ही। वर्ड में चिपके हुए अक्षरों की समस्या इसलिए है क्योंकि या तो लोग पाइरेटेड सॉफ्टवेयर का प्रयोग करते हैं या फिर ऐसे संस्करण का जो दस साल से ज्यादा पुराना है। पेजमेकर यूनिकोड में काम नहीं कर सकता क्योंकि उसका विकास विंडोज में यूनिकोड के आगमन के समय यानी कि 2001-02 में ही बंद हो गया था। आईटी में किसी भी साफ्टवेयर की उम्र अधिकतम दस साल मानी जाती है। उसके बाद समस्याएं आना स्वाभाविक है। अपना संस्करण बदल क्यों न लिया जाए? पेजमेकर की जगह इन-डिजाइन है और वर्ड के ऑफलाइन ही नहीं बल्कि निःशुल्क ऑनलाइन संस्करण भी मौजूद हैं।

तो जरा सोचिए कि हमारी तरक्की को कौन रोक रहा है? सूचना प्रौद्योगिकी तो बिल्कुल भी नहीं। कहीं हमारी सोच और सीमाएं ही तो चुनौती नहीं हैं? क्या हमारे बीच पर्याप्त जागरूकता और कौशल है? और जागरूकता आ भी जाए तो प्रौद्योगिकी के प्रति मित्रतापूर्ण या सकारात्मक रुख है? तमाम निःशुल्क प्रौद्योगिकियों का लाभ उठाते हुए भी हम उनकी आलोचना ही करना तो अधिक पसंद करते हैं।

इस असुरक्षा बोध से आगे निकले बिना हम प्रौद्योगिकी का वैसा लाभ नहीं उठा सकेंगे जो हमारी ज़रूरत है और जिसके लिए प्रौद्योगिकी की ओर से स्थितियां बहुत अनुकूल हैं। यूं तो एक फिल्मी डॉयलॉग है लेकिन बात सटीक है और वह यह कि 'डर के आगे जीत है।' आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस जैसी आधुनिकतम तकनीकों का रास्ता रोकना संभव नहीं है। विक्टर ह्यूगो ने कहा ही है कि कोई भी सेना उस विचार का रास्ता नहीं रोक सकती जिसका समय आ गया हो। तो फिर करें क्या। मैं तो कहूंगा कि इसके साथ आए। नई प्रौद्योगिकी को अपनाएं, सीखें, कौशल प्राप्त करें, दूसरों को भी प्रोत्साहित करें ताकि हम हिंदी समाज और अपनी भाषा को आधुनिक बना सकें, उसमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण का संचार कर सकें। नया भारत बनाने के लिए उसकी भाषाओं को भी साथ आना होगा।

गीत के माध्यम से किसानों के बीच खेती का महत्व

ऋषिकेश तिवारी एवं संजय सिंह जाटव

जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्व विद्यालय, जबलपुर, (मध्य प्रदेश)-482 004

कृषि से संबंधित एक गीत का उदाहरण :
गीत : काश मैं किसान होता

काश मैं किसान होता, खेतों में जोता होता, धूप-छांव के मेले में, मेरा घर सोना होता।
काश मैं किसान होता, खेतों में जोता होता, धूप-छांव के मेले में, मेरा घर सोना होता।

बड़ी मेहनत से जगती, ज़मीन को जोते हैं हम, मुश्किल से खाते हैं रोटी, लेकिन सपनों को छोड़ नहीं हम। समय भी लगता है सही, फसलों को उगाने में, पर ख़ुशी मिलती है जब खेतों में फूल खिलाने में।

काश मैं किसान होता, खेतों में जोता होता, धूप-छांव के मेले में, मेरा घर सोना होता।
काश मैं किसान होता, खेतों में जोता होता, धूप-छांव के मेले में, मेरा घर सोना होता।

हर चेहरे पर खुशियां जगमगाती फसल के दिनों में, खुशबूएं फैलाती खेतों में, फसलों के त्यौहारों में। उत्सव होता है, जब धान घर आता है, खुशियां मिलती हैं, जब खेतों में भरमार आता है।

काश मैं किसान होता, खेतों में जोता होता, धूप-छांव के मेले में, मेरा घर सोना होता।
काश मैं किसान होता, खेतों में जोता होता, धूप-छांव के मेले में, मेरा घर सोना होता।

यह गीत कृषि की महत्ता और किसानों के बलिदान को विशेष रूप से दर्शाता है। गायक ने किसानों की मेहनत को उत्साहित करने का प्रयास किया है और उन्हें सम्मान दिया है। इस गीत के माध्यम से कृषि क्षेत्र के महत्व को बढ़ावा दिया गया है और किसानों के प्रति भावुकता व्यक्त की गई है।

सत्यता के साथ सुदंर गीतों का संगम : कृषि के साथ गीत का सार

प्रस्तावना: गीत संगीत का एक महत्वपूर्ण रूप है, जो शब्द, स्वर, और धुन के समर्थ मिश्रण से एक साहित्यिक और संगीतमय अनुभव प्रदान करता है। एक सत्यता के साथ सुदंर गीत एक विशेष ध्वनिक अनुभव प्रदान करता है, जो सुनने वालों के मन में संवेदनशीलता और सांस्कृतिक गहराई को बढ़ाता है। इस लेख में, हम सत्यता के साथ सुदंर गीतों के महत्व को विचार करेंगे और इसके साथ ही कुछ उदाहरणों का परिचय देंगे। **गीत में किसानों की दिन-रात की मेहनत का जिक्र है, जो यह दर्शाता है कि खेती केवल एक काम नहीं, बल्कि एक जीवनशैली है।**

1. **सत्यता के साथ गीत:** भावनाओं का संगम सत्यता के साथ गीत उन गीतों को कहते हैं, जिनमें वाक्यों और स्वरों का एक साथ मिलन होता है और जो संवेदनशीलता और भावनाओं को व्यक्त करते हैं। इन गीतों में साहित्यिकता, संगीतमयता और समर्थ वाद्ययंत्रों का सही उपयोग होता है, जो श्रोताओं को एक संगीतमय अनुभव प्रदान करता है। **यह गीत लोगों को आकर्षित करते हैं, उन्हें रंगीन विभावनाओं में ले जाते हैं, और सांस्कृतिक अनुभव को बढ़ाते हैं।**

2. **धार्मिक और भक्तिगीत:** आत्मिकता का संगम धार्मिक और भक्तिगीत भारतीय संस्कृति में एक महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। ये गीत आत्मिकता और भक्ति के संगम को दर्शाते हैं और श्रोताओं को आध्यात्मिक अनुभव कराते हैं। इन गीतों में विशेष रूप से सत्यता, प्रेम, शांति, धैर्य, और शुभ संकल्प के भाव होते हैं, जो व्यक्तियों को मानसिक शांति और सच्चे संबंध के प्रति आकर्षित करते हैं। **धूप-छांव का उल्लेख खेती के लिए आवश्यक प्राकृतिक तत्वों की**

महत्ता को दर्शाता है। यह दिखाता है कि कैसे किसान इन तत्वों के साथ तालमेल बिठाते हैं।

3. **प्रेरणादायक गीत:** जीवन को उत्साहित करें कुछ गीत ऐसे होते हैं जो प्रेरणा देते हैं और जीवन को उत्साहित करते हैं। ये गीत व्यक्तियों को सकारात्मक सोच के प्रति प्रेरित करते हैं, उन्हें संघर्षों से निपटने की शक्ति प्रदान करते हैं और उन्हें अपने लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए प्रेरित करते हैं। इन गीतों में उच्च स्तर की ऊर्जा और भावनाओं का सही उपयोग होता है, जो श्रोताओं को अपने काम के लिए प्रेरित करते हैं। **किसान अपने परिश्रम के साथ अपने सपनों को पूरा करने की उम्मीद रखते हैं। यह भावनात्मक जुड़ाव दर्शाता है कि खेती सिर्फ फसल उगाने का काम नहीं, बल्कि उम्मीदों और सपनों का भी प्रतीक है।**

4. **समाप्ति:** सत्यता के साथ सुदंर गीत वाद्य और संगीत का एक सुंदर संगम है, जो श्रोताओं को भावनाओं के साथ जुड़ाव देता है। ये गीत व्यक्तियों के मन को स्पर्श करते हैं, उन्हें आकर्षित करते हैं, और सांस्कृतिक अनुभव को बढ़ाते हैं। धार्मिक और भक्तिगीत आत्मिकता के संगम को प्रदर्शित करते हैं और प्रेरणादायक गीत जीवन को उत्साहित करने में मदद करते हैं। इन गीतों का सही उपयोग और समझाया जाना अत्यंत महत्वपूर्ण है, ताकि यह सांस्कृतिक संदेश संसार को प्रभावित कर सके। **गीत में फसल के दिनों और त्यौहारों का जिक्र है, जो किसानों की मेहनत का फल होता है। यह समाज में कृषि के उत्सवों के महत्व को भी दर्शाता है। किसानों की खुशियां और उनके चेहरे की चमक फसल की सफलता का प्रतीक है, जो समाज में खुशी और समृद्धि लाता है।**

किसान

लाखों का पेट भरता है वो,

पर खुद भूख में वो जिन्दगी है काटे।

मजबूर कितना चंद रूपयों की खातिर,

जितने में अमीरो के कपडे,जूते है आते।

दाना दाना उगाता है लहू दे कर वो अपना,

जो हम आधा है खाते और आधा बहाते।

कि ताके घटा को सूनी सी आंखे,

न आई कभी बारिश, कभी बरसे ज़्यादा,

चाहत है उसकी बस कि खेत लहलाहते।

कि उसके भी घर जलता चूल्हा,

और बच्चे उसके भर-पेट खाते।

तो इतना सा हम न कर पाए उस के लिए क्या,

न कहे उसे गंवार,किसान बेचारा,

सोचे उसे, ज़रा इंसानियत के नाते।

और ना फेंके, उगाया जो उसने,

बोया ,सींचा पसीना बहाते।

बस काश हम इतना ही कर पाते।

बस काश हम इतना ही कर पाते।

डॉ. बबिता यादव
तकनीकी अधिकारी, कीट विज्ञान संभाग
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान,
पूसा, नई दिल्ली-110 012

चिड़िया रानी बड़ी सयानी करती अपनी मनमानी

सुबह सुबह चीं चीं करके हमको नींद से जगाती, चहक चहक कर हमको मधुर गीत सुनाती

आसमान से आई चिड़िया दाना चुग कर फुर्र हो जाती, शाम होते ही अपने घोंसले में चली जाती

चिड़िया रानी बड़ी सयानी करती अपनी मनमानी।

चिड़िया रानी हमको सिखाती, जितनी जरूरत उतनी खाती बाकी सब छोड़ के चली जाती

ना कल की चिंता है ना आज की है फिकर, जितना मिले, उसमे रहती है संतुष्ट फिर जहां मन चाहा उड़ जाती है उधर

चिड़िया रानी बड़ी सयानी करती अपनी मनमानी।

चिड़िया रानी पंख पसारे उड़े हर किनारे और किसानों को देती सहारे,

कीट पतंगों को खाती और किसानों की फसल को नुकसान से बचाती,
खतरा देख जोर-जोर से चिल्लाए और हमको सूचित कर के बताए

चिड़िया रानी बड़ी सयानी करती अपनी मनमानी।

चिड़िया रानी हवा में गोते खाती और तिनके चुन-चुन कर अपना घोंसला बनाती

बारिश और तूफ़ानों में भी डट कर सामना करती,
बिना किसी भेद भाव के हर डाली पे नाचती गाती

चिड़िया रानी बड़ी सयानी करती अपनी मनमानी।

सर्दी हो या गर्मी, सुबह हो या शाम अपने नीत कर्म से पीछे नहीं हटती

मेहनत करके खाती और अनजाने में भी हमको बहुत कुछ सीखा जाती

चिड़िया रानी बड़ी सयानी करती अपनी मनमानी।

सतीश कुमार
वरीष्ठ तकनीकी सहायक
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
क्षेत्रीय केंद्र, कटराई, कुल्लू घाटी, हिमाचल प्रदेश

खुद से मुलाक़ात

पूछा एक रोज़ किसी ने, क्या शौक है तुम्हारा
वो क्या है जिसके लिए मन मचल जाए तुम्हारा।
उसके सवालों का कोई जवाब नहीं था मेरे पास
कुछ भी तो नहीं था ऐसा, जो हो बहुत ख़ास।
गई रात बीती यूं ही ख्यालों में उलझे- उलझे
परखते वो सवाल जो अब तक हैं अनसुलझे...
ख़्वाब जिन्हें पाल कर आगे बढ़े थे हम
ज़िन्दगी की मचानों पर चढ़े थे हम,
वक़्त की दौड़ में ढल गए वो
अल्हड़ नहीं हैं,अब संभल गए वो।
ना रही दुनिया फ़तह करने की हसरत,
ना कागज़ को रंगो से भरने की फुरसत
ना खुद को हूं अब मैं याद दिलाती
वो अधूरी कहानी जो अब भी धूल खाती।
क्यों हमने किया ये हश्र अपना?
क्यों गुमनाम हुआ हर एक सपना?
क्यों भुला दी हमने अपने जीने की वजह,
क्यों वक़्त की दौड़ में यूं खुद को दी सजा?
आओ फिर से ढूंढें वो शौक अपना
आओ फिर से जिएं अपना हर सपना,
पढ़ें वो कहानी, वो कागज़ भी रंगें
फिर से रहें हम बेपरवाह,बेढंगे।
आज क्यों ना खुद को "खुदी" की सौगात पेश करें,
क्यों ना वजूद से अपने आज फिर मुलाकात करें!!

कृति गुप्ता
सहा. प्रशा. अधिकारी
सतर्कता अनुभाग

ईश्वर के प्रति सच्चा विश्वास

एक शहर में एक गरीब व बुजुर्ग महिला जो ईश्वर पर सच्ची आस्था व विश्वास रखती थी अपनी बिटिया के साथ टूटे-फूटे पुराने घर में रहा करती थी। एक बार वह अत्यंत ही विकट स्थिति में आ गई, कई दिनों से खाने के लिए घर में अनाज दाल आदि सब समाप्त हो गया और आने वाले दिनों के लिए कुछ न बचा। एक दिन उसने रेडियो के माध्यम से ईश्वर को अपना संदेश भेजा कि वह उसकी मदद करे। तभी यह प्रसारण एक नास्तिक, घमंडी और अहंकारी उद्योगपति सुन रहा था। उसने सोचा कि क्यों न इस महिला के साथ कुछ ऐसा मजाक किया जाए जिससे कि उसकी ईश्वर के प्रति आस्था डिग जाए। उसने अपने सकेट्री को कहा कि वह ढेर सारा खाना और महीने भर का राशन उसके घर देकर आए, और जब वह वृद्ध महिला यह पूछे कि यह राशन किसने भेजा है तो कह देना कि शैतान ने भिजवाया है ।

जैसे ही महिला के पास खाने पीने का समान पहुंचा, पहले तो वृद्ध महिला व उसकी पुत्री ने भर पेट भोजन किया और सारा राशन समेट कर किचन में रखने लगी । जब वृद्ध महिला ने पूछा ही नहीं कि यह सब राशन व भोजन किसने भेजा है तो सकेट्री से रहा नहीं गया और उसने वृद्ध महिला से पूछा – क्या आपको मालूम है यह सब सामान किसने भेजा है क्या आपको यह जानने की जिज्ञासा नहीं होती ।

तब उस वृद्ध महिला ने बेहतरीन जवाब दिया – कि मैं इतना क्यों सोचू या पुंछू कि किसने भेजा है, मुझे ईश्वर पर पूरा भरोसा है, मेरा ईश्वर जब आदेश देते है तो – शैतानों को भी आदेश का पालन करना पड़ता है । वृद्ध महिला का यह जवाब सुनकर वह उद्योगपति अवाक् रह गया और ईश्वर के प्रति वृद्ध महिला की सच्ची भक्ति व विश्वास को देख वह भी कुछ सबक सीख, ईश्वर प्रति उसके मन में भी श्रद्धा- सुमन का भाव जागृत हो गया और वह भी नित्य ईश्वर की स्तुति करने लगा और आस्तिक बन सच्चे मन से गरीबों की सेवा करने लगा।

नरेंद्र मोहन सिंह
कृषि अर्थशास्त्र संभाग
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान,
पूसा नई दिल्ली-110012

शिव : साधना सहजता की

शिव... जहां पीड़ा और उत्स एकाकार हो जाते हैं।

शिव... जहां काव्य के नौ रस बिना किसी भेदभाव के एक साथ रहते हैं।

शिव... जहां सृष्टि के समस्त भावों को प्रश्रय मिल जाता है।

शिव... जिसके द्वार किसी के लिए भी बंद नहीं हैं। बल्कि यूं कहा जाए कि जहां द्वार जैसा कुछ है ही नहीं। शिव तो द्वाररहित हैं। शिव तो मार्गरहित हैं। मार्ग, द्वार, यात्रा ये सब तो भौतिक शब्द हैं! शिव इन सबसे परे हैं। शिव कोई संज्ञा नहीं हैं, वे तो एक घटना हैं। वे तो घटित होते हैं।

और घटना का कोई मार्ग अथवा द्वार नहीं हो सकता। वह तो कहीं भी घटित हो जाए। उसके घटित होने का बाद उस स्थल का मार्ग अथवा द्वार अवश्य हो सकता है। किंतु वह उस वैराट्य का स्मारक मात्र होगा। द्वार और मार्ग से जहां कोई पहुंचेगा वहां उसे उस घटना के चिह्न मिल सकते हैं... घटना तो घटित हुई और विलीन हो गई।

इसीलिए शिव तक पहुंचने के लिए कहीं जाने की आवश्यकता ही नहीं है। इसीलिए शिव का स्वरूप किसी प्रदेश, लोक जाति, देश, वर्ण, नस्ल, वर्ग, ग्रह, योनि, काल अथवा धर्म तक सीमित नहीं है। शिव असीम हैं। उन्हें जो देखे वो उसे 'अपने' लगते हैं।

शिव किसी एक के हो भी कैसे सकते हैं। शिव तो सबके हैं। सबकी पीड़ा का निदान हैं। शिव किसी भी प्रकार के परहेज से परे हैं। भूत, प्रेत, व्यंतर, मनुष्य, नाग, नक्षत्र, पशु, नदी, पर्वत, सुर, असुर और यहां तक कि मसान तक को शिव से अपनत्व मिल जाता है।

शिव के अर्द्धांग में प्रतिष्ठित पार्वती प्रेम का अस्तित्व हैं तो शिव के कंठ में विद्यमान विष उनके वात्सल्य का द्योतक है। चिताभस्म का लेप वैभत्स्य को जीवंत करता है, त्रिशूल पर ओज विराजित है और जटाओं से प्रस्फुटित गंगा आश्चर्य उत्पन्न करती है। शिव के गणों में हास्य के दर्शन होते हैं और हृदय में करुणा वास करती है। त्रिपुंड के मध्य स्थित नेत्र उन्हें रौद्र कर देता है तो निमीलित नयनों से वे अपने निर्वेद होने की सूचना देते हैं।

शिव के चरण पर्वत पर हैं और शीश पर चंद्रमा विद्यमान है। यह स्वरूप शिव के वैराट्य का प्रमाण है। मृगछाल और गंगोद्गम उनके प्राकृतिक होने का उद्घोष है। शिव समाधान का पर्यायवाची है। वहां समस्या कोई है ही नहीं। सभी समस्याओं के समाधिस्थ हो जाने की स्थिति है शिव। इस अद्भुत स्वरूप में किसी परहेज की संभावना ही नहीं है। वहां सब स्वीकार्य है। शिव के लिए 'कुछ' बनना नहीं पड़ता। शिव को पाने के लिए कुछ ओढ़ना नहीं पड़ता।

वहां तो ठीक वैसे ही पहुंचा जा सकता है, जैसे आप हैं। जितने अधिक स्वाभाविक होते जाएंगे, शिव का नैकट्य उतना ही अधिक होता जाएगा। कृत्रिमता हटी और शिव घटित हो गए। बनावट का विलीन हो जाना ही शिव का घटित होना है। विश्व में जो-जो असंभव है, वह सब भी शिव के यहां संभव हो जाता है। वहां नकार है ही नहीं। वहां तो सब कुछ साकार है। वहां सब कुछ संभव है।

शिव का स्वीकार इतना बड़ा है कि उसके आगे कोई अस्वीकार टिक ही नहीं पाता। वे संसार के समस्त भावों को एक सरीखा स्वीकार कर लेते हैं। अन्यत्र आपको ऐसा कहीं नहीं मिलेगा। अन्यत्र ऐसा कहीं तलाशने भी न लगना। मन के भीतर घट रहे हर 'अजीब' को शिव के अतिरिक्त कहीं व्यक्त किया तो पागल कहलाओगे। किंतु शिव के यहां सब स्वीकार्य है। वहां मन को खोलकर रख देना। वहां हर आवरण हटा देना। वहां हर नियम के दायरे से बाहर निकल आना। वहां हर नैतिकता के खोल से ऊपर उठ जाना। क्योंकि वहां कुछ अनैतिक नहीं। वहां कुछ अराजक नहीं। वहां कुछ अनावृत नहीं... वहां तो सब सहज ही सहज है।

इसलिए शिव को पाने की तपस्या सहज हो जाने की तपस्या है। सहज होने के लिए सर्वाधिक तपस्या करनी पड़ती है। बनावट के लिए तो दुनिया भर के पार्लर खुले हुए हैं। बनावट के लिए तो दुनिया भर के मठ, धर्मस्थल, विद्यालय, संस्थान, इदारे खुले हुए हैं। लेकिन सहज होने के लिए कोई इंस्टीट्यूट नहीं है। इन सब संस्थानों और इदारों से बच निकले तो आप शिव के निकट आ जाएंगे। स्वाभाविक होना सबसे कठिन काम है। क्योंकि इसमें कुछ करना नहीं होता। सायास कुछ न करना सबसे कठिन है। क्योंकि जब-जब कुछ सायास किया जाएगा तो वह आपको कृत्रिमता की ओर ले जाएगा, किन्तु जब आपकी अंतःचेतना आपसे अनायास ही कुछ करा लेगी तो वह प्राकृतिक होगा। उसमें कुछ असत्य नहीं होगा। उसमें कुछ असुन्दर नहीं होगा। वह तो पूर्ण सत्य होगा। वह तो पूर्ण सुंदर होगा। वह तो शिव होगा।

~ चिराग़ जैन

हिंदी चेतना मास-2023 के दौरान आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताएं एवं वर्षभर चलाई जा रही विभिन्न योजनाओं के पुरस्कृत प्रतिभागियों की सचित्र झलकियां